॥ ओ३म् ॥

क्या अहीर, गूजर-जाट विदेशी हैं ?

इस पुस्तक में अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों
द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि
अहीर, गूजर-जाट विदेशी नहीं हैं
वरन् आर्यों की संतान हैं।
ये चन्द्रवंशी
क्षत्रिय
हैं

पुस्तक क्रमांक.....

लेखक
डॉ० शिवपूजनसिंह कुशवाह शास्त्री
साहित्यालङ्कार, एम० ए०

Y5928:2
M6

प्रकाशक
[illegible]ानन्द वैदिक शोध संस्थान
ज्वालापुर-२४९४०७

॥ ओ३म् ॥
पावका नः सरस्वती
आर्ष-ज्ञान-ज्योति-पुस्तकालयः
श्रीमद् दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरुकुल
आर्यपुरम्, दून वाटिका-२, पौंधा, देहरादून
Accession No. 3412
Call No. Y5928.2 M6

	२०.००
	००.४०
	००.५०
	००.५०
	५.००
	००.५०
	००.५०
	००.५०
	००.५०
	००.२५
	००.२५
	००.५०
१४. पाश्चात्यों की दृष्टि में वेद ईश्वरीय ज्ञान	००.४०
१५. बाइबिल में वर्णित बर्बरता तथा अश्लीलता का दिग्दर्शन	(अप्राप्य)
१६. आचार्य दयानन्द सरस्वती और मसीही मत पर्यालोचन	(जब्त)
१७. पाश्चात्यों की दृष्टि में इस्लामीमत-प्रवर्तक	००.५०
१८. सत्यार्थप्रकाश भाष्य तृतीय समुल्लास	१.००
१९. सामवेद का स्वरूप	००.२५
२०. 'वैदिक एज' पर एक समीक्षात्मक दृष्टि	१.००
२१. गायत्री माहात्म्य	(अप्राप्य)
२२. भ्रमनिवारण (जैनमत का थोथा अहिंसावाद)	००.२५
२३. वैदिक देवता-रहस्य	(अप्राप्य)
२४. महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज को समझने में पौराणिकों का भ्रम	००.५०

क्या अहीर, गूजर-जाट विदेशी हैं ?

आर्ष-ज्ञान-ज्योति-पुस्तकालय
पुस्तक क्रमांक.....
ज्योतिर्मठ-गुरुकुल, पौंधा

॥ ओ३म् ॥

क्या अहीर, गूजर-जाट विदेशी हैं ?

इस पुस्तक में अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों
द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि
अहीर, गूजर-जाट विदेशी नहीं हैं
वरन् आर्यों की संतान हैं।
ये चन्द्रवंशी
क्षत्रिय
हैं

पुस्तक क्रमांक.....

लेखक
डॉ० शिवपूजनसिंह कुशवाह शास्त्री
साहित्यालङ्कार, एम० ए०

प्रकाशक
श्रीमद्दयानन्द वैदिक शोध संस्थान
ज्वालापुर-२४९४०७

प्रकाशक :
श्रीमद्दयानन्द वैदिक शोध संस्थान
वेद मन्दिर [गीता-आश्रम]
अशोक सिनेमा के सामने
ज्वालापुर-२४९४०७
जि० सहारनपुर

सर्वाधिकार : लेखक के अधीन

Y5928.2
M6

प्रथम संस्करण : ११०० प्रतियाँ
दयानन्दाब्द-१६२
वेद सृष्टि संवत् १९७२९४९०८७
संवत् २०४३ वि०
सन् १९८६

मूल्य : १०.५० रुपये

3412

मुद्रक :
दुर्गा मुद्रणालय,
सुभाषपार्क एक्सटेंशन,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

पुस्तक क्रमांक.....

भूमिका

भारतीय संस्कृति को वैदिक संस्कृति, सनातन संस्कृति, हिन्दू संस्कृति आदि विविध नामों से जाना जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो इस संस्कृति का मूल वेदों में है। भारत का इतिहास माने भारतीय संस्कृति का इतिहास। इतिहास का एक भाग है राजनीतिक घटनाएँ—कब क्या हुआ; इसका वर्णन। इस दृष्टि से इतिहास में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक प्रगति और तदर्थकृत प्रयोगों का समावेश होता है। भारत देश आकार में विस्तृत, परम्परा से समृद्ध, विपुल प्राचीन साहित्य से भरपूर, सहस्रों वर्षों के सतत् इतिहास और अनादि अनन्त संस्कृति से परिपूर्ण है। सहस्रों वर्षों तक राजनीतिक और धार्मिक आक्रमणों से टक्कर लेते हुए भी भारतीय संस्कृति अब तक टिकी रही है।

वैदिक युग में आर्य विभिन्न वर्गों के रूप में विभक्त थे। ऋग्वेद में अनेक स्थलों पर 'पंचजना:' तथा 'पंचकृष्टय:' का उल्लेख है जो उस युग के पाँच प्रमुख वर्गों के सूचक हैं। ये पंचजन अणु, द्रह्यु, यदु, तुर्वशु तथा पुरु थे। इनके अतिरिक्त भी भरत, त्रित्सु, श्रृंजय आदि अन्य अनेक वर्ग-सूचक नामों का उल्लेख वेदों में आया है। इससे विदित होता है कि आर्यों के भारत में फैलने के साथ ही साथ विभिन्न वर्गों का विकास होता गया, जिन्हें वेदों में 'विश:' कहा गया है।

कालान्तर में वर्ण-व्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ। जो वीर सैनिक युद्ध-कला में विशेष निपुणता रखते थे, शत्रुओं से जनता की रक्षा करते थे, अर्थात् क्षत (हानि) से जो त्राण करनेवाले थे उन्हें क्षत्रिय कहा गया। क्षत्रिय वर्ण के अन्तर्गत विभिन्न कुल-गोत्रों का समावेश था।

प्रस्तुत पुस्तक का प्रतिपाद्य अहीर, गूजर तथा जाटों की मूल राष्ट्रीयता से सम्बद्ध है। ये तीनों ही मूलत: आर्य वंशज तथा क्षत्रिय जातियाँ हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। पुराण-प्रसिद्ध ययाति के पुत्र यदु ने यादव वंश की स्थापना की

थी। इस वंश में आगे आकर अन्य भी कितने ही विजेता राजा हुए, जिनमें कार्तवीर्य विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इसी कार्तवीर्य ने परशुराम के पिता का अपमान किया था, जिस कारण परशुराम क्षत्रिय-द्रोही बने थे। कालान्तर में यह वंश स्थान-भेद तथा व्यक्ति-भेद से विभिन्न गोत्रों में बँट गया। अहीर भी इनमें से एक हैं।

गुर्जर (गूजर) क्षत्रिय भी इतिहास-प्रसिद्ध रहे हैं। आठवीं शताब्दी तक यह जाति उत्कर्ष पर थी। उस समय गुर्जरराज वत्सराज का समस्त राजपूताने पर शासन था। वत्सराज का पुत्र नागभट्ट भी महत्त्वाकांक्षी तथा वीर राजा हुआ। राष्ट्रकूट राजा गोविन्द तृतीय ने गुर्जर राज्य पर आक्रमण कर न केवल इस राज्य का विध्वंस ही किया अपितु गुर्जरों की शक्ति को सर्वथा मन्द कर दिया। इस काल में ही ये लोग भारतवर्ष के शेष प्रदेशों में बिखर गये। शायद, ऐसा ही कोई कारण रहा होगा कि बाद में इस जाति के लोगों ने पशुपालन व्यवसाय अपना लिया, जो अद्यपर्यन्त भी है।

जाटों की वंशावली तथा गोत्रों को देखने से स्पष्ट विदित होता है कि ये वे ही गोत्र हैं जो ३६ कुल के राजपूतों के हैं। मूलतः जाट क्षत्रिय ही थे और हैं भी। सत्ता से विलग रहने के कारण राजपूत तथा जाटों की मान्यता तथा विश्वासों में अन्तर भासित होता है पर वह आन्तरिक नहीं मात्र बाह्य है।

आवश्यकता तो इस बात की थी कि स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् शोध करके भारत का पुरातन वैभवशाली इतिहास प्रकाश में लाया जाता। परन्तु झुण्डतंत्र की राजनीति और सत्ता की भूख में यह सम्भव नहीं हो पाया। तथापि इतना तो परमावश्यक है कि हम स्वयं को तो जानें-समझें ही। पश्चिमी विद्वानों के अनुकरण पर हम आज अपने आपको विदेशी तथा आक्रामक बर्बर लुटेरों को देशी मान बैठे हैं। समय आ गया है कि हम सन्नद्ध हों अपना इतिहास (प्रामाणिक इतिहास) स्वयं लिखने के लिए। इस दिशा में श्रीयुत (डॉ०) शिवपूजनसिंह कुशवाह का प्रयास स्तुत्य है। मैं अपेक्षा करता हूँ कि यह हमें अपने आपको जानने में सहायक होगा।

चाणक्य आश्रम,
बाबरपुर एक्सटेंशन,
शाहदरा, दिल्ली-११००३२

—नवाबसिंह चौहान

५२८७

विषय सूची

क्या अहीर विदेशी हैं	६
क्या गूजर (गुर्जर) विदेशी हैं	४१
क्या जाट विदेशी हैं	७७

॥ ओ३म् ॥

क्या गुर्जर [गूजर] विदेशी हैं

'गुर्जर' शब्द की व्युत्पत्ति

पण्डित वामन शिवराम आप्टे, "गु (गू) र्जरः [गुरु + जॄ + णिच् + अण् + पृषो०]। गुजरात का प्रदेश या जिला···।"[1]

पण्डित तारिणीश झा 'व्याकरणतीर्थ' व चतुर्वेदी पण्डित द्वारिका प्रसाद शर्मा एम० आर० ए० एस०—"गुर्जर, गूर्जर—(पु०) [गुरु√जॄ + णिच् + अण्, पृषो० साधुः] गुजरात प्रान्त।"[2]

गुर्जर (गूर्जर) शब्द संस्कृत का है उसी का अपभ्रंश रूप 'गूजर' है जो जाति-वाचक है।

क्या गुर्जर विदेशी हैं—कुछ पाश्चात्य विद्वान् और उनके चरण-चिह्नों पर चलनेवाले भारतीय ऐतिहासिक विद्वान् भी गुर्जरों (गूजरों) को विदेशी मानते हैं। आज इसी सम्बन्ध में ऊहापोह से विचार किया जाता है।

विदेशी सिद्धान्त—"···भारतीय मध्यकालीन इतिहास का निर्माण इन्हीं विदेशी जातियों द्वारा हुआ है। इस काल की मुख्य जातियों में से गूजर अथवा गुर्जर लोग तो स्पष्ट रूप से विदेशी हैं ही, साथ ही प्रसिद्ध-प्रसिद्ध राजपूत वंश भी विदेशी लोगों के हैं।"[3]

सर विसेण्ट ए० स्मिथ महोदय ने लिखा है कि "हूण जाति ने अपना मुख्य निवास स्थान भारत में आकर पंजाब और राजपूताने में बनाया, और हूण लोगों

---

१. 'संस्कृत-हिन्दी कोष', पृष्ठ ३४९ [सन् १९६६ ई० में मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित]।

२. 'संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ', पृष्ठ ४०८ [सन् १९८५ ई० में रामनारायण लाल बेनीप्रसाद, इलाहाबाद-२११००२ द्वारा प्रकाशित, पंचम संस्करण]

३. 'इण्डियन ऐण्टीक्वेरी', भाग ११, सन् १९११ ई० (Foreign elements in Hindu population)।

में विशेष महत्त्वपूर्ण समूह गुर्जर लोगों का था, जिन्होंने भारत में आकर गुर्जर जाति के राज्य स्थापित किए और आज भी वे लोग गूजर श्रेणी के नाम से भारत की मध्यम श्रेणी की जातियों में उत्तर-पश्चिम हिन्दुस्तान में आबाद हैं।"[४]

सर जेम्स केम्पवेल ने गूजरों की गणना खज़र लोगों में से की है, और उनकी एक श्रेणी गोजियन से गुर्जर शब्द की समानता सिद्ध करते हुए गूजरों को मंगोलियन श्रेणी का माना है।[५]

इस सिद्धान्त की पुष्टि **डाक्टर देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर** ने अपने निबन्ध 'हिन्दू आबादी में विदेशी जातियों का मिश्रण' (Foreign elements in the Hindu population) नामक निबन्ध में की है।[६]

श्री स्मिथ महोदय पुनः लिखते हैं—"The Gujars are believed to have entered India either along with or soon after the white Huns and to have settled in large numbers in Rajputana, but that there is nothing to show what part of Asia they came from or to what race they belonged."[७]

अर्थात्—"ऐसा विश्वास किया जाता है कि गूजर लोग अकेले या हूणों के साथ या कुछ बाद ही भारत में आए और राजपूताने में बसे, परन्तु इस बात का कोई प्रमाण नहीं, कि एशिया के किस भाग और कौन-सी जाति से ये लोग आए।"

जनरल कनिंघम महोदय जो गूजरों को कुशन अथवा बड़े यूची (ईसा से १०० वर्ष पूर्व से ३७० ई० तक आनेवाले तथा कदरिये अथवा छोटी यूची (३९० ई० से ५०० ई० तक आनेवाले लोगों में आए मानते हैं। लेकिन कुशन और गुशनों में अक्षरों के परिवर्तन में ही नहीं, अपितु इस बात में भी अन्तर है कि गुर्जरों में

४. 'अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया', पृष्ठ ३७७; तुलना करो–'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास' पृष्ठ १७ [सन् १९३३ ई० में श्री कुँवर यतीन्द्र कुमार वर्मा, श्री 'वीर गुर्जर' कार्यालय, आगरा द्वारा प्रकाशित]।

५. बम्बई गजेटियर, जिल्द ९, भाग १, पृष्ठ ४७१ से ४७६ तक; तुलना करो—वही, पृष्ठ १७।

६. 'इण्डियन एण्टिक्वेरी', भाग १०; तुलना करो—वही, पृष्ठ १७।

७. 'Early History of India', p. 413, third edition; तुलना करो—वही, पृष्ठ १९।

कुभन शक्ति के ह्रास (४०० ई०) के बाद तक कोई भी सम्बन्ध नहीं था।[८]

विदेशी सिद्धान्त का परिहार और क्षत्रियत्व का प्रमाण—अनेक प्रबल पुष्ट प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका है कि राजपूत लोग, शक, हूण या गुर्जरों की सन्तान नहीं वरन् शुद्ध क्षत्रिय हैं। विदेशी लेखकों का मत अनुचित व कसौटी पर सत्य नहीं उतरता है कि गुर्जर विदेशी हैं।

(१) महामहोपाध्याय रायबहादुर डॉ० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा, डी० लिट्० विदेशी सिद्धान्त को अशुद्ध, भ्रमपूर्ण मानते हैं। वे लिखते हैं—"इस समय गुर्जर अर्थात् गूजर जाति के लोग विशेष कर खेती या पशुपालन से अपना निर्वाह करते हैं, परन्तु पहले उनकी गणना राजवंशियों में थी। अब तो केवल उनका एक राज्य समथर (बुन्देलखण्ड में) और कुछ जमींदारियाँ संयुक्त प्रदेश में रह गई हैं। पहले पंजाब, राजपूताने तथा गुजरात में उनके राज्य थे।....."[९]

पुनः विदेशियों के सिद्धान्तों पर कुठाराघात करते हुए ओझाजी लिखते हैं—"गुर्जर जाति की उत्पत्ति के विषय में आधुनिक प्राचीन शोधकों ने अनेक कल्पनाएँ की हैं। जनरल कनिंगहाम ने उनका यूची अर्थात् कुशनवंशी होना अनुमान किया है। वी० ए० स्मिथ ने उनकी गणना हूणों में की है। सर जेम्स केम्पवेल का कथन है कि ईसवी सन् की छठी शताब्दी में यूरोप और एशिया की सीमा पर खज़र नाम की एक जाति रहती थी; उसी जाति के लोग गुर्जर या गूजर हैं (इं० ऐं० जि० ४०, पृ० ३०) और मि० देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर ने केम्पवेल का कथन स्वीकार किया है; परन्तु ये कथन कल्पना मात्र हैं क्योंकि उनमें से कोई भी सप्रमाण यह नहीं बतला सका कि अमुक समय में अमुक कारण से यह जाति बाहर से यहाँ आई। खज़र से गुर्जर या गूजर जाति की उत्पत्ति मानना वैसी ही कपोलकल्पना है जैसाकि कोई यह कहे कि सकसेने कायस्थ यूरोप की सैक्सन् जाति से निकले हैं। नवसारी से मिले हुए भड़ौच के गुर्जरवंशी राजा जयभट (तीसरे) के कलचुरि संवत् ४५६ (वि० सं० ७६२) के दानपत्र में गुर्जरों का महाराज कर्ण (भारत

८. सर जेम्स केम्पवेल लिखित 'गुर्जर' निबन्ध, बम्बई गजेटियर, ९वीं जिल्द, भाग १, पृष्ठ ४७०; तुलना करो, वही, पृष्ठ २१।

९. 'राजपूताने का इतिहास', जिल्द पहली, पृष्ठ १४७ [विक्रम संवत् १९९३, सन् १९३७ ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित और व्यास एण्ड सन्स, पुस्तक विक्रेता, अजमेर से प्राप्य, द्वितीय संस्करण]।

प्रसिद्ध) के वंश में होना लिखा है।"[१०]

(२) डॉ० देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर के मत की आलोचना करते हुए पुनः ओझाजी लिखते हैं—"श्रीयुत भण्डारकर ने तो साथ में यह भी लिखा है—"बम्बई इहाते में गूजर (गुर्जर) नहीं हैं; ज्ञात होता है कि वह जाति हिन्दुओं में मिल गई। वहाँ गूजर (गुर्जर) वाणिये (बनिये, महाजन), गूजर (गुर्जर), कुम्भार और गूजर (गुर्जर), सिलावट हैं। खानदेश में देशी कुनबी और गूजर (गुर्जर) कुनबी है। एक मराठा कुटुम्ब गुर्जर कहलाता है, जो महाराष्ट्र के आधुनिक इतिहास में प्रसिद्ध रहा है। करहाड़ा ब्राह्मणों में भी गुर्जर नाम मिलता है। राजपूताने में गूजड़गौड़ (गुर्जरगौड़) ब्राह्मण हैं। ये सब गूजर (गुर्जर) जाति के हैं (इं० ऐं०, जि० ४०, पृ० २२)' भण्डारकर महाशय को इन नामों की मामूली उत्पत्ति जानने में भी भारी भ्रम हुआ और उसीसे इन सबको गूजर ठहरा दिया है। परन्तु वास्तव में ऐसी बात नहीं है। जैसे श्रीमाल नगर (भीनमाल, जोधपुर राज्य में) के ब्राह्मण, महाजन, जड़िये आदि बाहर जाने पर अपने मूल निवास-स्थान के नाम से अन्य ब्राह्मणों आदि से अपने को भिन्न बतलाने के लिए श्रीमाली ब्राह्मण, श्रीमाली महाजन आदि कहलाए; इसी तरह मारवाड़ में दधिमती (दाहिम) क्षेत्र के रहनेवाले ब्राह्मण, राजपूत, जाट आदि दाहिमे ब्राह्मण, दाहिमे राजपूत, दाहिमे जाट आदि कहलाये; और गौड़ देश के ब्राह्मण, राजपूत, कायस्थ आदि बाहर जाने पर गौड़ ब्राह्मण, गौड़ राजपूत, गौड़ कायस्थ आदि प्रसिद्ध हुए; वैसे ही प्राचीन गुर्जर देश के रहनेवाले ब्राह्मण, महाजन, कुम्भार, सिलावट आदि गुर्जर ब्राह्मण, गुर्जर (गूजर) बनिये, गुर्जर (गूजर) कुम्भार तथा गुर्जर (गूजर) जाति के ब्राह्मण आदि। उनके नाम से पूर्व लगनेवाला गुर्जर (गूजर) शब्द उनके आदि निवास का सूचक है, न कि जाति का। उक्त महाशय ने एक करहाड़ा ब्राह्मण कुटुम्ब के यहाँ के ई० स० ११९१ (वि० सं० १२४८) के दानपत्र से थोड़ा-सा अवतरण भी दिया है। जिसमें दान लेनेवाले गोविन्द ब्राह्मण को काश्यप, अवत्सार और नैध्रुव, इन तीन प्रवरवाले नैध्रुव गोत्र का और गुर्जर

१०. वही, पृष्ठ १५०-१५१ तथा तुलना करो 'ओझा निबन्ध-संग्रह', प्रथम भाग, पृष्ठ १६३ से १६५ तक [सन् १९५४ ई० में साहित्य-संस्थान, राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर (राजस्थान) द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

उपनामवाला (गुर्जर-समुपाभिधान) कहा है। यदि गूजर जाति का एशिया की खज़र जाति होना माना जाय तो क्या उनके यहाँ भी गोत्र और प्रवर का प्रचार था? उन्होंने गूजर गौड़ों की उत्पत्ति के विषय में भी लिखा है—'इस नाम का तात्पर्य गूजर जाति के गौड़ ब्राह्मण हैं', परन्तु वास्तव में गुर्जर गौड़ का अर्थ यही है कि गुर्जर देश के रहनेवाले गौड़ ब्राह्मण, न कि गूजर जाति के गौड़ ब्राह्मण।"[११]

(३) **श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य**, एम० ए०, एल्-एल्० बी०, लिखते हैं—"कई बार कहा जा चुका है कि गूजर विदेशी नहीं, मानव-वंशशास्त्र के अनुसार सुन्दर नासिकावाले आर्य हैं।..."[१२]

(४) **डॉ० विशुद्धानन्द पाठक**, इतिहास विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय लिखते हैं कि—"गुर्जर प्रतिहारों को खज़र जाति का वंशज मानने का सिद्धान्त सर्वप्रथम केम्पवेल और जैक्सन महोदय ने प्रतिपादित किया था (बम्बई गजेटियर, जिल्द १, भाग १, परिशिष्ट ३), जिसे बाद में भण्डारकर आदि ने स्वीकार कर लिया। किन्तु इन विद्वानों ने प्रामाणिक रूप से यह नहीं बताया कि हूणों और खज़रों का आपसी सम्बन्ध क्या था। इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया गया कि खज़र हूणों की ही कोई शाखा थी अथवा उनके काफी पहले इस देश के आनेवाले युह्-ची लोगों से सम्बद्ध थे। किन्तु उन्हें खज़र और गूजर अथवा गुर्जर आदि शब्दों के ध्वनि-साम्य बड़े आकर्षक प्रतीत हुए। उन्होंने गुर्जर प्रतिहार में गुर्जर जातिबोधक माना और उन्हें खज़रों से मिलाया।

"किन्तु विदेशी आक्रमणकारी जातियों में खज़रनामक किसी जाति के भारत में आने का कोई भी विदेशी अथवा भारतीय साक्ष्य नहीं मिलता तथापि यह तर्क दिया जाता है कि ये विदेशी तत्त्व एकाएक उत्तरी भारत में उपस्थित होकर वहाँ तो छा ही गए, दक्षिण-पश्चिमी भारत के भी अनेक क्षेत्रों में शीघ्र ही फैल गए; और यद्यपि बाद में उच्चता देने के लिए उन्हें प्राचीन क्षत्रिय कुलों से जोड़ दिया गया, उनके रोहिल्लाधि और पेल्लापेल्लि जैसे नामों (ए इ० १८वाँ, ९५, ९७,

११. वही, पृष्ठ १५०-१५१ की पाद-टिप्पणी।

१२. हिन्दू भारत का उत्कर्ष अर्थात् राजपूतों का प्रारम्भिक इतिहास [मध्ययुगीन भारत, भाग २], पृष्ठ ३८ [संवत् १९८६ वि० में श्री मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव, श्री काशी विद्यापीठ, काशी द्वारा प्रकाशित, प्रथम बार]।

९८) से यह प्रतीत होता है कि वे भारतीय नहीं थे।...यद्यपि भण्डारकर और त्रिपाठी जैसे कुछ मूर्धन्य भारतीय इतिहासकारों ने राजपूतों के विदेशी होने का यह सिद्धान्त मान लिया किन्तु भारतीय इतिहास के अध्ययन की इस योरोपीय दृष्टि और प्रवृत्ति की प्रतिक्रियास्वरूप अधिकांश अन्य भारतीय विद्वानों ने यह मत प्रतिपादित किया कि गुर्जर प्रतिहार विदेशी नहीं अपितु प्राचीन भारतीय सूर्यवंशी क्षत्रियों अथवा ब्रह्मक्षत्रियों की सन्तान थे।"

गुर्जर प्रतिहारों की विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त का जोरदार खण्डन सी० वि० वैद्य (दि हिमे० इ० जिल्द २, पृष्ठ ७-१७, ३१-३२), और महामहोपाध्याय पण्डित गौरीशंकर हीराचन्द ओझा (रा० इ० जिल्द १, पृष्ठ ११५ और आगे) ने किया।

कुछ उनसे मिलते-जुलते और कुछ नये तर्कों के साथ धीरेन्द्रचन्द्र गांगुली (इ हिक्वा०, जिल्द १०, पृष्ठ ३३७ और आगे), दशरथ शर्मा (वही, पृष्ठ ५८२ और आगे; वही, जिल्द १३, पृष्ठ १३७ और आगे; पूना ओरियण्टलिस्ट, जिल्द २, पृ० ४९-५७; राजस्थान थ्रू दि एजेज, जिल्द १, पृष्ठ ४७२-४८३; लेक्चर्स ऑन राजपूत हिस्ट्री एण्ड कल्चर, पृष्ठ ५), क० मा० मुन्शी (गुर्जर देश, विद्या भवन, भाग १, पृ० १९२० तथा १७३-१८१), कृष्णस्वामी अयंगार (मजुमदार द्वारा जडिले०, जिल्द १०, पृष्ठ ३ पर उद्धृत), बैजनाथ पुरी (गुर्जर प्रतीहार्स, पृष्ठ ३-९), और वि० श० पाठक (भारती, सं० ६, भाग २ (१९६२-६३) पृष्ठ ३९-४१), ने उनके भारतीय होने का समर्थन किया। इन दोनों मतों के पारस्परिक विरोध के मूल में मुख्य मतभेद यह है कि गुर्जर अथवा गूर्जर शब्द कबीलावाचक है अथवा देशवाचक। विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त को मान्यता देनेवाले जो विद्वान् उसे कबीलावाचक मानते हैं वे गुर्जर प्रतिहार का अर्थ गुर्जर कबीले के प्रतिहार और गुर्जरेश अथवा गूर्जरराज का अर्थ गुर्जर कबीले का राजा लगाते हैं।..."[१३]

(५) **डॉ० गोपीनाथ शर्मा**, एम०ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्०, प्रोफेसर इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर लिखते हैं—"राजपूतों को गुर्जर मानकर, डॉ० भण्डारकर ने विदेशी वंशीय मत को और बल दिया है।

१३. 'उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास' पृष्ठ १२२-१२३ [सन् १९७७ ई० में उत्तर प्रदेश शासन, राजर्षि पुरुषोत्तम टण्डन हिन्दी भवन, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।

उनकी मान्यता है कि गुर्जर जाति जो भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिम विभाग में फैली हुई थी उसका श्वेत हूणों के साथ निकट सम्बन्ध था और ये दोनों जातियाँ विदेशी थीं। इसकी पुष्टि में वे बताते हैं कि पुराणों में गुर्जर और हूणों का वर्णन विदेशियों के सन्दर्भ में मिलता है। इसी प्रकार उनका कहना है कि अग्निवंशीय प्रतिहार, परमार, चालुक्य और चौहान भी गूजर थे, क्योंकि राजोर अभिलेख में प्रतिहारों को गूजर कहा गया है। राष्ट्रकूट और अरब यात्री भी प्रतिहारों को गूजर ही बताते हैं। जहाँ तक चौहानों का विदेशियों से उद्गम है, उनकी मान्यता है कि सेसेरियन मुद्राओं पर जो 'वासुदेव बहमन' अंकित मिलता है वह 'वासुदेव चहमन' है।

जो प्रमाण डॉ० भण्डारकर ने राजपूतों का उद्गम गुर्जरों से सिद्ध करने के पक्ष में दिए हैं उनसे वैद्य सहमत नहीं हैं। इनकी मान्यता है कि प्रतिहारों को जो गुर्जर कहा गया है वह जाति की संज्ञा से नहीं वरन् उनका देश विशेष गुजरात पर अधिकार होने के कारण है। राष्ट्रकूटों ने तथा अरब यात्रियों ने भी उन्हें भूमि विशेष से सम्बन्धित होने के कारण गुर्जर कहा है। इसी तरह डॉ० दशरथ शर्मा मानते हैं कि सेसेरियन मुद्रावाले 'वासुदेव चौहान' दोनों समकालीन नहीं हैं। ऐसी स्थिति में चौहानों को विदेशी नहीं ठहराया जा सकता।"[१४]

इससे गुर्जर (गूजर) विदेशी नहीं हैं।

(६) **श्री रामचन्द्र वर्मा** का विचार है कि—"गूजर—संज्ञा पु० [सं० गुर्जर] [स्त्री० गूजरी, गुजरिया] अहीरों की एक जाति। ग्वाला।"[१५]

(७) **चतुर्वेदी साहित्यभूषण** पं० द्वारका प्रसाद शर्मा, एम० आर० ए० एस० (लन्दन) लिखते हैं—"गूजर तद्० (पु०) जाति विशेष, जाट, अहीर का एक भेद है।"[१६]

१४. 'राजस्थान का इतिहास', पृष्ठ ३३ [सन् १९७८ ई० में शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, पुस्तक-प्रकाशक एवं विक्रेता: आगरा-३ द्वारा प्रकाशित, तृतीय संशोधित संस्करण]।

१५. 'संक्षिप्त हिन्दी शब्द-सागर', पृष्ठ ३६७ [संवत् २००२ वि० में काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, चतुर्थ संस्करण]।

१६. 'हिन्दी-शब्दार्थ-पारिजात', पृष्ठ २०८ [सन् १९३३ ई० में रामनारायण लाल, बुकसेलर, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, छठा संस्करण]।

टिप्पणी—श्री रामचन्द्र वर्मा और पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा चतुर्वेदी दोनों गूजरों को अहीरों का एक भेद मानते हैं। चतुर्वेदी जी तो जाटों का भी एक भेद मानते हैं। इससे सिद्ध होता है कि अहीर[१७], जाट, गूजर तीनों एक ही हैं और शुद्ध क्षत्रिय हैं।

(८) **डॉ० राजबली पाण्डेय**, एम० ए०, डी० लिट्० लिखते हैं—"गूजर—तीसरी जन-जाति जो यादव आभीरों से अपना सम्बन्ध जोड़ती है और कहीं-कहीं अपने को यादव भी कहती है वह गूजर है। गूजर 'गुर्जर' शब्द का अपभ्रंश है। गुर्जर शब्द संस्कृत साहित्य और अभिलेखों में पर्याप्त मात्रा में आता है। गूजरों का प्रसार प्रायः उन्हीं प्रदेशों में है जहाँ जाटों का। परन्तु दक्षिण-पश्चिम में जाटों की अपेक्षा गूजरों का प्रसार अधिक है। इनके साथ भी यादव आभीरों का सम्पर्क सम्बन्ध है। इसलिए ये अपने को यदुवंशी समझते हैं। परन्तु समानता होने पर भी आभीर इनसे कुछ भेद रखते हैं। इसका कारण यह है कि गूजर मूलतः चन्द्रवंश अथवा यदुवंश के न होकर सूर्यवंश के थे। गुर्जरत्रा (पश्चिमी-दक्षिणी राजस्थान और उत्तरी गुजरात) के राजा बाडक के शिलालेख में स्पष्ट लिखा है कि गुर्जर प्रतिहारों के आदिपूर्वज मातृ-पक्ष से लक्ष्मण थे। मिहिरभोज के ग्वालियर अभिलेख में इस बात का स्पष्ट अभिलेख है कि गुर्जर-प्रतीहारों के आदिपुरुष लक्ष्मण थे। (श्लाघ्यस्तस्त्योनुजोसौ मघवमदमुषो मेघनादस्य संख्ये। सौमित्रिस्तीव्रदण्डः प्रतिहरणविधेर्यः प्रतीहार आसीत्—एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द १८, पृष्ठ १०७-११०)। अतः गुर्जरों का अधिकांश अंग सूर्यवंशी है। यह सच है कि परवर्ती कालों में अभीरों से उनका सम्पर्क हुआ है और किसी अंश में दोनों का सम्मिश्रण भी।"[१८]

(९) **डॉ० धर्मपालसिंह मनराल**, एम० ए०, पी-एच० डी०, प्राध्यापक, इतिहास विभाग, राजकीय महाविद्यालय, रामनगर, नैनीताल और **डॉ० अरुण**

१७. डॉ० राजबली पाण्डेय, एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्०, अध्यक्ष, भारतीय इतिहास तथा संस्कृत विभाग, भाषा शोध संस्थान, जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर द्वारा विरचित 'यदुवंश का इतिहास'; देखो [श्रीकृष्ण प्रकाशन, दारानगर, वाराणसी द्वारा प्रथम बार प्रकाशित] इस ग्रन्थ में पाण्डेय जी ने तीनों को शुद्ध क्षत्रिय लिखा है—(लेखक)।

१८. वही, पृष्ठ २३९।

मित्तल, एम०ए०, पी-एच०डी०, प्राध्यापक, इतिहास विभाग, डॉ० देवसिंह बिष्ट महाविद्यालय, नैनीताल लिखते हैं—"···चिन्तामणि विनायक वैद्य, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, डॉ० गांगुली, डॉ० दशरथ शर्मा आदि विद्वान् गुर्जर-प्रतीहारों को भारतीय ही मानते हैं। गुर्जर प्रतीहारों को विदेशी और भारतीय माननेवाले विद्वानों में मुख्य मतभेद यह है कि गुर्जर अथवा गूर्जर शब्द कबीलावाचक है अथवा देशवाचक। विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त को मनानेवाले विद्वान् उसे कबीलावाचक मानते हैं। वे गुर्जर-प्रतीहार का अर्थ गुर्जर कबीले के प्रतीहार और गुर्जरेश अथवा गुर्जरराव का अर्थ 'गुर्जरदेश' के प्रतीहार अथवा गुर्जर देश का राजा मानते हैं। यदि गुर्जर-प्रतीहार विदेशी गूजरों की सन्तान होते तो उसका उल्लेख भारतीय साहित्य अथवा इतिहास में अवश्य मिलता। जहाँ तक 'पृथ्वीराजरासो' के सन्दर्भानुसार यज्ञकुण्ड से प्रतीहार आदि राजपूत जातियों के उत्पन्न होने का प्रश्न है, वह उसकी प्राचीन पाण्डुलिपियों में नहीं मिलता। उनकी शरीर-रचना, रंग-रूप और सुन्दर आकृति के आधार पर उन्हें प्राचीन वैदिक आर्यों का ही वंशज मानना उपयुक्त होगा।"[१९]

इससे गूजर विदेशी प्रतीत नहीं होते।

(१०) "Jats, Gujars and Ahirs smoke and drink together."[२०]

This proves at least a close relationship.

अर्थात्—"जाट, अहीर और गूजर आपस में हुक्का-पानी करते हैं।" यह सिद्ध करता है कि अन्त में उनका निकट सम्बन्ध है। इससे तीनों एक ही प्रतीत होते हैं।

(११) **डॉ० रामवृक्ष सिंह**, एम० ए०, पी-एच० डी० अपने 'राजपूतों की उत्पत्ति' शीर्षक लेख[२१] में लिखते हैं—

"···सर जेम्स केम्पवेल ने गुर्जर शब्द का सम्बन्ध ध्वनि-साम्य के आधार पर

१९. 'राजपूतकालीन उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास', पृष्ठ २३ [सन् १९७८ ई० में श्री लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, अस्पताल मार्ग, आगरा द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२०. 'Census Report', 1865, App. B., p. 14.

२१. मासिक पत्र 'राजर्षि', वाराणसी, भाग ३, जुलाई सन् १९५३ ई०, संख्या ७, पृष्ठ ९।

खजर जाति से जोड़ा, जो छठी शताब्दी से एशिया और यूरोप की सीमा पर निवास करती थी। हार्नली ने गुर्जरों का सम्बन्ध तुर्कों से स्थापित किया। कनिंघम के मत से गुर्जर यूची (कुशान) जाति के थे। स्मिथ के विचार से गुर्जर छठी शताब्दी में भारत में प्रवेश करनेवाली हूण जाति की सन्तान हैं। इस प्रकार एक प्रतिहार जाति के विषय में ही विभिन्न इतिहासकारों के विभिन्न मत हैं और सबके मत तर्क या प्रमाण पर आधारित न होकर अनुमान पर ही अवलम्बित हैं।"

(१२) **इब्बेट्सन** लिखते हैं—"····राजपूतों की गूजर, बड़गूजर जाति अक्सर साथ ही पाई जाती है, इससे यह मालूम पड़ता है बड़गूजरों का सम्बन्ध गूजरों से वही है,* जो खानजादों का मेयो से है, और जो अधिकतर राजपूतों का जाटों से हैं।"[२२]

(१३) **श्री रमेशचन्द्र गुणार्थी, 'रिसर्च स्कॉलर'**, ठि० सावर (जि० अजमेर) का मत है कि—"गूर्जर-क्षत्रिय—अति प्राचीनकाल में यह जाति भी भारत की शासक जातियों में गिनी जाती थी। अब इस वंश का राज्य बुन्देलखण्ड में **'समकर'** नामक ठिकाना रह गया है, और अधिक यह समाज पशुपालन से ही अपनी जीविका चलाते हैं।

संस्कृत में गूजर को गुर्जर लिखते हैं, जिसका अर्थ यह बताया जाता है कि वो क्षत्रिय जो प्रायः गुर्ज से ही युद्ध करते थे। अब भी इस जाति में अमूनन लकड़ी के नीचे लोहे का ठोस पोला गुर्ज के नमूने का लगाने और रखने का रिवाज है···।"[२३]

(१४) अखिल भारतवर्षीय क्षत्रिय उपकारिणी महासभा के पाक्षिक मुख-पत्र 'क्षत्रिय मित्र', वाराणसी, भाग १८, दिनाङ्क १६ मार्च, १९२६ ई०, संख्या ६, पृष्ठ ४ में ठाकुर शिवनाथ सिंह सेंगर, हाउस होल्ड कण्ट्रोलर, बीकानेर राज्य

---

२२. मासिक पत्रिका 'विश्ववाणी', प्रयाग, वर्ष ३, भाग ६, दिसम्बर १९४३, अङ्क ६, पृष्ठ ३२४, डॉ० भूपेन्द्रनाथ दत्त का 'राजपूतों का उत्थान', शीर्षक लेख।

* बड़गूजरों का सम्बन्ध गूजरों से नहीं है। कर्नल टाड ने लिखा है—"बड़-गूजर सूर्यवंशी हैं" [ओझाजी कृत 'राजपूताने का इतिहास', पहली जिल्द, पृष्ठ १५१]। —लेखक

२३. 'राजस्थानी जातियों की खोज', पृष्ठ ८१ [सन् १९५० ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति]।

लिखते हैं—"····इसी भाँति क्षत्रिय जनता को मरहठा, कुणबी, काठी, गढ़वाली गुरखा, राठी, कनैत, जाट, गूजर, आभीर (अहीर) आदि बृहत समुदायों (बड़े थोकों) के क्षत्रियत्व के दावों की जाँच करके बहुमत के अनुसार व्यवस्था दे डालनी चाहिए। अत्यधिक मन्थन से तो विष ही निकलता है। फुटनोट—कुनबी और कनैत आज तक अपनी कन्याएँ क्षत्रियों में ब्याह देते हैं। गूजरों में कहीं-कहीं अब भी ऐसा देखने में आया है कि कोई व्यक्ति बहुत बढ़ गया है तो बड़गूजर होने का दावा करने लगा है।"

(१५) **श्री जगदीश सिंह गहलौत**, एम० आर० ए० एस०, एण्टिक्वेरियन एण्ड हिस्टोरियन, जोधपुर लिखते हैं—

"गूजर—यूरोपियन विद्वानों के लेखानुसार यह जाति ई० सन् की ५वीं सदी में भारत में बाहर से आई। कनिंगहाम ने गूजरों को कुशानवंशी और स्मिथ ने हूण लिखा है। केम्पवेल और भण्डारकर ने इनकी उत्पत्ति खजर नाम की विदेशी जाति से बताई है। परन्तु वास्तव में ये एक प्राचीन आर्य राजवंश था जो अपने मूल पुरुष के नाम से गुर्जर कहलाया और उसके अधीन का देश गुर्जर देश या गुजरात प्रसिद्ध हुआ। गूजरों का राज्य पंजाब और राजपूताने में रहा है। इनकी मुख्य राजधानी भीनमाल (अब मारवाड़ में) थी जैसाकि चीनी यात्री हुएनसाङ्ग ने सं० ६९६ वि० (सन् ६३९ ई०) के करीब यहाँ आकर लिखा है। क्षत्रियों के बाद गूजरों ने गुजरात व सौराष्ट्र को जीता। ७वीं से ९वीं शताब्दी तक मारवाड़ के पूर्वी भाग पर गुजरों का अधिकार था। मारवाड़ के डीडवाना (डेडवानक) परगने के गाँव सेवा (सिवा) और कालिंजर (बुन्देलखण्ड) में गूजरों के शिलालेख मिले हैं। ११वीं शताब्दी के प्रारम्भ में इनका अधिकार अलवर प्रदेश पर था और उस समय ये कन्नौज के पड़िहार राजा क्षितिपालदेव (महीपाल) के सामन्त थे। इनकी राजधानी राजोरगढ़ थी। इनकी शाखा बड़-गूजर का राज्य बहलोल लोदी (सं० १५१५) के समय तक अलवर तथा शेखा-वटी में रहा। और कछवाहों ने बड़गूजरों से ही राज्य छीना था। अब इस गूजर जाति के लोग पशुपालन और खेती-बाड़ी ही अधिक करते हैं। बुन्देलखण्ड में इनका राज्य समथर और संयुक्त प्रान्त में कुछ जमींदारियाँ हैं। जयपुर के कई

राजाओं की रानियाँ इस कौम की थीं।"[२४]

(१६) **विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र**, मुरादाबाद लिखते हैं—(क्षत्रियखण्ड में)—"खेती करनेवाली जातियाँ। अमोर वा अहीर-ग्वाला, कुर्मी वा कुलंबी, गूजर और जाट।"[२५]

टिप्पणी—मिश्रजी ने टॉड की प्रतिलिपि कर दी है। इनके वास्तविक वर्ण पर अनुसन्धान नहीं किया है। अहीर-ग्वाला, कूर्मी, गूजर और जाट सभी शुद्ध क्षत्रिय हैं।

(१७) **श्रोत्रिय पं० छोटेलाल शर्मा**, एम० आर० ए० एस०, पुरातत्व-विशारद, व्याख्यानभूषण, फुलेरा लिखते हैं—

"गूजर—यह एक क्षत्रिय जाति है परन्तु इसकी वर्तमान स्थिति को देखते हुए लोग इनके क्षत्रियत्व पर शंका करते हैं पर इनकी दीनावस्था व राजविहीनता के कारण ऐसी शंका होना स्वाभाविक ही है।.....

किसी विद्वान् ने ऐसा भी लिखा है कि ये लोग गोचर थे। गो+चर=गोचर अर्थात् गायों को जहाँ ये लोग चराते हैं, उस स्थान को गोचर कहते हैं; उस ही से इनको 'गोचर' कहा है।...किन्हीं-किन्हीं विद्वानों ने 'गुरुतर' शब्द से बिगड़कर बना है [ऐसा माना है]।..."[२६]

(१८) प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वान् बाबू देवीप्रसाद जी रिटायर्ड जज ने अपनी रिपोर्ट के पृष्ठ ४४ में इस जाति को क्षत्रिय माना है।"[२७]

(१९) मुंशी किशोरीलाल जी रईस व मुन्सिफ दर्जे दोयम अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि—"गूजर—ये लोग भी अपने को क्षत्रिय समझते हैं।"[२८]

---

२४. 'राजपूताने का इतिहास', (दो भागों में), पहला भाग, पृष्ठ १४ [सन् १९३७ ई० में हिन्दी साहित्य मन्दिर, जोधपुर द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२५. 'जाति भास्कर', पृष्ठ २२९ [संवत् १९९५ वि० में श्री बेङ्कटेश्वर स्टीम् प्रेस, बम्बई द्वारा प्रकाशित]।

२६. 'क्षत्रिय वंश प्रदीप', द्वितीय भाग, पृष्ठ ८११-१२ [सन् १९२८ ई० में हिन्दू धर्म वर्ण-व्यवस्था मण्डल, फूलेरा (जयपुर) द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२७. वही, पृष्ठ ८१४।

२८. वही, पृष्ठ ८१४।

(२०) श्री विल्सन 'Indian Caste', नामक ग्रन्थ में लिखते हैं कि "The Gujars and the Bargujars tribe of Rajputs are often found together." (C. & T., p. 442)

अर्थात्—"गूजर और बड़गूजर राजपूतों की जातियाँ प्रायः एक ही स्थान पर मिलती हैं।"[२९]

यहाँ गूजरों को राजपूत कहा गया है।

(२१) "By one legend current in the Punjab they claim descent from a certain Nandmihir who is perhaps Nand, the foster father of Krishna."

अर्थात्—"पंजाब में एक लोकोक्ति प्रसिद्ध है जिसके अनुसार गूजर लोग कृष्ण को दूध पिलाकर पालनेवाले पिता नन्दमिहिर की सन्तान माने जाते हैं।"[३०]

(२२) पी० एथनोग्राफी नामक ग्रन्थ में लिखा है कि "Jats and Gujars and perhaps Ahirs also are all of one ethnic stock; and this is because there is a close connection between them."

भावार्थ—"जाट और गूजर तथा कदाचित् अहीर भी यह सब एक ही वंश के हैं क्योंकि इन सबका परस्पर बहुत समीप सम्बन्ध है।"[३१]

(२३) जाट जाति को कर्नल टाड ने अपने इतिहास में छत्तीस राजकुलों में से एक लिखा है। अतएव निश्चय हुआ कि जाट, अहीर और गूजर यह शुद्ध क्षत्रिय जाति हैं; इसकी पुष्टि में उपर्युक्त ग्रन्थकार लिखते हैं कि—

"And my reason for thinking so is precisely because they eat and smoke together."

अर्थात्—ग्रन्थकार कहते हैं कि मेरा इन तीनों को एक बतलाने का कारण यह है कि इन सबका खानपान, लेन-देन आदि व्यवहार एक-सा है।"[३२]

(२४) "They can in most places, eat, drink with Ahirs and Jats." (C & T., p. 548)

---

२९. 'क्षत्रियवंश प्रदीप', द्वितीय भाग, पृष्ठ ८१५।

३०. वही, पृष्ठ ८१५।

३१. वही, पृष्ठ ८१८।

३२. वही, पृष्ठ ८१८।

भा०—"गूजर लोग सर्वत्र अहीर और जाटों के साथ खा-पी सकते हैं।"[33]

(२५) "The Jats and Gujars as well as the Ahirs smoke together and eat out of the same pot, but not out of the same dish." (R. G., p. 261, Vol. I)

भा०—जाट, गूजर, और अहीर ये सब परस्पर हुक्का पी लेते और एक ही बर्तनों को काम में ले लेते हैं, परन्तु एक ही थाली में एकसाथ बैठकर नहीं खाते। यथा—

हुक्का, सुक्का, हुड़कनी, गूजर और जाट।
इनमें अटक कहाँ, जैसे जगन्नाथ का भात॥"[34]

(२६) "The Gujars are derived from Rajputs and are derived into two sections called Khari and Laur."
—(R. Gazetteer)

अर्थात्—"गूजर लोग राजपूतों से ही निकले हैं जिनके दो भेद खारी और लौर हैं।"[35]

(२७) "The cultivating tribes belonging to pure Rajput clans, the principal are the Jats and the Gujars."
—(Raj G., p. 170)

भा०—"कृषि का धन्धा करनेवाली जातियों में जो राजपूत वंश में से हैं वे जाट और गूजर हैं।"[36]

(२८) सहारनपुर के भूतपूर्व कलेक्टर ने लिखा है कि—

"It includes the names of many well-known Rajput septs, such as Bagri, Bais, Chandel, Chouhan and Tomar."

अर्थात्—"गूजरों में राजपूतों के प्रसिद्ध भेद बागड़ी, बैस, चन्देल, चौहान और तोमर हैं।"[37]

---

३३. 'क्षत्रियवंश प्रदीप', द्वितीय भाग, पृष्ठ ८१८।
३४. वही, पृष्ठ ८१९।
३५. वही, पृष्ठ ८२०।
३६. वही, पृष्ठ ८२१।
३७. वही, पृष्ठ ८२१।

(२९) मुंशी किशोरीलाल जी ने लिखा है कि "गूजर लोग भी अपने को क्षत्रिय समझते हैं।" (देखो—अक़वाम उलहिन्द)"[38]

(३०) श्रोत्रिय पं० छोटेलाल शर्मा लिखते हैं—"मेदवसिया गूजर पंवार राजपूतों में से हैं जो बादला से निकलकर काली नदी के आसपास आ बसे थे। गूजरों का एक भेद चेची भी है जो एक समय राजपूताने के अजमेर, पुष्कर आदि स्थानों के अधिकारी थे।"[39]

(३१) श्री विल्सन लिखते हैं—"The Gujars and Bargujar tribe of Rajputs are often found together."

भा०—"गूजर और बड़गूजर जो राजपूतों की जाति है, दोनों ही एक साथ पाई जाती हैं।"[40]

(३२) श्रोत्रिय पं० छोटेलाल शर्मा लिखते हैं—"गूजरों में एक सांकल नामक भेद होता है जो मुजफ्फरनगर की तरफ विशेष है। वे कलसा नामक राजपूत के वंशज होने से सांकल गूजर कहाए जो जैसलमेर के भट्टी खानदान का एक सरदार था। पंजाब* में करनाल, पानीपत की तरफ रावल खाँप के गूजर होते हैं जो राजपूतों के खोखर वंश में से हैं।

"खोखर गूजरों का वंश-भेद जादों है, चमैयाँ का तोमर कुल, सिया का करैना और भावी का चौहान, अधान का बड़गूजर और कांसल गूजर भट्टी राजा कांसल के वंश में से हैं।"[41]

मुसलमानों के अत्याचार से बहुत से गूजर नौमुस्लिम हो गए हैं। उनमें अब भी हिन्दुत्व की रीतियाँ हैं। सगाई, विवाह आदि अन्य राजपूतों की भाँति पण्डितों से मुहूर्त दिखलाकर करते हैं। वे लोग होली व नागपंचमी त्योहारों को मानते हैं। अतः इनको शुद्ध करके पुनः आर्य (हिन्दू) जाति में मिला लेना चाहिए।

(३३) श्री सी० एस० श्रीनिवासाचारी, एम० ए० तथा श्री एम० एस०

---

३८. 'क्षत्रियवंश प्रदीप', द्वितीय भाग, पृष्ठ ८२१।
३९. वही, पृष्ठ ८५२।
४०. वही, पृष्ठ ८२३।
* अब हरयाणा में [लेखक]।
४१. वही, पृष्ठ ८२३।

रामस्वामी अयंगर, एम० ए० लिखते हैं—

"श्री सी० वी० वैद्य ने अपनी 'हिस्ट्री ऑफ मेडीविएल इण्डिया', भाग दो में इस धारणा का खण्डन किया गया है कि गूजर मूलतः विदेशी थे। उनकी मान्यता है कि वे सच्चे मानी में आर्य थे।··· ··"[४२]

(३४) केनेडी के मत से [ज० रा० ए० सा०, सन् १९०७] श्रीकृष्ण जिस घुमक्कड़, जाति के बालदेवता हैं उनकी वर्तमान सन्तान हैं जाट और गूजर है।"[४३] आभीर (अहीर) के भी बालदेवता कृष्ण हैं, अतः तीनों एक ही हुए।

(३५) चिन्तामणि विनायक वैद्य महोदय लिखते हैं कि गूजर आर्य हैं। मंगोलियन नहीं। भीनमाल [जोधपुर राज्य] इनकी राजधानी थी। भड़ौच भी इनकी राजधानी हो गई थी।·····परिहार लोग गूजरों के चचेरे भाई हो सकते हैं···।"[४४]

(३६) ठा० देशराज जी जघीना (भरतपुर), भूतपूर्व सम्पादक अर्द्ध साप्ताहिक 'राजस्थान सन्देश' लिखते हैं—"जाट, गूजर और मराठाओं में और भी अनेक समानताएँ हैं। इनके कई गोत्र भी आपस में मिलते हैं। पँवार, सोलंकी, तंवर या तवार आदि गोत्र जाट, गूजर, मराठा तीनों जातियों में मिलते हैं। सुर्वे और राणा मराठों के भी गोत्र हैं और यह गोत जाटों के भी हैं।

जाट और गूजरों में सिर्फ पारस्परिक शादियों का रिवाज नहीं हैं, बाकी खान-पान, रहन-सहन, हुक्का-पानी सबमें एक हैं। जाट यदि कृषि-विद्या में निपुण

---

४२. 'प्राचीन भारत', (हिन्दू काल), पृष्ठ २५६ की पाद-टिप्पणी (इस पुस्तक का सम्पादन श्री गोरखनाथ चौबे, एम० ए०, रजिस्ट्रार, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने किया है इससे वे भी गूजरों को आर्य मानते हैं)—[सन् १९४८ ई० में श्री रामनारायण लाल, प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

४३. आचार्य पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी कृत 'सूर साहित्य', पृष्ठ २०-२१ [सन् १९७३ ई० में राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, ८, फ़ैज बाजार, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

४४. पं० भागीरथ प्रसाद दीक्षित कृत 'भारतीय समाज-विमर्श', पुस्तक, पृष्ठ १०० [सन् १९५७ ई० में गिन्दन साहित्य मन्दिर, लखनऊ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

हैं तो वे पशुपालन में। भाषा, भेष, धार्मिक और सामाजिक विश्वास कोई भी ऐसी चीज नहीं जिनसे जाट और गूजर दो जातियाँ मानी जाएँ। उनकी जातीय उपाधियाँ (खिताब) चौधरी, पटेल, मुकद्दम, फ़ौजदार और ठाकुर आदि एक ही होती हैं।"[४५]

(३७) श्री बजरंगलाल लोहिया, कलकत्ता 'गूजर' जाति के सम्बन्ध में लिखते हैं—"गूजर—मारवाड़ की सैनिक जातियों में राजपूतों तथा जाटों के पश्चात् गूजरों का स्थान है।

किसी समय गूजर अत्यन्त शक्तिशाली थे और गुजरात प्रान्त के अधिपति थे। किन्तु दीर्घकाल से इनका व्यवसाय पशुपालन और उनका क्रय-विक्रय चला आ रहा है, अतः इनकी गणना सैनिक जातियों में नहीं की जाती।

गूजर संस्कृत भाषा के गुर्जर शब्द का अपभ्रंश है। भारतवर्ष में गूजरों का इतिहास पंजाब से आरम्भ होता है। कारण कि पहले ये लोग वहीं पहुँचे थे। जनरल कनिंघम के मतानुसार गुजरांवाला, गुजरात, गूजरखाँ इत्यादि नगरों के नामों में गूजर शब्द का संयोग गूजरों के कारण ही हुआ है।

गूजर पंजाब से दिल्ली आए। दिल्ली से अजमेर तथा सौराष्ट्र पहुँचे और वहाँ से वल्लभीपुर के सम्पूर्ण भू-क्षेत्र पर अधिकार स्थापित किया। उस प्रान्त का नाम बदलकर गुजरात अथवा गुर्जर-खण्ड गूजर-वंश ने ही किया।

भाट गूजरों की उत्पत्ति राजपूतों से ही मानते हैं, कारण कि एक ओर तंवर, चौहान तथा चन्देल इत्यादि राजपूतों के अनेक गोत्र गूजरों में विद्यमान हैं तथा दूसरी ओर ब्राह्मणों में गूजर-गौड़, राजपूतों में बड़-गूजर और पठानों में गूजर पठान या गूजरों के गोत्र देश की अन्य जातियों में भी पाये जाते हैं, अतः गूजरों की उत्पत्ति राजपूतों से मान लेना निराधार नहीं है।

गूजर अजमेर से मारवाड़ आए और अब पर्वतसर तथा मारवाड़ के अनेक पूर्वीय परगनों में पर्याप्त संख्या में आबाद हैं और पशु-पालन का अपना पुराना धन्धा कर रहे हैं। ये अपने घर बस्ती से दूर बनाते हैं। कारण कि एकान्त स्थान में पशु-पालन में सुविधा रहती है। कहावत है कि गूजर जहाँ ऊजड़।

---

४५. 'जाट इतिहास', पृष्ठ १०९-११० [सन् १९३४ ई० में श्री व्रजेन्द्र साहित्य समिति, आगरा द्वारा प्रकाशित व कान्ति प्रेस, माईथान, आगरा द्वारा मुद्रित, प्रथम संस्करण]।

पूर्वीय राजपूताने के गूजर छान-छप्पर के काम में विशेष चतुर होते हैं। राजपूत इस कार्य के लिए गूजर स्त्रियों को अधिक दक्ष मानते हैं। गूजर स्त्रियों को भी अपनी इस कार्य-पटुता का अभिमान है।

गूजर डेरी माता, देवजी तथा भैरों जी की उपासना करते हैं और अपने देवताओं के सम्मान में गले में फूल [माला] पहनते हैं। ये मांस तथा मदिरा दोनों के सेवन के अभ्यस्त होते हैं।

लगभग ६५० वर्ष पुरानी बात है, जब मेवाड़ में देवजी नाम के एक महात्मा हुए थे। उन्होंने मेवाड़ में अनेक करामातें दिखायी थीं गूजर उनके बड़े भक्त होते हैं। वहाँ उनके नाम के अनेक मन्दिर बने हुए हैं। जिनके पुजारी भी गूजर हैं।

गूजर मृतक के शव की हजामत बनाकर उसका दाह-कर्म करते हैं और मृतक का श्राद्ध दीपावली पर करने की उनकी परम्परा है।"[४६]

(३८) राजकुमार श्री प्रद्युम्नसिंह जी, खैरागढ़ स्टेट, भूतपूर्व प्रधान मन्त्री अखिल भारतवर्षीय क्षत्रिय महासभा, नागपुर (सी० पी०) (पत्र ता० ६-११-४७) "क्षत्रिय महासभा का ४३वाँ अधिवेशन नागपुर में ता० ४-४-४५ को हुआ था जिसमें प्रस्ताव पास हुआ कि मराठा, जाट, गूजर और अहीर, क्षत्रिय जाति में सम्मिलित किये जायें।"[४७]

(३९) श्री लक्ष्मीनारायण यादवलेकर, एम० ए०, एल० टी० का मत है कि—"केवल अहीर, जाट और गूजर ही शुद्ध क्षत्रिय हैं, औरों में शक, हूण, तातार, और यवनों के रक्त मिले हुए हैं।"[४८]

(४०) परलोकवासी कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, धन्वन्तरि, बी० आई० एम० एस०, एल० ए० एम० एस०, सम्पादक 'शक्तिसन्देश', कनखल

---

४६. 'राजस्थान की जातियाँ', पृष्ठ २१-२२ [मई सन् १९५४ ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित और विशाल भारत बुक डिपो, १९५/१, हरिसन रोड, कलकत्ता से प्राप्य]।

४७. श्री श्रवणकुमार यादव साहित्यालङ्कार विरचित 'यदुवंश की खोज', पृष्ठ ३७९ [सन् १९५३ ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण, श्री हंसराज खिरहरी, ग्राम-टेटिया, पो० टेटिया बम्बर, जिला मुंगेर बिहार द्वारा प्राप्य]।

४८. वही, पृष्ठ ३८०।

लिखते हैं—"गुर्जर शब्द की व्युत्पत्ति—गर—शत्रुकृतताड़नवधोद्यमादिकं वा उज्जरयति यो देशः कलिगाः साहसिका इतिवद्देशस्य जने लक्षणेति ज्ञेयम्—अर्थात् जिस देश के व्यक्ति शत्रुओं के आक्रमणों और परिश्रम आदि को नष्ट करनेवाले हों, उन साहसी शूरमाओं को गुर्जर कहा जाता है। शत्रु के लिए युद्ध में भारी पड़ने के कारण इन्हें पहले 'गुरुतर' कहा गया, किसी के मतानुसार बड़े व्यक्ति के नाते गुरुजन कहकर अपभ्रंश स्वरूप 'गुरजर' शब्द का चलन हुआ। पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के अनुसार प्राचीनकाल में गुर्जर नामक एक राजवंश था। अपने मूलपुरुषों के गुणों के आधार पर वंश का नाम गुर्जर पड़ा था। उस पराक्रमी गुर्जर के नाम पर उनके आधीन देश 'गुर्जर' 'गुर्जरत्रा' और 'गुर्जर देश' प्रसिद्ध हुए। कर्नल जेम्स टाड ने इन्हें 'गरुअ' करके ३६ राजवंशों में गिना है। सर जेम्स केम्पवेल ने गुर्जरों की गणना खजर लोगों में की है। उनके कथनानुसार खजर लोगों की ही एक शाखा गोर्जियन थी जो बाद में गूजर कहलाए। उस विद्वान् अंग्रेज ने इन्हें गोर्जिया-गुर्जिस्तान की एक जाति बताया। विसेण्ट स्मिथ भी महाभारतकालीन जाति न होने के कारण इन्हें श्वेत हूणों का एक महत्त्व-पूर्ण समूह कहते हैं। श्री के० एम० मुंशी (गवर्नर, उ० प्र०) नामक विद्वान् गुजरात के शासक होने से गूजर नाम चल निकलना मानते हैं जबकि बहुत अधिक ऐतिहासिक जन इनके शासित देश को इनके नाम पर गुजरात करके प्रसिद्ध होना लिखते हैं। ये सब धारणाएँ, कल्पनाएँ न केवल इस जाति के बारे में महाभारत के मौन से चली अपितु अमरकोष और अष्टाध्यायी में भी उल्लेख न होने से हुई। किन्तु गुर्जर शब्द शुद्ध रूप में संस्कृत जन्य जँचता है और इसकी प्रथम पंक्ति में उक्त परिभाषा और व्युत्पत्ति ठीक ही है, क्योंकि इस जाति ने अपने इतिहास का परिष्कार तो अलग, इतिहास लिखने तक पर ध्यान ही नहीं दिया। अथवा यह भी कहा जा सकता है कि यह जाति जिस समय शक्तिपूर्वक सत्ता में आई उस समय इतिहास लिखने की परिपाटी नहीं थी, फलतः उसने इस ओर ध्यान नहीं दिया। इसी कारण एक अंग्रेज मि० क्रुक ट्राईब्स एण्ड कास्ट्स पुस्तक के पृष्ठ ४३९ में अपनी बड़ी भारी (?) गहरी खोज (?) का परिणाम लिखते हैं—'गुर्जर' नाम पड़ने का कारण यह है कि इन लोगों ने अपने पशुओं को गाजर खिलाई थी।" आश्चर्य है कि ब्रिटिश शासन के बल पर ऐसे अल्पज्ञ अंग्रेज भी भारतीय धन पर पलते रहे और आजीवन अनर्गल प्रलाप भारतीय क्षत्रिय

जातियों के लिए करते रहे और स्वाभिमानी गुर्जर विद्वानों ने प्रतिवाद भी न किया। वस्तुतः क्षत्रियों का वह दल जो युद्धकाल के संघर्षों से अवकाश के समय गौ 'चरा' कर राष्ट्र को पशुधन दिया करता था वह 'गोचर' दल से 'गाजर' गूर्जर कहलाने लगा होगा, ऐसी हमारी मान्यता है। हमारी इस मान्यता में इस जाति की वर्तमान पशुपालन प्रवृत्ति एक मुख्य आधार है।

क्या गूजर विदेशी हैं? भारतीय इतिहास को योरोपीय पद्धति पर लिखनेवाले प्रत्येक लेखक ने, चाहे भले ही वह भारतीय क्यों न रहा हो, यह सिद्ध करने का दुष्प्रयास किया है कि गूजर न केवल स्वयं विदेशी हैं वरन् विदेशियों को अपने में खपा लेनेवाले किंवा विदेशियों की ही सन्तान भी हैं।·····किन्तु युक्ति, तर्क, प्रमाण और इतिहास से यह सिद्ध है कि गूजर शुद्ध क्षत्रिय और भारतीय हैं। जिन खजर लोगों के साथ इनका सम्बन्ध जोड़ते हैं उसमें दो भेद हैं एक तो काले कुरूप हैं दूसरे पीले रंग के चपटी नाकवाले हैं। वे आज भी काकेशिया पर्वत के आसपास रहते हैं। उनका भारतीय क्या काश्मीरी गूजरों से भी साम्य नहीं है। उस खजर जाति का अपना इतिहास भी है। वे कभी भारत नहीं आए। वे लोग तो व्यापारी वर्ग के हैं जबकि गूजर लड़ाकू प्रवृत्ति के पशुपालक कृषक पद्धति के हैं। यही स्थिति हूणों के सम्बन्ध में भी है—ये हूणों से पृथक् और शुद्ध भारतीय वंशों के संगठन पर खड़ा हुआ संघ है। इन्हें चीनी यात्री हुएन्त्साङ्ग ने श्रेष्ठ योद्धा के रूप में क्षत्रिय पाया। अबुजैद (In Elliot) की भाषा में "भारत के जुजर (गूजर) लोग हिन्दुस्तानी शासकों में चौथी श्रेणी के थे। सर हरबर्ट रिस्ले महोदय ने सन् १९०१ की जनगणना में शीर्षमापन सिद्धान्त से चेहरा और सिर नापने की नई प्रणाली अपनाकर गूजरों को आर्यन रेस का सिद्ध किया। उनकी सीधी ऊँची नासिका, लम्बी गर्दन, ऊँचा माथा, सुडौल भरा हुआ शरीर देखकर पाश्चात्य ऐतिहासिकों ने भी इन्हें भारतीय एवं आर्य प्रमाणित किया है। मिस्टर इबटसन ने 'पंजाब कास्ट' में १९४ पृष्ठ पर लिखा है कि—"The Gujars are among the eight largest castes in the Punjab, only the Jats. They are fine stalwart fellows of precisely the same type as the Jats. He is of the same social standing as the Jat perhaps slightly inferior and the two eat and drink in common without any scruple."

अर्थात्—"गूजर पंजाब की सबसे बड़ी आठ जातियों में से एक है। वे डी र-डौल और शारीरिक बनावट में जाटों से मिलते-जुलते हैं। सामाजिक रीति-रिवाजों में जाटों के समान हैं, किन्तु जाटों से कुछ उन्नीस हैं। दोनों जातियाँ बिना किसी परहेज के परस्पर खानपान करती हैं।"

इस प्रकार इनके क्षत्रिय होने में कोई सन्देह नहीं। हरबर्ट रिजले नामक अंग्रेज ने जाटों, क्षत्रियों, गूजरों की नाक को देखकर पारसियों से भी अधिक (Finer) पैनी तेजस्वितासूचक सिद्ध किया है। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि योरोपीय विद्वानों से कोई पूछे कि जब राजपूत, जाट, गूजर, मराठा आदि सभी क्षत्रिय जातियाँ अनार्य रक्त की विदेशी हैं जैसाकि वे अलग-अलग सबके लिए ऐसा ही लिखते रहे, तो वे क्षत्रिय राजवंश कहाँ गए जो रामायण, महाभारत, बौद्धकालीन राजनैतिक जगत् की शासन सत्ता संचालित किए हुए थे। फिर उनकी आकृति रीति-रिवाज जैसी जातियाँ उन-उन विदेशों में से आज कहाँ चली गईं। क्या उनके इतिहासों में उनके भारत की ओर बढ़ना और वहाँ जाकर बसना लिखा मिलता है? नहीं, कहीं भी नहीं। यह तो स्टण्ट था जो क्षत्रियों के, गूजरों के स्वाभिमान का मर्दन करने के लिए विदेशियों ने उनको विदेशी लिखा।"

इस बात को सिद्ध करने के लिए ही सामरिक जातियों के विरुद्ध यह योजनाबद्ध षड्यन्त्र किया था। यह स्पष्ट है कि यह भ्रान्ति इसलिए भी हुई कि जाट और गुर्जर शक्ति पहले सीमा प्रान्त पंजाब, राजस्थान में थी और बाद में वे भारत के पश्चिमी प्रदेश में उत्तरी भागों की भाँति ही फैल गई और अपने से कुछ पहले फैली हुई जातियों को पूरब-दक्षिण की ओर धकेलकर सुन्दर उपजाऊ भूमि पर अधिकार कर लिया, इसीसे इन्हें आक्रान्ता मान लिया गया। अच्छे भूखण्डों को छीनने के लिए युद्धों के विरोध में अन्य जातियों ने जनमत जाग्रत् करने के लिए इन्हें विदेशी कहकर इनकी सत्ता लोलुपता को शान्त करना चाहा। उसका प्रमाण यह है कि आज भी ये दोनों जातियाँ जहाँ भी बसती हैं अन्य जातियाँ इनसे ईर्ष्या करती हैं, क्योंकि इनकी शासक वृत्ति की अकड़ बराबर बनी हुई है। ये दोनों अच्छे कृषक के साथ इतने प्रभावपूर्ण हैं कि चुनाव प्रथा में ये स्वयं चुने जाते हैं या इनके

ही समर्थन से कोई दूसरा चेता जाता है।"[४९]

(४१) "छत्तीस शाखाओं का विकास हुआ जिनका उल्लेख कल्हण की राजतरंगिणी, पृथ्वीराजरासो और कुमारपालचरित नामक ग्रन्थों में मिलता है। इसमें सबसे विस्तृत और प्रामाणिक वर्णन पृथ्वीराजरासो में है, जिसको नीचे दिया जाता है—

रवि ससि जाधव बंस। ककुत्स्थ परमार सदावर॥
चाहुवान चालुक्क। छंदक सिलार अभीयर॥
दोय मत्तमकवान। गरुअ, गोहिल गोहिल पुत्र॥
चापोत्कट परिहार। राव राठोर रोसजुत॥
देवरा टांक सैंधव अनिग। यौतिक प्रतिहार दधिषट्॥
कारट्टपाल कोटपाल हुल। हरितट गोर कलाषमट॥
धन्य पालक निकुंभवर। राजपाल कविनीस॥
कालच्छुरकै आदि दे। वरने वंस छतीस॥

ऊपर की सूची में प्रथम तीन रवि (=सूर्य), ससि (=चन्द्र) और जाधव (=यादव) वास्तव में राजपूतों की शाखाएँ नहीं, किन्तु मूल तीन वंश हैं जिनसे समस्त राजपूत वंशों, क्षत्रियों तथा उनकी शाखा-प्रशाखाओं की उत्पत्ति हुई है। इसके बाद चन्दबरदाई ने छत्तीस शाखाओं की गणना इस प्रकार की है—

१. ककुत्स्थ=कच्छ=कच्छपघाट=कुशवाहा (जयपुर का प्रसिद्ध राजवंश)
२. परमार=मालवा (धारा का प्रसिद्ध राजवंश)।
३. सदावर=तूअर=तोमर।
४. चाहुवान=चौहान (अजमेर का प्रसिद्ध राजवंश)।
५. चालुक=चालुक्य=सोलंकी।
६. छन्दक=चन्दक=चन्द=चन्देल (रासा में 'चन्देल' के बदले चन्द्र

४९. 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान पतन एवं जाटों का उत्कर्ष', पृष्ठ २५१ से २५४ तक [मार्च १९६२ ई० में डॉ० संसारसिंह महोपदेशक संस्थापक 'कन्या गुरुकुल हरिद्वार' तथा 'शक्ति सन्देश' साप्ताहिक कनखल, प्रथम संस्करण, शक्ति आश्रम, कनखल, पो० गुरुकुल कांगड़ी, जि० सहारनपुर से प्राप्य]।

शब्द का प्रयोग मिलता है)।
७. सिलार
८. अभीयर=आभीर=अहीर
९. दोयमत
१०. मकवान
११. गरुअ=गूअर=गुर्जर=गुजर (वीर गूजर)।
१२. गोहिल
१३. गोहिलोत
१४. चापोत्कट
१५. परिहार
१६. रोठोउ
१७. रोसजुत
१८. देवरा
१९. टांक
२०. सधव
२१. अनिग (अनंग)
२२. यौतिक
२३. प्रतिहार
२४. दधिषट्
२५. कारट्टपाल
२६. कोटपाल
२७. हुल=हूण [कुमारपालचरित की नागरी प्रति में 'हूण' दिया हुआ है। कुछ इतिहासकार हूल और हूण को एक ही समझते हैं और कुछ अलग-अलग]।
२८. हरितट
२९. गौर
३०. कलाष (कमाष)
३१. मट=मद्र=जाट [कुमारपालचरित की गुजराती प्रति में जाट ही दिया हुआ है, मट नहीं]।

ज्ञानज्योति:पुस्तकालय-गुरुकुल, पौन्धा, देहरादून
पुस्तक क्रमांक.....
3412

३२. धान्यपालक
३३. निकुम्भवर
३४. राजपाल
३५. कविनीस
३६. कालच्छुरक=कलचुरी।[५०]

इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि गूजर क्षत्रिय हैं क्योंकि इनका नाम क्षत्रियों के ३६ राजवंशों में है।

(४२) साहित्याचार्य पं० विश्वेश्वरनाथ रेउ अपने 'राजपूतजाति' शीर्षक लेख[५१] में लिखते हैं—

"पूर्वपक्ष—गुर्जरवंशी क्षत्रिय विदेशी खिजर जाति की सन्तान हैं। यह जाति ईसवी सन् की छठी शताब्दी में, यूरोप और एशिया की सीमाओं के संगम स्थान पर रहती थी। कुछ लोग इस जाति का कनिष्क के समय और कुछ हूणों के आक्रमण के समय भारत में आना अनुमान करते हैं। इसी जाति के सम्बन्ध में इसके जीते हुए प्रदेश का नाम गुर्जर या गुजरात हुआ था।

उत्तरपक्ष—

परन्तु एक तो पहले लिखे अनुसार, आजतक के प्राप्त इतिहास से इस जाति का भारत में आना ही सिद्ध नहीं होता। दूसरा भड़ोंच के गुर्जर-नरेश जयभट तृतीय के, कलचुरी संवत् ४५६ (वि० से ७६२-ई० स० ७०५) के ताम्रपत्र [इण्डियन एण्टिक्वेरी, भा० १३, पृ० ७७] में इस वंश को महाराजा कर्ण की सन्तान लिखा है। तीसरा विक्रम की सातवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आनेवाले चीनी यात्री हुएन्त्सांग ने भी गुर्जर देश की राजधानी भीनमाल और वलभी के राजाओं को क्षत्रिय बतलाया है।

इसी प्रकार बड़गूजर भी क्षत्रिय हैं और उनका विवाह-सम्बन्ध अब तक

५०. देखो डॉ० राजबली पाण्डेय, एम० ए०, डी० लिट्० लिखित 'गोरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियों का इतिहास', पृष्ठ १९९ से २०१ तक [संवत् २००३ वि० में ठाकुर महातमराव पब्लिशर और बुक्सेलर, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

५१. हिन्दुस्तानी एकेडेमी की तिमाही पत्रिका 'हिन्दुस्तानी', प्रयाग, भाग ५ अप्रैल १९३५ ई०, अङ्क २, पृष्ठ २०६-२०७।

उच्चकुल के क्षत्रियों में होता है।"

(४३) इलियट महोदय मध्य प्रदेश के नागपुर के गूजरों को पवित्र सूर्यवंश से सम्बन्धित निर्णय करते हैं।"[५२]

(४४) श्री क्रुक का कथन है कि 'पंजाब और युक्त प्रदेश के पश्चिमी भागों में इस जाति की उत्पत्ति में किसी नीच जाति के पुरुष व स्त्री का संसर्ग नहीं है किन्तु सवर्णी रज वीर्य से जैसी उत्तम जाति पैदा होती है, वैसे ही गूजर भी हैं। पंजाब में एक कहावत यह भी है कि गुर्जर लोग बाबा नन्द (जो कि भगवान् श्रीकृष्ण के पालक पिता थे) की सन्तान हैं। मेहर गूजरों का एक प्रसिद्ध आदर-सूचक शब्द इसी से है।"[५३]

(४५) रेवरेण्ड, एम० ए० शेरिंग महोदय ने लिखा है कि "मि० जी० एच० लारेन्स के कथनानुसार गूजर लोग भाटी, नागर, हिन्दवाना इन तीन खाँपों में बँटते हैं। जिसमें भाटी, गूजर, राव, कोसल, नागर राजा नाग, जो तोमर वंश के थे, और हिन्दुवाना गूजर पँवार तथा नागर वंश से सम्बन्धित हैं और ये लोग राजपूत जाति की किस्म है।"[५४]

(४५) हिन्दी के सुप्रसिद्ध वैयाकरण पं० किशोरीदास वाजपेयी शास्त्री लिखते हैं—"गूजर, 'जाट', और 'नाग'—गूजर और जाट मूलतः पर्वतीय (पशु-पालक) वर्ग हैं। अहीर (∠ आभीर) भी इसी श्रेणी में हैं। हम यहाँ 'जाट' तथा 'नाग' की व्युत्पत्ति पर विचार करेंगे। 'गूजर' तो स्पष्टतः 'गोचर' हैं—गौ चरानेवाले। आज भी गूजर लोग जाड़े में हिमालय की चोटियों से नीचे उतर आते हैं और हरिद्वार, कनखल आदि के सामने तलहटी में डेरे डालकर पड़े रहते हैं। चार महीने बढ़िया ताजा घी-मक्खन हरिद्वार, कनखल वालों को मिलता

५२. इलियट (Glossary, part I, pp. 99) तुलना करो 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास' पृष्ठ ५१।

५३. 'The tribes and castes of the North Western Provinces and Oudh', part 2 (W.crook, B. A) 1896, p. 442; तुलना करो 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास', पृष्ठ ५०।

५४. 'हिन्दू ट्राईब्स एण्ड कास्ट्स (रेवरेण्ड, एम ए० शेरिंग, M. A. LL. B. लन्दन) (१८७२ ई०) देखो, राजपूत ट्राइब्स (गूजर), तुलना करो 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास' पृष्ठ ५०।

रहता है। होली करके फिर ये ऊपर चढ़ने लगते हैं।"...[५५]

इससे तीनों एक ही सिद्ध हो रहे हैं।

(४६) चौधरी दीपनारायण सिंह, मेड़िया, पो० चुनार (उत्तर प्रदेश) लिखते हैं—"गुर्जर—यह देश सम्बन्धी नाम है और इसका अर्थ गुजरात का रहने-वाला है। बम्बई प्रान्त में गुर्जर, कूर्मी आबाद हैं और चन्द्र वंशान्तर्गत माने जाते हैं।"[५६]

(४७) डॉ० अवधबिहारीलाल जी अवस्थी, बी० ए० (आनर्स), एम० ए०, पी-एच० डी०, रीडर प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय लिखते हैं—

"...गुर्जर एक जाति थी जो भारतवर्ष में बाहर से, विशेषकर मध्य एशिया से, हूणों के साथ ही अथवा कुछ बाद में, यहाँ आकर बस गई। इस मत के प्रतिपादकों (जैक्सन और भण्डारकर) का विचार है कि गुर्जर खज़र (एक विदेशी जाति) एक ही थे, जैसाकि ए० एम० टी० जैक्सन महोदय ने प्रतिपादित किया। डॉ० डी० आर० भण्डारकर और ह्वोरन्ले गुर्जर को हूणों से सम्बद्ध करते हैं। डॉ० ह्वोरन्ले का विचार है कि ईसा की छठी शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में हूणों, गुर्जरों तथा अन्य मध्य एशिया की जातियों ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया।

व्यूलर के अनुसार भी हूणों और गुर्जरों में निकट सम्बन्ध था और गुर्जर राजपूताना में स्थायी रूप से बस गए। कनिंघम महोदय ने उनकी समानता यूची अथवा तुखारी जाति से की। पी० सी० बाग्ची भी बड़ी खींचातानी करने के बाद उन्हें हूणों से सम्बद्ध करते हैं। उनका विचार है कि वूसुन नामक जाति का हूणों से सम्बन्ध था। वूसुन नाम ही आगे चलकर औसुन बन गया और उससे भी गुसुर और अन्त में गूजर हो गया। इसे अटकल के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार जैक्सन के मत को मानते हुए केम्पवेल साहब गुर्जर और खज़र को एक ही मानते हैं। वे भी चोज़ार या चजार, खज़ील और खोज़ार आदि को गूजर से सम्बद्ध करते हैं। इन तथ्यों में न तो कोई भाषा विज्ञान का ही

५५. 'त्रैमासिक "नागरी प्रचारिणीपत्रिका', वाराणसी, वर्ष ७१, वैशाख संवत् २०२३, अङ्क १, पृष्ठ ८९।

५६. 'कूर्मि क्षत्रियत्व निर्णय', पृष्ठ १९ [संवत् १९९४ वि० में लेखक द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।

सिद्धान्त है और न ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक आधार ही है। डॉ० बी० एन० पुरी का भी यही मत है कि गुर्जर और खजरों का तादात्म्य, जैसा कि जैक्सन और भण्डारकर मानते हैं, समान पदों के एक-सा अन्तिम रूपों—ज़र, ज़ार—पर आधारित है। इस समानता का कोई प्रामाणिक आधार भी नहीं है।

डॉ० पुरी का विचार है कि हूणों के आक्रमण के बाद ही ईसा की छठी शताब्दी में गुर्जरों का एक बारगी उदय होना ही उनके विदेशी होने का कारण है। इसीसे वे पंजाब से लेकर दक्षिण-पूर्व में गंगा-यमुना तक फैल गए थे। डॉ० आर० सी० मजूमदार ने इस मत का खण्डन किया है। इसी प्रकार गुर्जरों और हूणों के तादात्म्य में भी सन्देह ही है। इस मत का खण्डन करते हुए डॉ० पुरी कहते हैं कि यदि दोनों परस्पर सम्बद्ध जातियाँ थीं, तो भारतीय साहित्य में उनका उल्लेख भी एक ही साथ मिलता। महाभारत के भीष्मपर्व में हूणों का उल्लेख हुआ है; परन्तु गुर्जरों का उसमें उल्लेख नहीं मिलता। युअनच्वांग ने गुर्जर राज्य का उल्लेख किया है जिसकी राजधानी भीनमाल थी। बाणभट्ट ने भी हूणों और गुर्जरों में भेद किया है।

डॉ० अनिल चन्द्र बैनर्जी के अनुसार गुर्जरों को विदेशी सिद्ध करने के लिए उनको हूणों से सम्बद्ध करना अनावश्यक है।.....

गुर्जर शब्द का विवेचन करते हुए डॉ० पुरी ने बताया है कि गुर्जर देश था या जाति, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। उनका मत है कि भारतीय साहित्य में गुर्जर नाम किसी विशेष भूखण्ड के लिए प्रयुक्त नहीं हुआ है। इस प्रकार जटिल प्रश्न की उलझनों से निकलते हुए डॉ० पुरी ने गुर्जर-प्रतिहारों को भारतीय ही माना है। वे कहते हैं कि "Thus, there is not a sound reason for thinking that the Gurjaras were of foreign origin." इस प्रकार गुर्जरों को विदेशी मानने का कोई उपयुक्त कारण नहीं है।"...

भारतीय साक्ष्य, प्राचीन साहित्य और अभिलेख उन्हें एकमत से इक्ष्वाकुवंशीय राघवराम और लक्ष्मण से सम्बद्ध करते हुए क्षत्रिय बताते हैं।..."[५७]

५७. 'राजपूत राजवंश', पृष्ठ १०७, १०८, ११०, १११ [सन् १९७० ई० में कैलाश प्रकाशन, ७६ खुर्शेदबाग, लखनऊ-४ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

(४८) डॉ० आर० बी० सिंह एम० ए०, पी-एच० डी०, डिपार्टमेंट ऑफ एनसियण्ट हिस्ट्री, कलचर एण्ड आर्कीयालोजी, गोरखपुर यूनिवर्सिटी लिखते हैं—

"C. V. Vaidya, with the help of this description, has advanced his arguments to contradict the views of Dr. Bhandarkar. He says—"The Indian Gujars are all tall with fine features, though dark in complexion. The tall beautiful Khazars are, on the other hand, very fair and not dark like the Gujars. They (the black Khazars.) are again allied to the Finns and urgas and must be Mongolian in face as indeed the Huns were. But the Gujars can never be said to be Mongolian in face, their features, especially the nose, distinctly Aryan. (Vaidya. H. M. H.I, Vol. I, p. 84)."[४८]

अर्थात्—"श्री सी० वी० वैद्य, इस वर्णन की सहायता से डॉ० भण्डारकर के विचारों का निषेध करते हुए उनके तर्कों को आगे बढ़ाते हैं। वे कहते हैं : भारतीय गूजर यद्यपि चमड़े के रंग में कृष्ण हैं पर वे सभी आकृतियों में सुन्दर व लम्बे हैं। लम्बे सुन्दर खजर दूसरे तरह के बहुत सुन्दर और गूजरों के सदृश काले नहीं हैं। वे (काले खजर) वास्तव में जैसे हूण थे वैसे ही मुखमण्डल में मंगोलियन होना चाहिए। परन्तु मुखमण्डल में गूजरों को मंगोलियन कभी भी नहीं कहा जा सकता है। उनकी आकृतियाँ, विशेषतया नाक से स्पष्ट रूप से आर्य हैं।"

(४९) डॉ० मुरलीधर सिंह चन्देल, एल० टी० एम० एस० लिखते हैं—"गूजर अपने को रामचन्द के बड़े पुत्र से उत्पत्ति मानते हैं।"[४९]

---

४८. 'History of the Chahamanas', p. 30 [सन् १९६४ ई० में नन्दकिशोर एण्ड सन्स, पो० बाक्स न० १७, चौक, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

४९. 'क्षत्रिय वंश-दिग्दर्शन अर्थात् प्राचीन व वर्तमान क्षत्रिय राजवंशावली', पृष्ठ ११२ [सन् १९४० ई० में डॉ० मुरलीधर सिंह चन्देल, आरा (बिहार) द्वारा प्रकाशित, प्रथम बार]।

गूजरों की आवास भूमि

गूजर क्षत्रिय देश के सम्पूर्ण भू-भाग पर यत्र-तत्र बसे हुए हैं किन्तु हिन्दूकुश पर्वत के ढाल पर, गिलगित के आसपास स्वात की घाटी, जम्मू, कश्मीर में, रावलपिण्डी, गूजरखान, गूजरनवाला, गुजरात (प० पाकिस्तान का एक जिला), हसन अब्दाल, पटियाला, आदि जाट रिसायतों में, हिमाचल प्रदेश में, कन्नौज से बाराणसी तक, सिन्ध प्रदेश. मध्य प्रदेश, बुन्देलखण्ड, बरार, खानदेश, मालवा, गुजरात प्रदेश, राजस्थान तथा दिल्ली के चारों ओर, उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में, गूजरों की बड़ी संख्या निवास करती है। आगरे का गूजरघाड़, बुन्देल खण्ड का समथर इनकी बहुसंख्या के साथ गौरव का प्रतीक है। सहारनपुर का पूरा जिला, मुजफ्फरनगर की कैराना तहसील, मेरठ की मवाना तहसील, बुलन्दशहर की सिकन्दराबाद तहसील तथा गंगा-यमुना के दोनों ओर के खादर गूजर जातीय शूरमाओं से भरे पड़े हैं। भीनमाल, वरण (जयपुर), अन्हिलवाड़ा, बढ़वार, कन्नौज आदि में भी जाकर बसे।

गूजरों के प्राचीन और अर्वाचीन राज्य

गूजरों के प्राचीन एवं प्रभावशाली राज्यों में भीनमाल अग्रगण्य था। यह भीनमाल मारवाड़ में था।

भड़ौच, कन्नौज, अन्हिलवाड़ा-पाटण, में इनका प्राचीन राज्य था।

वर्तमान समय में 'समथर राज्य' है।

इस गूजर जाति का सम्पूर्ण में से आधा भाग कश्मीर से लेकर सहारनपुर तक मुसलमान हो गया है किन्तु इस समूह से मुसलमान बना हुआ व्यक्ति अपना परिचय गूजर के नाम पर देता है। उनकी महिलाएँ गूजरी ही कहलाती हैं, जबकि जाट मुसलमान 'मूले' और राजपूत मुसलमान 'मलकाने' या 'रांघड़' कहलाते हैं। इनको शुद्ध करके हिन्दू गूजर राजपूतों में मिला लेना चाहिए। गुर्जर महासभा को शीघ्र ध्यान देना चाहिए।

आगरे से इनका 'वीर गुर्जर' मासिक पत्र भी प्रकाशित होता था।

गुर्जरों के वंश

"अधाने, अठवरिया, अछवान, अम्बावता, अमाना, अन्दाना, अलसर, अलवत, अनवौत, आकिया, अमोठा, अवाना, अवन, ऊना, अवीद, अहमाना, अमटवार, अईख, ओकन, अगंचल, ओहर, इड़ी, आना, उतवार, अठोर, आमल, अहीरथ।

काकतीय, कदम्ब, कारोलिया, कुशावाहे, कालस, कसाना, कुकसवास, कराहने, कटार, कँवार, कलस्याने, कपासिया, कुलहार, काधिला, केरिया, कठले, कटरिये, कोड़रवाल, कारस, कतरिया, कँथेरिया, कड़हिना, कराणे, कुटाहुण, कदाहन, कोलीन, चौहान, पड़िहार, पोसवाल, खटाना, लेड़मा, भड़ाना, धागेड़, तवंर, पवाँर, फागवा, ड़ोई, खाटरा, सरांधना, चाड़, जियावा, बाटवाल, चेची, नेकाड़ी, फारक, नागड़ी, गोरसी, धुड़ुदिया, भाटी, सूती, खोड़बा, रगवा, भातरिया, गाढेला, बाल, टुवाल्या, हड़कसाखीची, लावड़ा, लुरा, बेराड़, सैन्दे, चान्दना, वैरागर, छावरे, बालेसर, हूण, बरोदिया, नरायण, मिटड़ाक, खारी, खूबड़, खेपर, गैराठी, गावेली, चाहल, चाहलवाल, चोहकने, चपराने, चन्दीले, छोंकर, जिन्हड़, जातले, डाहलिया, ड़ोयले, डाक, डढ़ेये, तौगड़, वेतले, धोराते, धाये, धनकरन, नैहराड़े, पापड़े, पीलूवाने, पताल, फागने, बावरे, वैसेले, बाराठे, बगड़ावत, बधार, विधुड़ी, विटन, नौकन, बटार, भड़ाने, भामले, भैंसी, भण्डार, मावई, रावत, मुण्डन, रजान, राजौरिया, सेरोड़िया, खेड़वाल, रेनवाड़, टाखड़िया, पड़ावा, मलिने, ड़ागुर, गेहुआ, सूआ, सुलानिया, खोलवाड़ा, टोंकरवाल, नेवारिया, भूरचनिया, वहचलवाल, मौतरिया, ठोड़ा, डोरेलिया, हाड़ौत, बलान, नड़ोइया, पाड़त, टटवाड़, वीड़वाल, गांगरवास, सेफवार, मोरेलिया, वनपा, बाजर, कौकंण, भदोरये, बहला, बहराना, बैसाहो, वामक, भरेला, बूकर, बदकाना, छाछी, बालेसर, बरसोई, भतार, चमैय्या, चोटकानीदेदी, दापे, दशरेखा, छोला, दोरोटा, घोररूप, गुर्सी, जौहर, जवांरा, जागड़, जाटली, जिन्धर, लोहमारे, कनाना, रखरे, मेवाते, मुदान, मोदर, मुदहन, मुनरेरा, महसी, मोहते, पसुआर, पराओ, पिल्वान, छगना, फूलर, रावल, रोसों, सिकरवार, सरदवा, सरवन, सरधिन, सुकुल, सरांधने, तौहर, पतर, वचर, छोटकाना, हमर, कनास, नन्दवासिया, हेला, दिवेस, खपरास, खमटरसी, नागंरी, दलेल, चोरमार, धिणाय, थामण, नेतरड़ा, गईया, फारगं, गिद, चावड़े, हाकला, गौरेचना, जादव, नारण, रलीदा, वारवाल, पड़ेपुत, चवाया, छोटेकाऐ, जागंड, जवार, पुष्पवार, रेवे, लेवे, मणकस, नगोतिया, बालेसर, बसावत, खोगड़, वहला, वाजर, बन्दूरे, भंगा, दहदिया, दग्ध, कारगं, खाखर, दोरौता, गाँवड़ी, दोहला, गिन्धर, गोधा, गौतम, तमर, तेजावत, चीता, खावड़ा, चन्द्रवंशी, बधार, लादी, चहलवाले, चौककने, जिन्हड़, चावड़े, तेतले, धनकरन, नेहराड़े, पापले, पाताल, विधुड़ी, वीटन, पाण्डु-

पुत्र, राठी, पालीवान, सिसोदिये, मेट मोरे, लौर (लव), खड़ावा, झावला, भंडौर, ड़ाहलिया, सोलंकी, सोलानिया, ठठवारिया, सिपवार, निस्कारिया, अनवौते।"+

गूजरों के भेद-'उपभेद'

१. खरे, २. लौर।

खरे गूजरों के उपभेद—१. सोलनिया, २. ठठवाड़िया, ३. डोरालिया, ४. सिपवार, ५. निस्करिया, ६. सूआ, ७. खरिया।

लौर गूजरों के उपभेद—१. कुम्हार, २. मादी, ३. किसान, ४. सिरांडे, ५. चादरी, ६. कसान, ७. चन्दीजा, ८. रावत, ९. चन्देला, १०. नेवर, ११. भेदी।

खरे गूजरों के साथ लौर गूजर न विवाह सम्बन्ध करते हैं न खानपान।

गूजरों की कुलदेवी देवकी है जिसका मन्दिर वेअर के परमने के झाझ ग्राम में है। भरतपुर के रियासत के गूजर लोग आचार-विचार से श्रेष्ठ हैं।**

राजस्थानीय गूजरों के भेद

१. धिणदा, २. थामड़ा, ३. खटाणा, ४. फगरमा, ५. तंवर, ६. खाटरा, ७. सेची, ८. टीकरा, ९. चांदेला, १०. पोसवाल, ११. धिडमाल, १२. गड़मल, १३. आना, १४. चामड़ा, १५. कसाणा, १६. नेतरडा, १७. जईया, १८. फारंग, १९. मुडन, २०. कोरवाणिया, २१. बागड़ी, २२. गूगला, २३. लादी, २४. बोकण, २५. बढ़ाणा, २६. डोई, २७. चाड़, २८. चवाणा, २९. लीलू, ३०. हाकला, ३१. मौठसर, ३२. गड़ी, ३३. गौरेचाणा, ३४. गिड़, ३५. जाँडा, ३६. रलीदा, ३७. नारण, ३८. पुसवाडा, ३९. लीतरिया, ४०. बसाला, ४१. हाकड़ा, ४२. नेकाडी, ४३. लोड़ा, ४४. बारवाल, ४५. बुग, ४६. चोहाण, ४७. नकीड़ी।***

राजस्थान के गूर्जर खाँप व मुख्य निवास ग्राम या ठिकाना

कोली	हिंडौली (बूंदी राज्य)
दहिया	पूंगलगढ़ (बीकानेर राज्य)
हलसर	जावरा ग्राम (मेवाड़ में)
खटाणां	जूनिया (अजमेर राज्य)

+ 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास', पृष्ठ १७७-१७८।

** 'क्षत्रिय वंश प्रदीप', द्वितीय भाग, पृष्ठ ८२९।

*** वही, पृष्ठ ८३१-३२।

राजस्थान के गूर्जर खाँप व	मुख्य निवास ग्राम या ठिकाना
भड़क	कीटाप खमारिया (अजमेर)
नौकाड़ी	वसूनणी (ठि० सावर, अजमेर)
चाड़	दन्तराय (खैराड़ प्रान्त मेवाड़)
भाटी	मोर सलावल्या (टोडा तहसील जयपुर राज्य)
घरड़	बड़ोदिया (हाड़ौती राज्य)
गेंदा	दाँता (बूँदी राज्य)
डीई (डोया)	सरदारपुरा (उणियारा नागर-चाल में)
खोड़वा	बसनपुरा ,, ,,
बावला (वासला)	खुवासपुरा ,, ,,
बरावल	लाम्बोखोह (बूँदी राज्य)
बगड़वाल	नेहरी (,, ,,)
भांमड़ा	अरणां (कोटा राज्य)
चाँदण	साँकड़दो (बूँदी राज्य)
गूँजल	× ×
लीतस्वा	× ×
सराधना	आसींद (मेवाड़)
चाँदीजा	गूगलेत
मोरसर	ठेला और मोरसरां का खेड़ा
कसाणां	थांणां (बूँदी राज्य)
खाटरा	बांगूदार (खैराड़)
पढ़ियार	नूबी

उक्त खाँपों के अतिरिक्त भी राजस्थान में निम्न खाँपें गूर्जर जाति की पाई गई हैं। यथा थिणदा, फगणा, तंवर, आना, छावड़ा, नैतरड़ीया, जइया, फारंग, बडाणां, चहुवाण, लीलू, हापला, नारन, फूसवाल, हाँकला, चेची, ठीकरा, चाँदेला, पोसवाल, धिड़मल, गड़मल, विदमुडम, कोखाणिया, बागड़ी, गूगला, लादी, वोकण, मोटसर, गढ़ी, गोरेचरणां, गिड, जादू, रलीदा, लीड़ा, बुग, बाजाड़, नकीड़ी, सोती, अबीद, बड़ाह, धांगण, वारवाल, आदि-आदि कई हैं।*

* 'राजस्थानी जातियों का खोज', पृष्ठ ८४-८५।

क्या अहीर विदेशी हैं ?

सभी जातियों का उत्थान-पतन होता रहता है। वर्ण-व्यवस्था के वैदिक व पौराणिक दो पक्ष माने जाते हैं। वैदिक पक्षवाले गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार वर्ण मानते हैं। ब्राह्मण भी पतित हो सकता है। शूद्र भी ब्राह्मण हो सकता है। पौराणिक पक्ष (सनातनधर्मी) जन्म से ही वर्ण-व्यवस्था मानते हैं। जब तक आर्यों का चक्रवर्ती राज्य न होगा तब तक वैदिक पक्ष लागू होना असम्भव है।

आजकल बहुत-सी पिछड़ी जातियाँ अपनी जन्मना वर्ण-व्यवस्था का अनुसन्धान करके अपने वर्ण की घोषणा कर रही हैं।

डॉ० भगवानदास एम०ए०, डी० लिट्० लिखते हैं—"हाल की कुछ घटनाओं से यह विदित होता है कि वर्ण को, अर्थात् वर्ण-नाम को, किस तरह, व्यापक रूप से, कई समुदाय से, बदलने का यत्न हो रहा है। संयुक्त प्रान्त में **कायस्थ** समुदाय के कितने ही पढ़े-लिखे लोग यज्ञोपवीत पहनने लगे हैं, जो द्विजत्व का चिह्न है, और अपने को क्षत्रियों का एक उच्च वर्ण मानते हैं। ऐसे ही, वैश्यों की कई जातियों ने, जिनमें यज्ञोपवीत लुप्त हो गया था, अब उसका धारण पुनः आरम्भ किया है। मराठा 'प्रभु' जाति की भी ऐसी ही स्थिति प्रतीत होती है। वे पहिले एक प्रकार के कायस्थ वर्ण के समझे जाते थे। अब अपने को मैंने कहते सुना है कि वे **'लोहाना क्षत्रिय'** हैं। यद्यपि उनकी गणना अब तक वैश्यों में होती रही है। संयुक्त प्रान्त के **कुर्मी** और **अहीर** अब अपने को क्रमशः कूर्माचलीय और यादव क्षत्रिय पुकारने लगे हैं; कोई तो अपने को कूर्माचलीय ब्राह्मण भी कहते हैं। **'जायसवाल'** जाति का पहिले उपवर्ण नाम **'कलवार'** था; जो अधिकतर शराब बनाने का पेशा करते थे; किन्तु अब उनमें, बहुत से जमींदार, वकील, प्रोफेसर आदि हो गये हैं; कुछ

महाजनी अर्थात् लेन-देन का व्यापार करते हैं; और कुछ अन्य रोजगार और पेशे उठाये हुए हैं, अब उनमें यह यत्न हो रहा है, कि सबके-सब जायसवाल, 'हैहय-क्षत्रिय' पुकारे जाएँ, कुछ पण्डित विद्वानों ने उनको इस ओर उत्साहित किया है। ...संयुक्त प्रान्त का एक समुदाय अपना वर्ण, जो अपने को तीस-चालीस वर्ष पहिले 'धूसर बनिया' पुकारता था, अब अपने को 'भार्गव ब्राह्मण' कहने लगा है। ...१९३१ ई० की 'सेन्सस रिपोर्ट' (मनुष्य-गणना विवरण) से मालूम होता है कि 'अहीर', 'ग्वाला', 'गोप' आदि उपजातियों के पशु-पालक सभी अब अपने को 'यादव' कहने लगे हैं। कुछ 'सोनारों' ने १९२१ ई० में अपने को क्षत्रिय या राजपूत लिखाया, १९३१ में ब्राह्मण या वैश्य। कुछ 'नाई' (नापित, हज्जाम) लोगों ने (संयुक्त प्रान्त में) १९२१ में अपने को 'ठाकुर', १९३१ में 'ब्राह्मण' लिखाया। तथा 'नापितों' ने (बंगाल में) १९२१ में 'वैश्य', १९३१ में 'ब्राह्मण'। कुछ 'कहारों' ने १९२१ में 'वैश्य', १९३१ में 'क्षत्रिय'; कुछ 'सूत्रधारों' सुनाड़ों ने (बंगाल में), १९११ में 'ब्राह्मण', इत्यादि...।"[1]

इस प्रकार युगानुसार सभी अपनी-अपनी उन्नति में अग्रसर हो रहे हैं।

यहाँ 'आभीर' (अहीर) की उत्पत्ति व उनकी वर्ण-व्यवस्था के सम्बन्ध में अनुन्धान किया जाता है।

'आभीर' कौन हैं ?

'आभीर', अहीर, ग्वाला, गोप, गोपाल, घोष, घोषी, गद्दी—ये सभी एक ही हैं, केवल नाम-भेद हैं, वंश-भेद नहीं है।

कुछ लेखक 'आभीर' (अहीरों) को विदेशी, शूद्र, महाशूद्र कहते हैं; यथा—"गीता में गोविन्द शब्द आया है। इसे कुछ विद्वान् 'गोपेन्द्र' शब्द का प्राकृत रूप बताते हैं।*

...भण्डारकर कहना चाहते हैं कि ईसवी सन् के प्रारम्भ में कृष्ण के बाल्य-

---

१. 'पुरुषार्थ' पृष्ठ ४८३, ४८४ 'वर्ण-नाम-परिवर्तन के प्रवर्त्तमान प्रत्यक्ष' शीर्षक [सन् १९५३ ई० में सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, तीसरा संस्करण]।

* ग्रियर्सन ने इस शब्द को 'गोपेन्द्र' शब्द से निकला हुआ बताया है (ज० रा० ए० सो; सन् १९०७)।

काल में गोकुलवास की कथा प्रचलित नहीं होगी। कृष्ण आभीर नामक एक घुमक्कड़ जाति के बाल-देवता हैं।...इन्हें महाभारत में डाकू और म्लेच्छ कहा गया है। इन्होंने अर्जुन पर, जबकि वे वृष्णियों की स्त्रियों को लिये जा रहे थे, आक्रमण किया था। उस समय ये पंचनद के पास रहते थे। विष्णुपुराण और वराहमिहिर ने इन्हें अपरान्त (कोंकण) और सौराष्ट्र के आसपास बताया है। वर्तमान अहीर इन्हीं आभीरों की सन्तान हैं। केनेडी के मत से श्रीकृष्ण जिस घुमक्कड़ जाति के बाल-देवता हैं उनकी वर्तमान सन्तान हैं जाट और गूजर। काठियावाड़ में पाई गई एक लिपि से जाना जाता है कि शक १०२ में आभीर राज्य करने लगे थे।... वायुपुराण में, जोकि बहुत पुराना पुराण माना जाता है, आभीर राजाओं की वंशावली का उल्लेख है।...[2]

सेठ बुद्ध प्रकाश, एम० ए०, एल-एल-बी०, एम० आर० ए० ए० का 'विश्व-वाणी' मासिक पत्रिका, प्रयाग में 'आभीर' शीर्षक एक लेख प्रकाशित हुआ था। उस लेख में लेखक महोदय लिखते हैं—"...इन शूद्रों और आभीरों का इतना घनिष्ठ सम्बन्ध था कि सामान्य भाषा में इनके नाम साथ लिये जाते थे। महाभाष्यकार पतञ्जलि ने पाणिनि-सूत्र (१, २, ७२) पर कात्यायन के वार्तिक सामान्यविशेषवाचिनोश्च द्वन्द्वभान् सिद्धम् के अपवादस्वरूप 'शूद्राभिरिम्' का उदाहरण दिया है और लिखा है कि आभीर और शूद्र विभिन्न जातियाँ थीं, इससे सिद्ध होता है कि आभीर और शूद्र दस्यु संस्कृति के पददलित लोग थे।..."[3]

डॉ० दिनेशचन्द्र सरकार लिखते हैं—"आभीर विदेशी लोग जान पड़ते हैं, जिन्होंने शकों से कुछ पहले, अथवा उन्हीं के साथ भारत में प्रवेश किया। उनके

---

२. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेजी कृत 'सूर साहित्य', पृ० २०-२१ [सन् १९७३ ई० में राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, ८ फँज बाजार, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

३. मासक पत्र 'यादव' वाराणसी, वर्ष २२, अक्तूबर १९४७ ई०, अंक २, पृष्ठ ९ से १६ तक में उद्धृत व आलोचना।
['महाशूद्रशब्दो ह्याभीरजातिवचनस्तत्र तदन्तविधिना टाप् प्राप्तः प्रतिषिध्यते—काशिका ४।१।४ = यहाँ आभीरों को 'महाशूद्र' कहा गया है—लेखक]।

नाम (आभीर) को हिरात और कन्दहार के बीच 'अविखान' से जोड़ने को जी ललचाता है।"[४]

श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य, एम० ए० ने आभीरों को भारतीय किन्तु द्रविड़ माना है।

बीम्स नामक लेखक ने काल्पनिक व्युत्पत्ति के आधार पर आभीर शब्द की उत्पत्ति अहि+हीर से मानी है। अहि का अर्थ साँप और हीर का अर्थ प्रेमी अर्थात् साँप से प्रेम करनेवाला।[५]

कर्नल वाकर ने अहीर शब्द की उत्पत्ति 'अहेरी' शब्द से की जिसका अर्थ होता है 'अहेर' (=आखेट) अथवा शिकार करनेवाला।[६]

श्री ऐरकिन्सन भी अहीर शब्द की उत्पत्ति अहि (सर्प) से मानते हैं और इसका सम्बन्ध अहिच्छत्रा (बरेली जिले में स्थित) से जोड़ते हैं।[७] उन्होंने हीरा नामक एक पूर्वज द्वारा सर्प पालने की किंवदन्ति दी है।

प्रो० हेमचन्द राय चौधरी ने 'आभीर' शब्द की द्रविड़ उत्पत्ति सुझाई है।[८]

श्री वी० कनकसभाई पिल्लै ने तामिल शब्द 'अभिर' से 'आभीर' की व्युत्पत्ति बतलाई है जिसका अर्थ 'गाय' है। वे तमिलनाडु के 'आयर' को 'आभीर' से अभिन्न मानते हैं।[९]

श्री एल० डी० बार्नेट ने 'आयर' की समस्या पर विचार करते हुए यह मत व्यक्त किया है कि " 'आयर' आभीरों के पूर्वरूप हैं जो पाण्ड्य, चोल और चेर (केरल) प्रदेशों में बसे हुए थे।"[१०]

---

४. हिस्ट्री एण्ड कलचर आफ इण्डियन पीपुल्स, जिल्द २ : दी एज ऑफ इम्पीरियल युनिटी, पृष्ठ २२०।

५. श्री विमल चरण लॉ, एम० ए०, पी-एच०डी० कृत 'ट्राइब्स इन ऐंश्यण्ट इण्डिया', पूना, १९४३ ई०, पृष्ठ ७९, इलियट कृत 'रेसेज ऑफ नार्थवेस्टर्न इण्डिया', जिल्द १, लन्दन, १८५९ ई०, पृष्ठ ३०५।

६. वही।

७. 'स्टेटिस्टिकल डिस्क्रिप्शन एण्ड हिस्टोरिकल एकाउण्ट ऑफ नार्थ-वेस्टर्न प्राविंसेस ऑफ इण्डिया', जिल्द १, इलाहाबाद, १८७४ ई० पृष्ठ २६८।

८. 'अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैष्णवाइट सेक्ट', कलकत्ता, १९२० ई०, पृष्ठ ९१।

९. 'तमिल १८०० ईयर्स एगो', १९०४ ई०, मद्रास, पृष्ठ ५७।

१०. 'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया', जिल्द १, पृष्ठ ५९६।

डॉ० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या शंका में है कि 'आभीर' में का अक्षर 'अ' द्राविड़ शब्द 'अ' क्या 'आयर' में भी सूचित करता है?[११] **डॉ जी० वी० टैगोर** इनका समर्थन करते हैं।

तमिलनाडु के 'आयर' इन्हीं यादव आभीरों के वंशज हैं। तमिल के संगम-साहित्य में इस परम्परा का स्पष्ट उल्लेख है कि 'आयर' पाण्ड्यों (पाण्डवों के वंशज) के साथ दक्षिण में गये।[१२]

इससे सिद्ध होता है कि 'आयर' उत्तर भारत के आभीर-यादव हैं। सो सुदूर दक्षिण में जाकर बस गये थे और 'आयर' शब्द 'आभीर' का ही तमिल रूप है।

महाभारत, आश्वमेधिक पर्व, अ० २९। ८३०-८३२ के अनुसार द्रविड़, आभीर, पौण्ड्र, शबर अपने क्षत्रियत्व के कर्त्तव्य से च्युत होने के कारण शूद्र (वृषल) बन गये।

मनुस्मृति के अनुसार आभीरों की उत्पत्ति ब्राह्मण पिता व अम्बष्ठ स्त्री से है।[१३]

श्री हेमचन्द्र की सम्मति है कि आभीर गवाद्युपजीवी थे, अतः वे वैश्य थे।[१४]

उपर्युक्त मतों पर विचार—

कतिपय इतिहास लेखक जो भारत की जाति-परम्परा और सम्पूर्ण जातीय इतिहास का महत्त्व नहीं समझते वे कुछ शिलालेख और असम्बद्ध कथनों के आधार पर आभीरों के उद्गम के सम्बन्ध में अनुमानिक मतों का समर्थन करते हैं। कर्नल टॉड, बी० ए० स्मिथ आदि पाश्चात्य तथा डॉ० भाण्डारकर आदि

---

११. डॉ० चाटुर्ज्या व टैगोर ने अपने एक पत्र में डॉ० बुद्धप्रकाश को जे० बी० आर० एस० XL, पृष्ठ २५८-५९ में अपना मत प्रकट किया है।

१२. कलितोगै, पृष्ठ १०४, द्रष्टव्य एस० जे० हेरास : स्टडीज इन दि प्रोटो इण्डो मेडिटेरेनियन कलचर, जिल्द १, बम्बई, १९५३ ई० पृष्ठ ११९।

१३. 'मानवधर्मसूत्र विद कमेण्ट्री ऑफ गोविन्दराज', (सम्पादित श्री वी० ए० माण्डलीक), बम्बई, १८८६, जिल्द २, पृष्ठ १२८८।

१४. 'अभिधान चिन्तामणि ऑफ हेमचन्द्र', (सम्पादित बोहटलींक व रीऊ), एस० टी० पीट्सबर्ग, १८४७ ई०, पृ० ५२२।

भारतीय विद्वानों ने आभीरों को विदेशी, म्लेच्छ व अनार्य आदि सिद्ध करने का प्रयास किया है। ये सब कपोलकल्पनाएँ हैं।

"अन्धाः शकाः पुलिन्दाश्च चूलिका यवनास्तथा।
कैवर्त्ताभीरशबराये चान्ये म्लेच्छसम्भवाः।"
—[मत्स्यपुराण, अ० ५०, श्लोक ७५-७६][१५]

ततस्ते पापकर्माणो लोभोपहृतचेतसः।
आभीराः मन्त्रयामासुस्समेत्यात्यन्तदुर्मदाः॥"
—[विष्णुपुराण, ५।३८।१४][१६]

तुलना करो (महाभारत, मौसलपर्व, अ० ७, श्लोक ४७)[१७]

यहाँ आभीरों को म्लेच्छ, दस्यु, पापकर्मी कहा है।

श्री देवदत्त भाण्डारकर आभीरों के लिए 'म्लेच्छ' का 'अर्थ' विदेशी (Foreigner) करते हैं।[१८] उनकी सम्मति है कि आभीर विदेशी घुमक्कड़ थे जिन्होंने भारतवर्ष में आक्रमण किये।

श्री वी० ए० स्मिथ, ए० बी० कीथ और डब्लू० डब्लू टर्न, डॉ० भाण्डारकर से सहमत होते हुए भी भारत में इनका प्रवेश विभिन्न कालों में मानते हैं।[१९]

डॉ० भाण्डारकर का सिद्धान्त 'म्लेच्छ' का अनुवाद सही प्रमाणित होता है।

श्री मोनियर विलियम्स लिखते हैं—"The term Mlechchha means, a 'Foreigner', 'non-Aryan', unbeliever of Hindu rituals, and non-

---

१५. संवत् २०११, ५ क्लाइवरो, कलकत्ता, मोर संस्करण प्रथम, पृष्ठ १३८।
१६. संवत् २०१८ वि०, गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित, पंचम संस्करण, पृष्ठ ४९४।
१७. संवत् २०२१ में गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ ६४८० (महाभारत, षष्ठ खण्ड)।
१८. 'फॉईन एलीमेण्ट्स इन दी हिन्दू पोपुलेशन', इण्डियन एण्टीक्वरी, XL, पृष्ठ १६।
१९. 'Smith, V.A., 'Early History of India', Oxford, 1924, p. 200; Keith, A.B., 'History of Sanskrit literature', Oxford 1928, pp. 33-34; Tarn, W.W., 'The Greeks in Bactria and India', London, 1928, p. 172.

Sanskrit speaking man."[२०]

अर्थात्—'म्लेच्छ' का अर्थ हैं—विदेशी, अनार्य, हिन्दू व्यावहारिक संस्कार का अविश्वासी, संस्कृत न बोलनेवाला व्यक्ति।

महाकाव्य व पुराणों में 'म्लेच्छ' का अर्थ 'विदेशी' नहीं माना गया है। मोनियर विलियम्स का अर्थ भ्रमपूर्ण है।

शतपथब्राह्मण में 'म्लेच्छ' का अर्थ अशुद्ध उच्चारण करनेवाला माना गया है।

दण्डी (काव्यादर्श, ३६) संस्कृत न बोलनेवाले को 'आभीर' कहते हैं। वे आर्यों के साथ रहने लगे और वैष्णवमत में हो गये। देखिए—

"किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कसा आभीरकङ्का यवनाः खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः शुध्यन्ति प्रभविष्णवे नमः।"
—[श्रीमद्भागवत महापुराण, २।४।१८][२१]

पतञ्जलि का महाभाष्य भी आभीरों के विदेशी सिद्धान्त को नहीं मानता है।

बौद्ध, जैन व ग्रीक स्रोतों से भी भारतीय इतिहास के किसी भी काल में भारत में आभीरों का न आना सिद्ध होता है।

कीथ ने आभीरों के आगमन की तिथि १५० बी० सी० पूर्व बतलायी है जब कि डब्लू०डब्लू० टर्न अलकजेण्डर (सिकन्दर) की मृत्यु के तुरन्त बाद बतलाता है। द्वितीय शताब्दी बी० सी० में पतञ्जलि का कथन है कि आभीर एक जातिरूप में भारत में बस गये।

विलियम हण्टर आभीरों को सीथियन इसलिए कहते हैं कि ये अपने भाई की स्त्री से पुनर्विवाह कर लेते हैं।[२२] हण्टर का यह विचार संदिग्ध है क्योंकि वेदादि शास्त्रों व स्मृतियों में विधवा विवाह का समर्थन पाया जाता है।[२३]

---

२०. 'A Sanskrit-English Dictionary', Oxford, 1899, p. 837.
२१. सन् १९५२ ई० में पण्डित पुस्तकालय, राजा दरवाजा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ १२८।
२२. Ethnographical Survey of Bombay, 1903, p. 3.
२३. पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम० ए० कृत 'विधवा विवाह मीमांसा' (चाँद कार्यालय, प्रयाग); पं० बदरीदत्त जोशी कृत 'विधवोद्धार मीमांसा' आदि द्रष्टव्य हैं—लेखक।

आजकल अपने को ऊँची कहनेवाली जातियों में पुनर्विवाह प्रचलित है।

द्वितीय शती ई० पू० के पूर्व के किसी भी साहित्यिक ग्रन्थ व अभिलेख में आभीरों का उल्लेख नहीं पाया जाता है। पाणिनि के व्याकरणग्रन्थ अष्टाध्यायी (पाँचवीं शताब्दी ई० पू०) में 'आभीर' शब्द नहीं है। इससे पूर्व पतञ्जलि के महाभाष्य (द्वितीय शती ई० पू०) में आभीरों का उल्लेख है। काशिका ४।१।४ में आभीरों की चर्चा है।

दूसरी शती ई० पू० के पूर्व आभीरों का कहीं उल्लेख नहीं है, यह सत्य नहीं है। रामायण, महाभारत दोनों में 'आभीरों' का उल्लेख है। ये दोनों ही महाकाव्य विशेषतः पहला पाँचवीं और दूसरी शती ई० पू० के मध्य में अपना वर्तमान रूप प्राप्त कर चुके थे। अशोक के समय में आभीरों का अलग कोई राज्य अथवा गणतन्त्र नहीं था, जिसका उल्लेख अशोक के अभिलेखों में होता। आभीरों के निवास-स्थान सबके-सब अशोक के साम्राज्य के अन्तर्गत थे। पतञ्जलि द्वारा आभीरों का उल्लेख नैसर्गिक है, क्योंकि वे पुष्यमित्र शुंग के पुरोहित और गोनर्द के रहनेवाले थे जिसके आसपास बड़ी संख्या में आभीर रहते थे।

आभीर मालवा, गुजरात व सौराष्ट्र में शकों के निकट इसलिए नहीं पाये गये कि वे शकों के साथ बाहर से आये थे, बल्कि महाभारत युद्ध के पूर्व से ही यादवों की बहुत बड़ी संख्या इन प्रदेशों में बसी थी। एक-क्षत्रियों की सेना में सेनापति बनना अथवा उनका सामन्त बनना इसी प्रकार उनको शक जातीय सिद्ध नहीं करता जिस प्रकार राजपूतों का मुगल सेना में सेनापति बनना राजपूतों का मुगल होना सिद्ध नहीं करता।

'म्लेच्छ' शब्द पहले विदेशियों के लिए प्रयुक्त होता था, पीछे इसका अर्थ नैतिक हो गया। शक व कुशाण आक्रमणों की भारतीय इतिहास में स्पष्ट चर्चा है, किन्तु आभीरों के आक्रमण का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। इसलिए **आभीरों को म्लेच्छ मानना धार्मिक आक्रोश वा भक्ति के महत्त्वदर्शन के अतिरिक्त और कुछ नहीं।**

यादवों का एक समय बहुत बड़ा राजनीतिक व सैनिक संघ था। जब भी इस प्रकार के संघों का विघटन होता है उनमें सैनिक और संघटन-सम्बन्धी शक्तियाँ शेष रह जाती हैं, जो आभीरों में अभी तक अवशेष हैं। सैनिक समूह कभी-कभी बिगड़कर दस्युओं का झुंड भी बन जाता है। यही कारण है कि **नैतिक आक्रोश में**

आभीरों को कहीं-कहीं दस्यु भी कहा गया है। परन्तु 'दस्यु' शब्द वर्ण अथवा जाति का द्योतक नहीं, एक प्रकार की **नैतिक गाली** है।

कहा जाता है कि पूर्वी ईरान व मध्य एशिया से बहुत बड़ी संख्या में आभीरों ने शकों व कुशाणों के साथ भारत में प्रवेश किया। क्या इसका तात्पर्य यह है कि आभीरों की संख्या शकों और कुशाणों से भी अधिक थी? यदि उनकी संख्या और शक्ति अधिक थी तो पुनः शकों व कुशाणों के बदले इन आक्रमणों को भारतीय इतिहास और साहित्य में आभीर-आक्रमण क्यों नहीं कहा गया? तथ्य तो यह है कि इन आक्रमणों के पूर्व से ही यादव-आभीरों के रूप में अधिक संख्या में आभीर उत्तर, पश्चिमोत्तर और पश्चिम भारतवर्ष में बसे हुए थे। इसीलिए शकों व कुशाणों का प्रथम सम्पर्क इन्हीं से हुआ और विदेशी आक्रमणों के दबाव के कारण इन्हें भारत के सुदूर प्रदेशों में जाना भी पड़ा। महाराष्ट्र, कर्णाटक से लेकर बिहार-बंगाल, असम, पंजाब, उत्तर प्रदेश, उत्कल तथा तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश में आभीर फैले हुए हैं। सारे भारतवर्ष में इनकी संख्या लगभग चार करोड़ है। महाभारत के समय इनकी संख्या साठ करोड़ पहुँच गई थी, अतः आभीरों को विदेशी मानना एक विडम्बना मात्र है। आभीर भारतवर्ष के मूल आर्यों के ही वंशज **चन्द्रवंशी** क्षत्रिय तथा मूलतः भारतीय हैं।

पंजाब में आभीरों का विस्तार पश्चिमोत्तर से न होकर दक्षिण-पूर्व से हुआ। पुराणों के अनुसार ययाति ने यमुना व चम्बल के बीच का प्रदेश यदु को दिया था। पुनः क्रमशः मथुरा के आसपास के प्रदेश पर उन्होंने अपना अधिकार जमाया।

'हरयाणा' अहिराणा का अपभ्रंश माना जाता है, क्योंकि यह अहीर व जाटों की बस्ती विशेष है।

आभीर, अहीर, ग्वाला, गोप, गोपाल, घोष, पर्यायवाची हैं।

इन शब्दों के वास्तविक अर्थ

(१) **पं० वामन शिवराम आप्टे** लिखते हैं— "आभीरः [आ समन्तात् भियं राति–रा + क तारा०] ग्वाला···" [संस्कृत-हिन्दी कोष, पृष्ठ १५४][२४]

---

२४. 'सन् १९६६ ई० में मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित।

(२) पं० जयशंकर जोशी द्वारा सम्पादित कोष में लिखा है—"आभीरः पुं०[आ समन्ताद् भियं राति, रा दाने, आत इति क] गोपः। 'अहीर' इति भाषा।"
—[हलायुधकोषः, पृष्ठ १५०][२५]

(३) चतुर्वेदी पं० द्वारका प्रसाद शर्मा, एम०आर०ए०एम० व पं० तारिणीश झा व्याकरण-वेदान्ताचार्य लिखते हैं—"आभीर (पुं०) [आ सम्यक् भियं राति इति विग्रहे आभी √रा+क] अहीर [संस्कृत-शब्दार्थ कौतुम्भ, पृष्ठ १९२][२६]

(४) श्री नगेन्द्रनाथ वसु 'प्राच्यविद्यामहार्णव' 'सिद्धान्त-वारिधि', एम०आर० ए० एस० तथा हिन्दी के विद्वान् लिखते हैं—"आभीर (सं० पुं०) आ सम्यक् भियं भीतिं राति दधाति, रा—क। १. गोप, अहीर··· [हिन्दी विश्वकोष, खण्ड २४, पृष्ठ ५९६][२७]

पुनः, "अहीर (सं०पुं०) आभीर शब्दस्य निपा० साधु। आभीर, ग्वाला। यह गाय-भैंस पालते और दूध-दही बेचते हैं"—[हिन्दी विश्वकोष, खण्ड २४, पृष्ठ ४६८][२८]

इन उपर्युक्त कोषकारों की दृष्टि में आभीर, गोप, ग्वाला, अहीर सब एक ही हैं।

(५) आभीर—(सं० पुं०) = गोप, अहीर, ग्वाला।
—[भार्गव, आदर्श हिन्दी शब्दकोश, पृष्ठ ७५][२९]

(६) आभीर—(सं० पुं०) = अहीर, गोप" —[राष्ट्रभाषा-कोष, ५६][३०]

---

२५. सन् १९६७ ई० में हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण।

२६. सन् १९७५ ई० में सर्वश्री रामनारायण लाल वेणी प्रसाद, प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, पंचम संस्करण।

२७. सन् १९१५ ई० में ९ विश्वकोष लेन, बाग बाजार, कलकत्ता, सम्पादक द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण।

२८. वही।

२९. मासिक पत्र 'लोकालोक' दिल्ली का 'यादवाङ्क' वर्ष १८, वैशाख २०३५, मई १९७८ ई०, अङ्क २ पृष्ठ १३।

३०. वही।

(७) श्री रामचन्द्र वर्मा लिखते हैं—"आभीर संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री आभीरी] १. अहीर। ग्वाल। गोप।·····—[संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर, पृष्ठ १२३][३१]

पुनः—अहीर-संज्ञा पुं० [सं० आभीर] [स्त्री अहीरिन] एक जाति जिसका काम गाय-भैंस रखना और दूध बेचना है। ग्वाला।
[संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर, पृष्ठ १०४][३२]

चतुर्वेदी पं० द्वारका प्रसाद शर्मा, एम० आर० ए० एस० लिखते हैं—"अहीर तद्० (पुं०) ग्वाल, अहीर, गोपाल*। "आभीर तद्० (पुं०) गोप, अहीर, ग्वाल···"*

(८) "आहुक वंशात्समुद्भूताः आभीरा इति प्रकीर्तितः। (शक्तिसंगमतन्त्र)
अर्थात्— महाराज आहुक से जिनकी उत्पत्ति हुई, वे आभीर (अहीर) कहलाते हैं।[३३]

(९) "आहुक जन्मवन्तश्चाभीराः क्षत्रिया अभवन्।"
—[जातिविवेकाऽध्याय][३४]

अर्थात्—आहुक राजा के वंश में जिन्होंने जन्म लिया, वे आभीर क्षत्रिय कहलाये।

'गोप' शब्दोत्पत्ति

'गोप' व गोपाल शब्द एक व्यवसायिक है जो दुग्धवाले व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है।

---

३१. संवत् २००२ वि० में काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, चतुर्थ संस्करण।

३२. वही।

* "हिन्दी-शब्दार्थ-पारिजात" पृष्ठ ५७ [सन् १९३३ ई० में सर्वश्री राम नारायण लाल बुकसेलर, प्रयाग द्वारा प्रकाशित, छठा संस्करण];

* वही, पृष्ठ ६८।

३३. 'श्री मन्नालालजी 'अभिमन्यु' एम०ए० कृत 'अहीर वंश-प्रदीप' पृष्ठ २४ [संवत् १९९५ वि० में मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स, संस्कृत बुक डिपो, कचौड़ी गली, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, तृतीय संस्करण]।

३४. वही, पृष्ठ २४।

कलचुरी, चालुक्य और देवगिरि के यादवों के लिए कोंकण और खानदेश के शासक आभीर के लिए ग्वाला शब्द प्रयुक्त हुए हैं।[३५]

आभीर व्यवसाय से ग्वाला थे। इसलिए कलचुरि, चालुक्य व यादवों के लिए ग्वाला शब्द का व्यवहार स्वतन्त्र रूप से हुआ है।

महाकाव्य, पुराणों में आभीरों के लिए गोप, गोपाल और घोष शब्दों का व्यवहार हुआ है। महाभारत, मौसलपर्व व विष्णुपुराण में आभीर व गोपाल का व्यवहार है।

बुद्धस्वामी ने अपने 'बृहत्कथाश्लोकसंग्रह', ४८-५० में आभीर व गोप शब्दों का व्यवहार किया है।[३६]

ब्रह्मपुराण (अ० १३, श्लो० ४८-५०) विशेषतया गोपाली व घोषकन्या, कृष्ण के प्रसिद्ध शत्रु कालयवन की माता का व्यवहार करता है।[३७]

आभीर वंश नाम है जबकि घोष उनकी बस्ती का अर्थ है। इस नाम का कारण है कि आभीरों के निवासस्थान से प्रकट होता है कि आभीर चरवाहे अपने पशुओं के लिए चिल्लाते रहते हैं। इस प्रकार ग्राम के कोलाहलपूर्ण स्थान को 'घोष' कहा गया है। गाय पालना उनका व्यवसाय है इसलिए गोपाल व घोष शुद्ध व्यवसायिक है, वंशसूचक नहीं है।

श्री अमरसिंहजी लिखते हैं—"गोदुग्गोष्ठपती **गोपौ**, हरविष्णू वृषाकपी।"

—[अमरकोषः तृतीयकाण्डे, नानार्थवर्गः श्लोक १३०]

पं० विश्वनाथ व्याकरणाचार्य व्याख्या करते हैं—गोपः (गां पाति इति कः) इस १. पुं० शब्द के गाय दुहनेवाला, गोगृह का स्वामी (**यादव, अहीर**), देश या वंश का अध्यक्ष ३ अर्थ हैं।"[३८]

---

३५. 'नाट्यसूत्र आफ भारत' (पं० केदारनाथ द्वारा सम्पादित), निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, १९४३ ई०, अध्याय ३।

३६. 'The Abhiras : Their History and Culture', p. 22 [सन् १९६२ ई० में फैक्युलिटी ऑफ आर्ट्स, महाराजा सयाजीराव यूनिवर्सिटी ऑफ बड़ौदा, बड़ौदा द्वारा प्रकाशित]।

३७. वही, पृष्ठ २२।

३८. सन् १९७६ ई० में मोतीलाल बनारसीदास, चौक वाराणसी-१ द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।

"गोपो ग्रामौघ-गोष्ठाधिकृतयोर्वल्लवे। इति विश्वः।"[३९]

अर्थात्—बहुग्रामाधिपति, गोपति, गोष्ठाधिपति, पृथिवीपति को गोप कहते हैं।

गोप : (स्त्री०-पी) [गुप्+अच् घञ् वा]। रक्षक, रक्षा करनेवाला···

[आप्टेकृत 'संस्कृत हिन्दी कोष' पृष्ठ ३५५]

गोप—(वि०) [√गुप्+अच्] रक्षक, रक्षा करनेवाला।

—[संस्कृत-शब्दार्थकौस्तुभ, पृष्ठ ४१५]

"गावश्चारयतो गोपा···" [श्रीमद्भागवत महापुराण, १०।८३।४३]

यहाँ गाय चरानेवाले को 'गोप' कहा गया है।

अहीर—शब्द का अर्थ साँप से प्रेम करनेवाला अर्थ ऊपर प्रदर्शित किया गया है जो भ्रमपूर्ण है।

'अहीर' अहि' और 'ईर' इन दो शब्दों से बना है। अहिं ईरयति ईरयते वा स अहीरः=अहि कहते हैं सर्प को और ईर के अर्थ मारने का है, सो जो सर्प को मारे वह अहीर अर्थात् नागवंशियों की राजनीतिक सत्ता को नष्ट करनेवाला। और दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि 'अहि' अर्थात्-बुरे आचरणवाले (अधर्मी) पुरुषों को जो शस्त्रादि से 'ईर' यानी हिलावे अर्थात् अनका बल कम करे, वह अहीर है।[४०]

'नाग' जाति को बहुत-से लोग सर्प (साँप) समझ लेते हैं। यहाँ 'अहि' का अर्थ साँप, नाग ठीक ज्ञात होता है।

'यादव' कौन थे ?

अहीरों के लिए 'यादव' शब्द भी प्रयुक्त होता है। आजकल सभी अहीर अपने को 'यादव' ही कहते हैं।

चन्द्रवंश में 'यदु' नामक राजा हुए। 'यदु' का अपत्यवाचक 'यादव' हुआ अर्थात् यदु के वंशज।

'यादव'='श्रीकृष्ण' को भी कहते हैं।

'श्रीकृष्ण' व 'बलरामजी' को भी 'ग्वाल' कहा गया है—[जरासंध अपनी सेनाओं से कहता है :]

---

३९. वही, पृष्ठ ९९।

४०. 'अहीरवंश-प्रदीप', पृष्ठ ३२

"पत्तिनो भुवि पैकस्य गोपस्याल्पबलीयसः।
भीताः किं विनिवर्तध्वं धिगेतां क्षत्रवृत्तिताम् ॥"
—[श्री महाभारते खिलभागे, हरिवंशे विष्णुपर्व, अ० ४३ श्लोक २५]

"क्षिप्रं समभिवर्तन्तां मम वाक्येन नोदिताः।
यावदेतौ रणे गोपौ प्रेषयामि यमक्षयम् ॥"
—[श्री महाभारते खिलभागे, हरिवंशे विष्णुपर्व, अ० ४३ श्लोक २६]

पं० रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम' कृत टीका—यह ग्वाला अत्यन्त बलहीन है, पैदल है और पृथ्वी पर अकेला खड़ा है। भला, इससे भयभीत होकर तुम लोग क्यों भाग रहे हो? तुम्हारी इस क्षत्रियवृत्ति को धिक्कार है ॥२५॥ मेरी आज्ञा से प्रेरित तुम सब लोग शीघ्र ही शत्रुओं पर आक्रमण करो तब-तक मैं रणभूमि में इन दोनों ग्वालों को मारकर यमलोक भेज देता हूँ "२६।"[४१]

"गदाभिश्चैव गुर्वीभिः क्षेपणीयैश्च मुद्गरैः।
अर्द्यमानौ महेष्वासौ यादवौ न चकम्पतुः ॥" ३४
—[हरिवंशपुराण, विष्णुपर्व, अ० ४३]

पं० रामनारायण दत्त शास्त्री—शत्रुओं की भारी गदाओं, गोफानों या ढेलवासों तथा मुद्गरों की मार से पीड़ित होते हुए भी वे दोनों महाधनुर्धर यादववीर कम्पित नहीं हुए।[४२]

यहाँ श्रीकृष्ण व बलरामजी को गोप, यादव कहा गया है। टीकाकार भी 'गोप' का अर्थ 'ग्वाला' करते हैं, अतः यादव, गोप, ग्वाला एक ही प्रतीत होते हैं।

एवं ककुद्मिनं हत्वा स्तूयमानः स्वजातिभिः।
विवेश गोष्ठं सबलो गोपीनां नयनोत्सवः ॥१५॥
—[श्रीमद्भागवत महापुराण, अ० ३६]

साहित्य शास्त्री पं० रामतेज पाण्डेयकृत 'सामयिकी' भा० टीका—

"गोपियों के नयनों को आनन्दित करनेवाले कृष्ण इस तरह वृषभासुर को

---

४१. महाभारते खिलभाग हरिवंश (श्रीहरिवंशपुराण) हिन्दी टीका सहित, पृष्ठ ३७६ [संवत् २०२४ वि० में गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।
४२. वही, पृष्ठ ३७७।

मारकर अपने जाति भाइयों से प्रशंसित होते हुए बलरामजी के साथ व्रज में प्रविष्ट हुए।"[४३]

यहाँ गोपों को भागवतकार ने उनका जाति भाई कहा है।

"अहीर—(सं० पु०) आभीर, ग्वाला, यादव।"
—[भार्गव आदर्श-हिन्दी-कोष, पृष्ठ ६५][४४]

"यादव—(सं० पु०) अहीर, यदु के वंशज, श्रीकृष्ण।"
—[राष्ट्रभाषा-कोश, पृष्ठ ४३९][४५]

"यादव वृन्द—(सं० पु०) अहीर लोग, गोप समुदाय।"
—[प्रसाद काव्य-कोश, पृष्ठ ४८१][४६]

"यादव—(सं० पु०) राजा यदु के वंशज, अहीर।"
—[तुलसी-शब्द-सागर, पृष्ठ ३९६][४७]

"यादव—(सं० पु०) संज्ञा—यदु के वंशज, यदुवंशीय क्षत्रिय, अहीर जाति का व्यक्ति।" —['हिन्दी-शब्द-सागर', भाग ८, पृष्ठ ४०६७][४८]

पं० वामन शिवराम आप्टे—"यादवः [यदोरपत्यम्—अण्] यदु की सन्तान यदुवंशी" [संस्कृत-हिन्दी-कोष, पृष्ठ ८३४]

चतुर्वेदी पं० द्वारका प्रसाद शर्मा व पं० तारिणीश झा व्याकरण-वेदान्ताचार्य —"यादव—(पुं०) [यदोः अपत्यम् यदु अण्] यदुवंशी। श्री कृष्ण" [संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ, पृष्ठ ९५५]

आप्टे, चतुर्वेदी व झाजी ने 'यादव' का अर्थ 'अहीर' ग्वाला नहीं लिखा है जबकि अन्य हिन्दी कोषकारों ने लिखा है।

---

४३. "श्री मद्भागवतमहापुराणम् 'सामयिकी' भाषा टीका, पृष्ठ १२८।
४.४ 'लोकालोक' का 'यादवांक', पृष्ठ ५'।
४५. वही, पृष्ठ ५।
४६. वही, पृष्ठ ५।
४७. वही, पृष्ठ ५।
४८. वही, पृष्ठ ५।

श्रीकृष्ण का वंश-वृक्ष

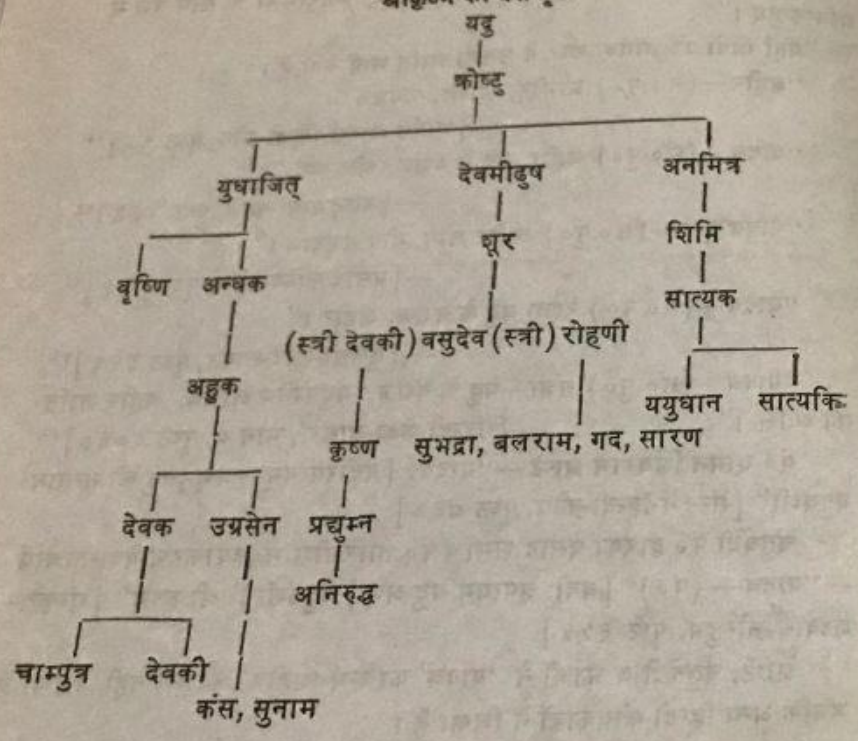

यादव वंश

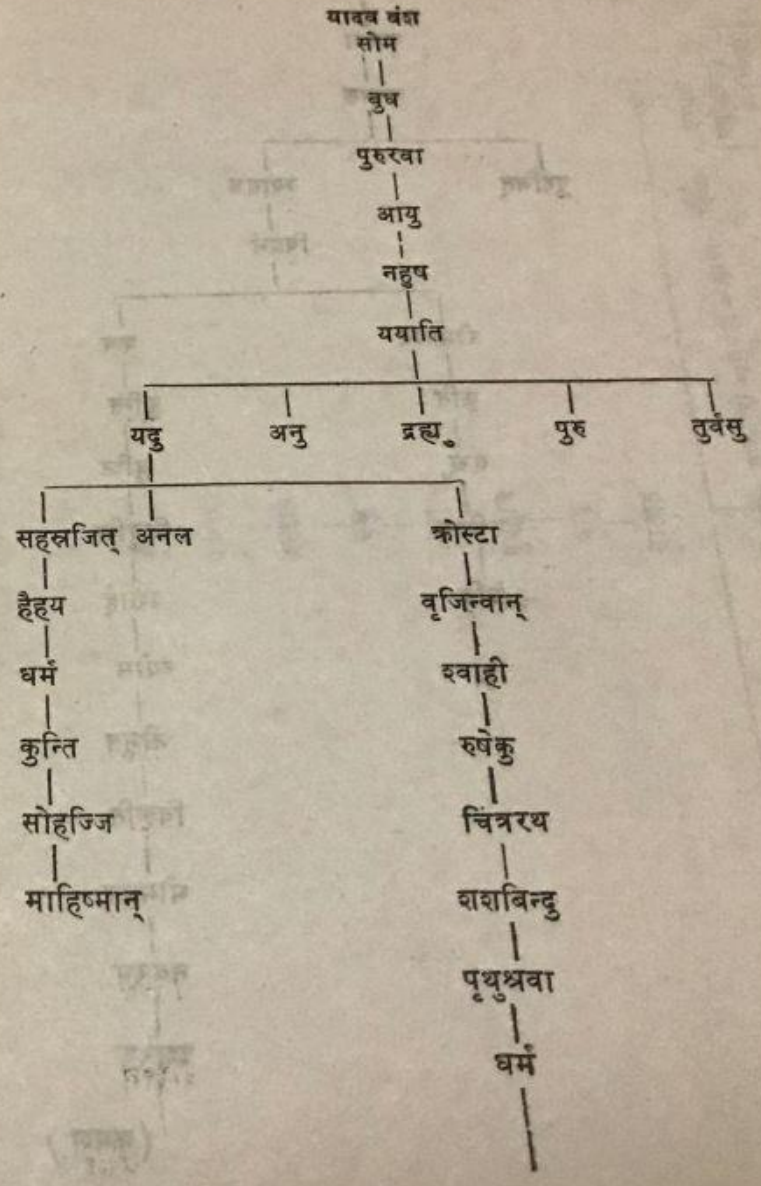

(क्रमशः)

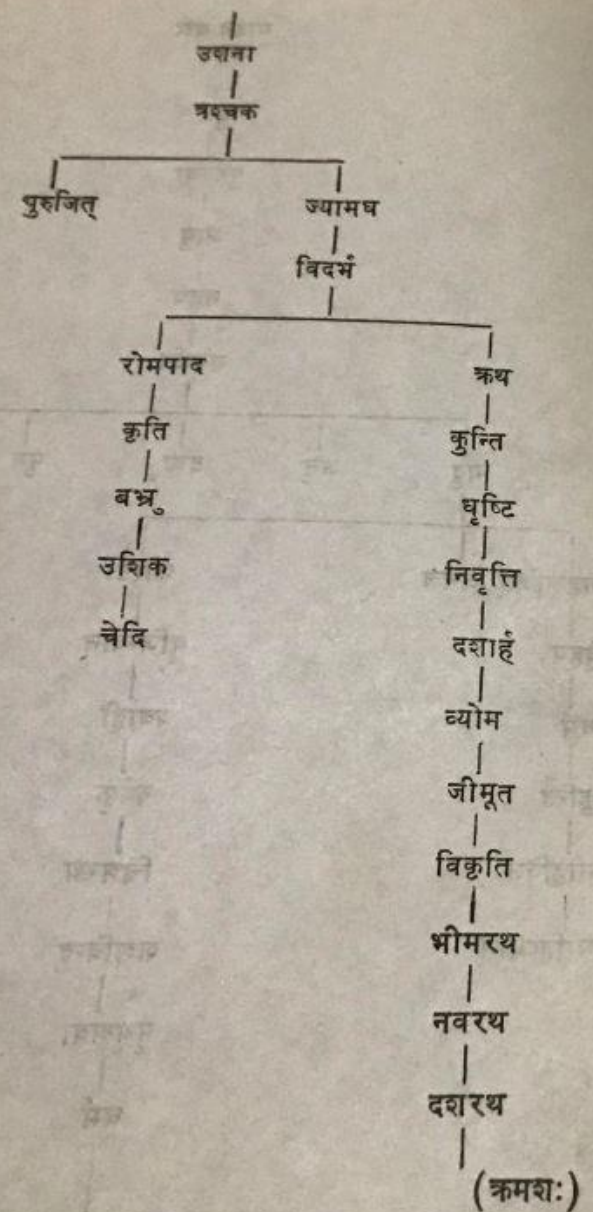
उशना
शत्रुक
पुरुजित्
ज्यामघ
विदर्भ
रोमपाद
कृति
बभ्रु
उशिक
चेदि
क्रथ
कुन्ति
धृष्टि
निवृत्ति
दशार्ह
व्योम
जीमूत
विकृति
भीमरथ
नवरथ
दशरथ
(क्रमशः)

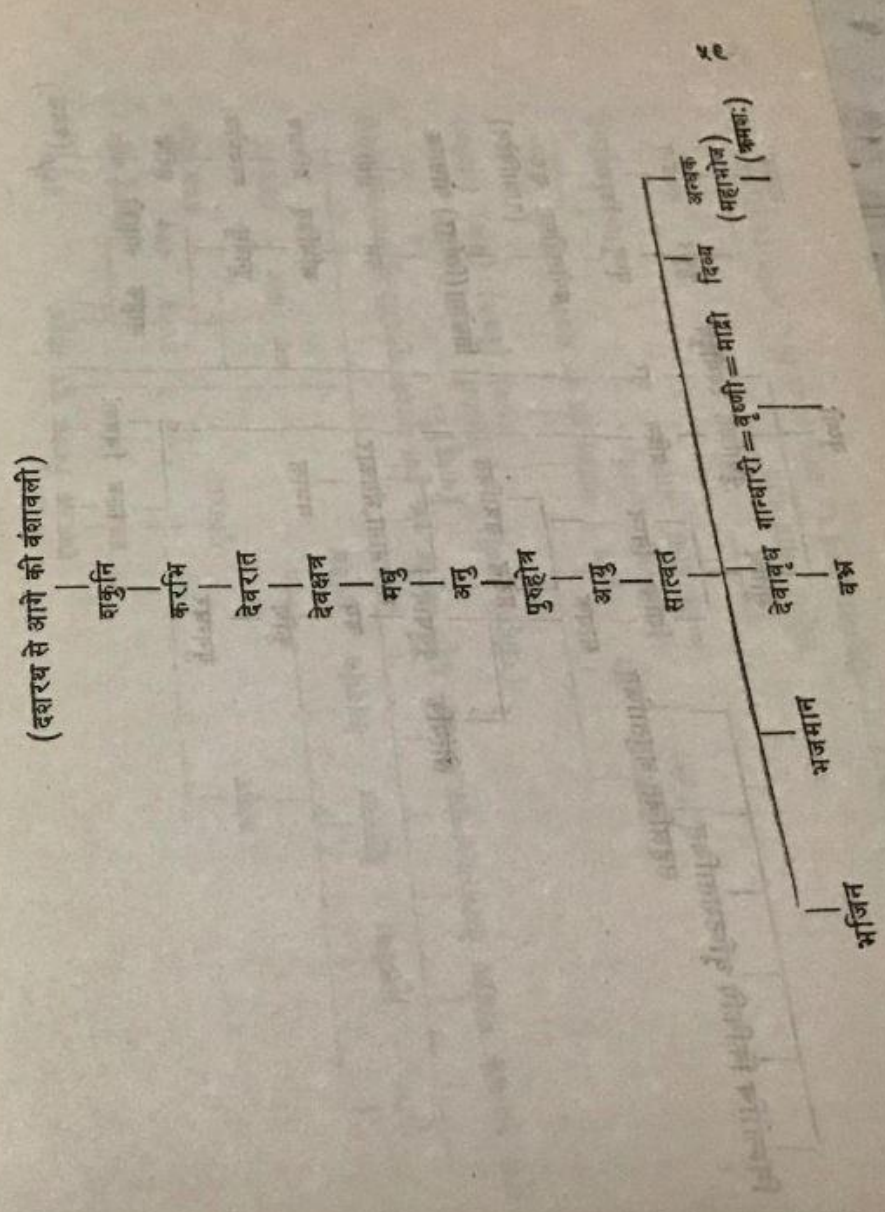
(दशरथ से आगे की वंशावली)
शकुनि
करंभि
देवरात
देवक्षत्र
मधु
अनु
पुरुहोत्र
आयु
सात्वत
अन्धक
(महानोत्र)
(क्रमशः)
दिव्य
गान्धारी = वृष्णी = माद्री
देवावृध
बभ्रु
भजमान
भजिन

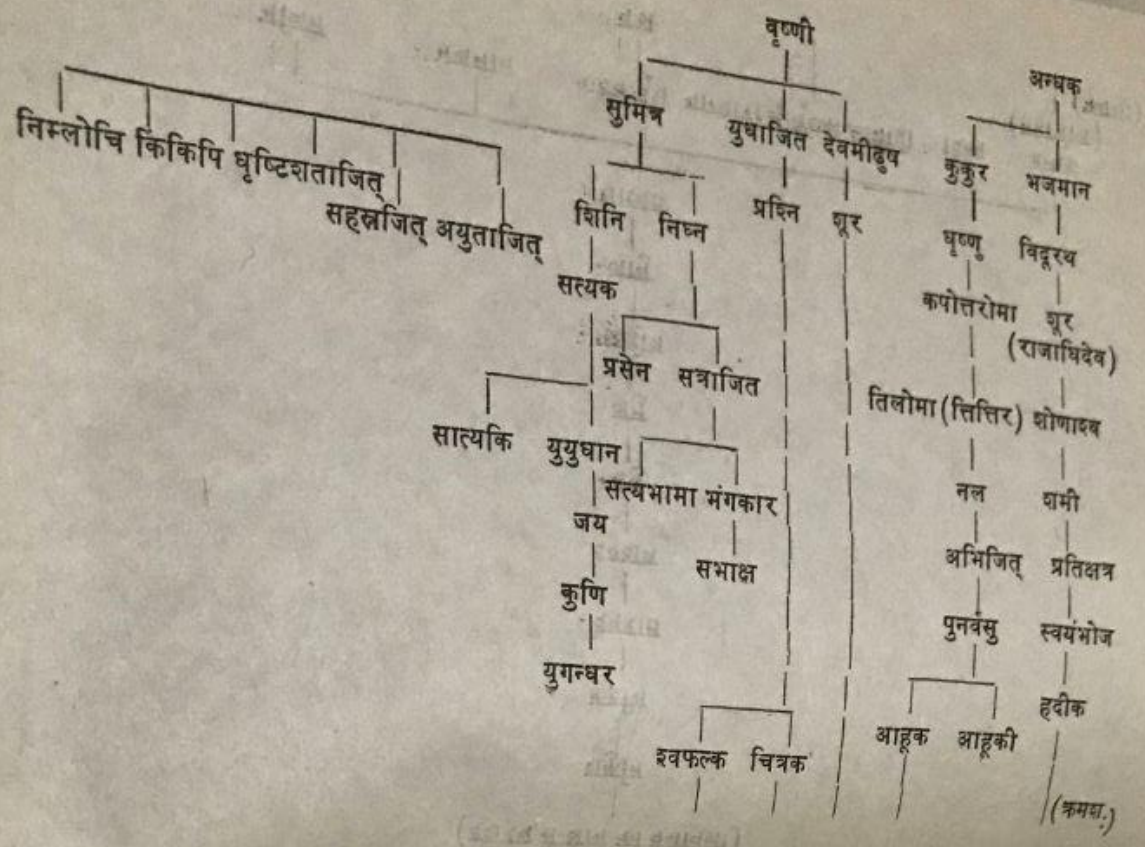

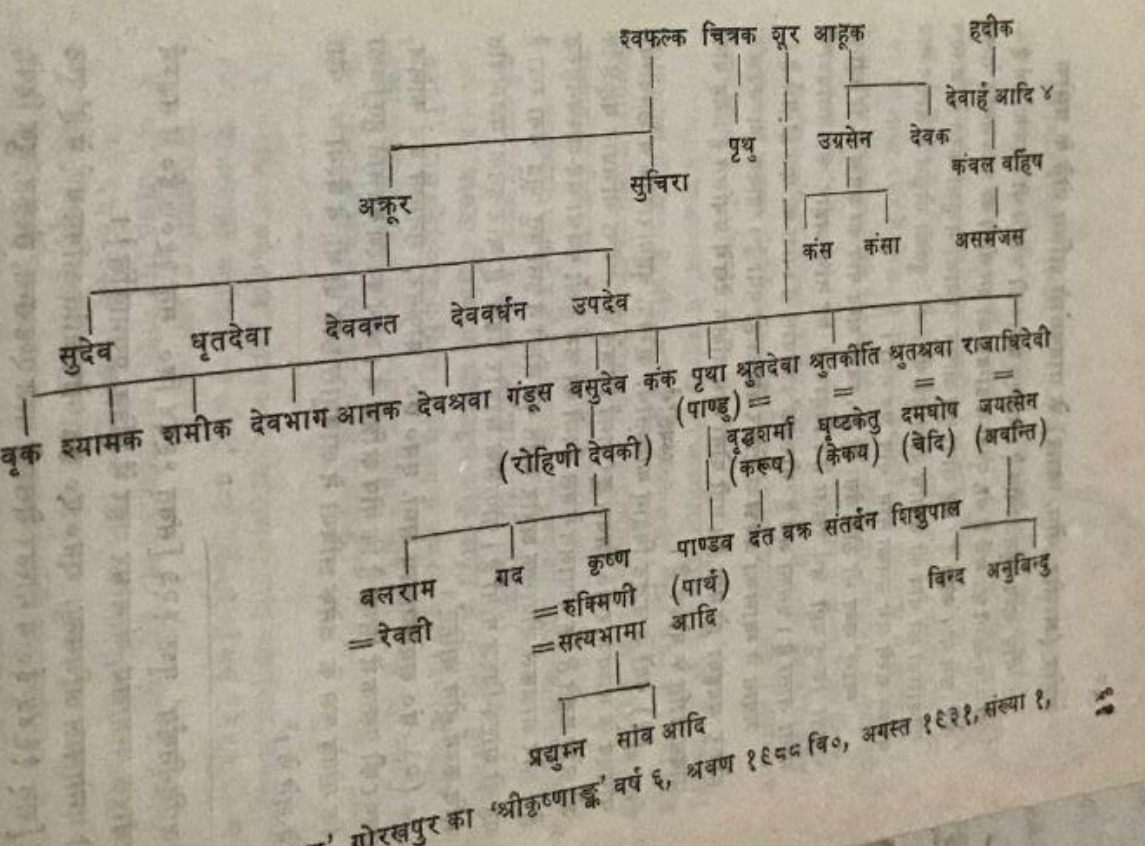

मासिक पत्र 'कल्याण' गोरखपुर का 'श्रीकृष्णाङ्क' वर्ष ६, श्रवण १९८८ वि०, अगस्त १९३१, संख्या १, पृष्ठ ३०५ से उद्धृत।

अहीर (आभीर, गोप, ग्वाल) के यादववंशी क्षत्रिय होने के प्रमाण

'गोप' शब्द बहुत प्राचीन है। यह एक प्रकार की उपाधि थी। इसका अर्थ है—गो+प=गौ का अर्थ है गो, पृथ्वी व इन्द्रिय जो इन तीनों का प=अर्थात् पालन करे, उसे गोप कहते हैं। यह तीनों गुण क्षत्रिय राजाओं में हुआ करते थे, अतएव यदुवंशियों को गोप की उपाधि प्राप्त हुई थी। जो यदुवंशी गोकुल में जाकर गाय पालन करने लगे उनका नाम 'गोप' पड़ गया।

'ग्वाल' शब्द भी ठीक वैसा ही है। ग्वाल शब्द गोप का अपभ्रंश तो नहीं हो सकता किन्तु वही अर्थ रखता है। बिहार में यह नाम 'अहीर' का पर्यायवाची माना जाता है। इसका अर्थ है 'गोरक्षक'। गोपाल व ग्वाल का एक ही अर्थ है।

मद्रास में ग्वाल का अपभ्रंश होकर **गोल्ला** हो गया है। 'यादव' का अपभ्रंश होकर **'यदइया'** हो गया है। यही दोनों नाम दक्षिण देश में प्रचलित हैं। यह दोनों यादव जाति के बोधक हैं।

(१) वेदों के उद्भट विद्वान् काव्यतीर्थ, ऋग्वेद, बृहदारण्यक व छान्दोग्योपनिषद् के भाष्यकार **पं० शिवशङ्कर शर्मा** लिखते हैं—"मेरा अभिप्राय यह है कि जो लोग कहते हैं कि गोपालन केवल वैश्यों का कर्म है सो सर्वथा वेद-शास्त्र-विरुद्ध है। और आजकल गोपालक **अहीर** जाति को लोगों ने इसी हेतु 'शूद्र' बना रखा है यह ही शास्त्र-विरुद्ध वार्ता है। गोपालक आभीर 'द्विज' हैं और इनके यज्ञोपवीत आदि कर्म्म होने चाहिएँ।"[1]

(२) **पं० अयोध्यानाथ शर्मा, एम० ए०**, प्रोफेसर, सनातन धर्म कालेज, कानपुर की पुस्तक में लिखा है कि **गोप क्षत्रिय** थे। आगे कारण बतलाते हुए लिखा है कि यादव कुल के अनेक क्षत्रियों ने क्षात्रवृत्ति छोड़ दी थी, वे वैश्यों का पेशा करने लगे थे।[2]

---

१. 'जाति-निर्णय' पृष्ठ १२३ [संवत् १९६४ वि०, सन् १९०७ ई० में सद्धर्म्म प्रचारक यन्त्रालय, जालन्धर शहर में मुद्रित, प्रथमावृत्ति]।

२. श्री मन्नालाल अभिमन्यु, एम० ए० कृत 'गोप जाति क्षत्रिय वर्ण में है' पृष्ठ ५३ [सन् १९४५ ई० में मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स, संस्कृत, बुक डिपो, कचौड़ी गली, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।

(३) **डॉ० राजबली पाण्डेय, एम०ए०, डी०लिट्०** ने "यदुवंश का इतिहास"[3] लिखकर आभीर (अहीरी, जाट, गुर्जरों को यादववंशी क्षत्रिय सिद्ध किया है।

(४) **श्री रमेशचन्द्र गुणार्थी**, 'रिसर्च स्कालर', ठि० सावर (जि० अजमेर) लिखते हैं—"अहीर का ही दूसरा नाम हीर है और यह दोनों शब्द संस्कृत के आभीर शब्द से निकले हैं। जिसका अर्थ दूधवाला व दूध बेचनेवाला है। पण्डित रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर ने लिखा है कि ईसा के दो सौ वर्ष पूर्व भारत में अहीर आये थे। मगर इनका भाग्योदय ईसा की चौथी शताब्दी से प्रारम्भ हुआ, अन्यथा पूर्व मालाबार प्रान्त में रहते थे। वहाँ से चलकर प्रथम नेपाल में आकर राज्य किया।

'शुद्धि चन्द्रोदय' में लिखा है कि अहीरों ने भारत में प्रथम 'आभीर, बटक' नामक नगर बसाया, बाद में संयुक्त प्रान्त में अहरोरा और झाँसी जिले में अहीरवार नगर बसाये।

...'टाड राजस्थान' में अहीरों को अजयपाल चौहान के पूर्व चौहानों की एक शाखा भी लिखा है, और 'क्षत्रिय जाति की सूची', पृष्ठ १२० में इनको सिंध के सूमरा क्षत्रियों की नस्ल से माना है। यह प्राचीन क्षत्रिय वंश है। पहले इनके राजपूतों में ही सम्बन्ध होते थे अब नहीं।

बाबा नन्द भी अहीर ही थे। जिनके यहाँ कृष्ण का बाल्यकाल निकला, इसी से कई स्थानों में कृष्ण को भी 'आखिर जात अहीर' ही कहा।"[4]

(५) **प्रसिद्ध बौद्धविद्वान् श्री राहुल सांकृत्यायन** ने अपनी "साम्यवाद ही क्यों?" नाम की पुस्तक में लिखा है कि संयुक्त प्रान्त के पूर्वी जिलों में अहीर जाति बहुत संख्या में पाई जाती है। उनकी आकृति और रंगादि से पता लगता है कि उनमें आर्यों के खून की पवित्रता सबसे अधिक है।[5]

---

३. 'श्री कृष्ण प्रकाशन', दारा नगर, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति।

४. 'राजस्थानी जातियों की खोज' पृष्ठ ९८-९९ [सन् १९५० ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति]।

५. श्री राजित सिंह यादव, सम्पादक 'यादव' कृत 'यदुवंश प्रकाश' पुस्तक, पृष्ठ ६५ से उद्धृत [लेखक द्वारा, दारानगर, वाराणसी से प्रकाशित, प्रथम संस्करण]; तुलना करो श्री श्रवणकुमार यादव कृत 'यदुवंश की खोज' पृष्ठ ३८० [प्रथम संस्करण]; तुलना करो श्री राहुल सांकृत्यायन कृत 'पुरातत्त्व निबन्धावली' पृष्ठ २१५-१६ [१९५८ ई०, प्रयाग]।

(६) **श्री बजरंग लाल लोहिया, कलकत्ता** लिखते हैं—"अहीर—पशु चराने-वाले अहीर कहलाते हैं। यह लोग पशु पालते हैं, चराते हैं तथा दूध, दही, मट्ठा और मक्खन बेचते हैं।...

सर हेनरी ईलियट ने यदुवंशियों का पूरा ब्योरा लिखा है और बताया है कि कुछ साल तक इस वंश के लोग सम्पूर्ण भारत के शासक थे।...

इनका मूल स्थान मथुरा है और राजस्थान में इनकी बस्ती पूर्वी परगनों में अधिक है। इनकी जाति में तीन महान् विभाजन हैं। १. नन्दवंशी, २. यदुवंशी, ३. ग्वालवंशी। सर ईलियट के कथनानुसार इन तीनों के बीच यह तीनों अहीर हैं, इसके अतिरिक्त और कोई सम्बन्ध नहीं है।"[६]

(७) **महामहोपाध्याय डॉ० बलदेव मिश्र, एम०ए०, डी०लिट्०** लिखते हैं—"राजपूताने में अब तक रावत क्षत्रिय जाति तथा रावत उपाधि का प्रचलन है। कई आभीर लोग राजपूत कहे गये हैं। जिसके हाथ में राजसत्ता रही वह राजा और राजा के पुत्र राजपूत कहे जाते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार क्षत्रियों की श्रेणी में कई जातियाँ शामिल हो गई हैं।...[७]

(८) **राजकुमार श्री प्रद्युम्न सिंह जी** खैरागढ़ स्टेट, भूतपूर्व प्रधान मन्त्री अखिलभारतवर्षीय क्षत्रिय महासभा, नागपुर (सी० पी०) (पत०ता० ६।११।४४) "क्षत्रिय महासभा का ४३वाँ अधिवेशन नागपुर में ता०४।४।४५ को हुआ था जिसमें प्रस्ताव पास हुआ कि मराठा, जाट, गूजर और अहीर क्षत्रिय जाति में सम्मिलित किये जाएँ।"[८]

(९) पुरातत्वविशारद, व्याख्यानभूषण व श्रोत्रिय **पं० छोटेलाल शर्मा** एम०, आर० ए० एस० लिखते हैं—"अहीर—यह जाति अपने को क्षत्रिय मानती है।...

---

६. 'राजस्थान की जातियाँ' पृष्ठ १९१-९२ [सन् १९५४ ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, विशाल भारत बुक डिपो, १९५/१, हरिसन रोड, कलकत्ता से प्राप्य]।

७. 'यदुवंश की खोज' पृष्ठ ३७८-७९ तुलना करो; 'आभीर राजपूत रत्नावली' पृष्ठ २८।

८. वही, पृष्ठ ३७९। तुलना करो, श्री बलरामसिंह कृत 'आभीर राजपूत रत्नावली' पृष्ठ २८ [सन् १९४५ ई० श्री रामप्रसाद सिंह द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण, श्रीकृष्ण प्रेस, दारा नगर, वाराणसी में मुद्रित]।

दिल्ली जिले में अहीरों के दो भेद हैं देहिया और आहुलातियाँ (हाउलानिया) देहिया भेद जाटों में भी मिला है।...

अहीरों के तीन मुख्य भेद हैं—१. नन्दवंश, २. यदुवंश, ३. ग्वालवंशी...।"[९]

(१०) **श्री रामधारी सिंह, एम०ए०** अपने "अन्धक-वृष्णि-संघ का इतिहास" शीर्षक लेख[१०] में लिखते हैं—

"...यादव जाति नितान्त परिश्रमी तथा आनन्दप्रिय थी। यह जाति ग्वालों की थी, जो अपने ढोरों के साथ यमुना तटवर्ती अत्यन्त उपजाऊ तथा सुविधापूर्ण स्थान में निवास करते थे। उनकी कौटुम्बिक प्रथाएँ भी यह सिद्ध करती हैं कि उनका व्यवसाय गोपालन था। सुभद्रा तक भी कुन्ती तथा द्रौपदी से अन्तःपुर में मिलने के लिए रानी की पोशाक में न जाकर एक साधारण गोपी-वेश में भेजी गई थीं। यह घटना उनके रहन-सहन और व्यवसाय का प्रत्यक्ष प्रमाण है। श्रीकृष्ण और बलराम भी अपनी गायों को जंगलों में चराया करते थे। इससे सिद्ध होता है कि अमीर-गरीब सभी समान जीवन व्यतीत करते थे। वे पर्याप्त मात्रा में दूध, दही, मक्खन तथा घी उत्पन्न करके सुखमय जीवन व्यतीत करते थे।"

(११) **विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र, मुरादाबाद** लिखते हैं—

"...जनसाधारण इनको गवादि उपजीवी जानकर वैश्यधर्मा मानते हैं। पश्चिमोत्तर में आभीर गोप विशेष हैं। इनको अहीर, गोपाल कहते हैं। यह गाय, भैंस का दूध-दही बेचते हैं। इनका जल दूषित नहीं माना जाता...।"[११]

टिप्पणी—मिश्रजी आभीर, गोप, अहीर, गोपाल को पर्यायवाची मानते हैं। इनके जन्मना उत्पत्ति के अन्वेषण में मिश्रजी असमर्थ हैं।

(१२) **श्री लाला कन्नोमल जी, एम०ए०** धौलपुर से लिखते हैं—"इसमें कोई सन्देह नहीं कि यादव लोग गोप थे और दूसरे क्षत्रियों के देखते मिलने-जुलने इत्यादि व्यवहारों में अधिक रुकावट या अधिक बंधन नहीं रखते थे। इनकी स्त्रियों

---

९. 'जाति अन्वेषण' पृष्ठ २५५-५७ तक [फरवरी १९२८ ई० में हिन्दू धर्म वर्ण-व्यवस्था मण्डल, फुलेरा (जयपुर) द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।

१०. मासिक पत्रिका 'विशाल भारत' कलकत्ता, भाग २९, चैत्र १९९९, अप्रैल सन् १९४२ ई०, अङ्क ४, पृष्ठ ४०३।

११. 'जाति-भास्कर', पृष्ठ ४७७ [संवत् १९९५ वि० में श्री वेङ्कटेश्वर स्टीम् प्रेस, बम्बई द्वारा प्रकाशित]।

की चालढाल और बर्त्ताव में स्वतन्त्रता थी।"[१२]

(१३) सर राजा श्रीमान् डॉ० रामपालसिंह जी देव ने अपने भाषण में कहा था कि "अहीर लोग यदुवंशी क्षत्रिय हैं अतः उन्हें यज्ञोपवीत पहनने का पूर्णाधिकार प्राप्त है। मैं यादवों से आशा करता हूँ कि वे जनेऊ धारण करेंगे और हिन्दू धर्म के रक्षक बनेंगे।"[१३]

(१४) पार्लियामेण्ट ऐक्ट १९२० में लिखा है कि अहीर, ग्वाल, गवली, आदि जातियाँ क्षत्रिय हैं।

सर जान साइमन ने अपने भाषण में कहा था कि अहीर लोग क्षत्रिय हैं।[१४]

(१५) श्री योगेशचन्द्र भट्टाचार्य लिखते हैं—"It seems very probable that the Yadubansi Rajputs are derived from the Yadubansi Ahirs."[१५]

अर्थात्—"यह सम्भव है कि यदुवंशी राजपूतों की उत्पत्ति यदुवंशी अहीरों से है।"

(१६) कलकत्ते के प्रसिद्ध अंग्रेजी पत्र स्टेट्समैन (Statesman) २६ जनवरी सन् १९१४ ई० में प्रकाशित हुआ था—

"It is said that originally, the Warrior Caste of Kshatriyas were the protectors of Brahmans and cows alike. But a division of labour came about in the course of time, with the results that some Kshatriyas were at last confined to the protector of the sacred men, while the term of Gope or Gopal (Ahir) is another synonym used chiefly in Bihar where the castes are especially numerous, was used to designate the protector of the almost equally sacred animals..."

अर्थात्—"कहते हैं कि योद्धा क्षत्रिय जाति ब्राह्मण और गौ की रक्षा के

१२. "गीता-दर्शन" पृष्ठ ५७-५८ तुलना करो 'यदुवंश की खोज', पृष्ठ ३८०।
१३. 'गोप जाति क्षत्रिय वर्ण में हैं', पृष्ठ ५३।
१४. वही, पृष्ठ ५३।
१५. 'Indian Castes and Tribes' तुलना करो 'अहीरवंश प्रदीप', पृष्ठ ३२।

निमित्त थी। परन्तु कुछ समय बाद काम का विभाग हुआ जिसका परिणाम यह हुआ कि कुछ क्षत्रिय केवल ब्राह्मणों की रक्षा के लिए नियत किये गये और कुछ लोगों के साथ गोप या गोपाल शब्द लगा, जिनको केवल पवित्र गौ की रक्षा के निमित्त नियत किया गया था। अहीर एक दूसरा शब्द है जिसके वही अर्थ हैं। यह शब्द विशेषतया बिहार प्रान्त में प्रयोग किया जाता था, जहाँ इनकी संख्या बहुत है।...।"

(१७) मेजर एस० एच० ई० निकोलस, ९५ रसल्स लिखते हैं—

"The Yadubans Ahir has no false pride. All the Yadubans Ahir whome I have talked to, claim descent from Rajputs, in fact from Krishna himself. Their tribal appellation certainly seem to my mind, to imply a Rajput origin. Government determined on the formation of Ahir Companies in 1898 and four Companies were ordered to be raised, two in my regiment—The 95th Infantry and two in the 98th Infantry."[१६]

अर्थात्—यदुवंश अहीर में मिथ्या अभिमान नहीं है। सभी यदुवंश अहीर जिनसे मैंने बातचीत की, का दावा है कि वे राजपूत वंश में से हैं और तथ्य है कि कृष्ण स्वयं राजपूत थे। उनकी जाति सम्बन्धी उपाधि मेरे विचार मे निश्चित रूप से राजपूत सूचित करता है। सरकार ने १८९८ में अहीर कम्पनी बनाने का निश्चय किया और चार कम्पनियों को मेरे महान् सैन्य दल, ९५ पैदल सेना और दो ९८ पैदल सेना में निर्माण का आदेश प्रदान किया।"

(१८) मेजर ए० एच० बिंगले (Majar A. H. Bingley) लिखते हैं—

"The Gurgaon Ahirs make excellent soldiers, and differ but little in appearance, physique, and customs from their neighbourhood and rivals the Jats.

The Ahirs of Gurgaon and of the adjacent districts differ but little, if it all, from his Jat neighbour, and is equally brave,

१६. The Joarnal of United Service Institute of India, Vol. XI, No. 182.

industrious and orderly. It has been truly said of Jats and Gurgaon Ahirs that they are mainly, without false pride, independent without inolence, reserved in manner but good-natured, lighthearted, and industrious. There are no more loyal subjects of his majesty in India and none who are more attached to such of their rulers who mingle freely among them.

When you come over the names of the martial races of India and think of the Gurkha, Rajput, Sikh, and Dogra etc. do not forget the Jadubans Ahir."[१६]

अर्थात्—"गुड़गाँव के अहीर उत्कृष्ट सेना बनाते हैं, दिखावट, डील-डौल और चाल में अपने पड़ोसी व प्रतियोगी-जाटों से कुछ कम भिन्न हैं।

गुड़गाँव के अहीर और समीपवर्ती जिलों से कुछ भिन्न हैं और अपने जाट पड़ोसी से बराबर साहसी, परिश्रमी और आज्ञाकारी सभी हैं। यह सत्य कथन है कि जाट व गुड़गाँव के अहीर विशेषतया मिथ्या अभिमानरहित, धृष्टतारहित स्वतन्त्र, रीति में संकोची परन्तु उत्तम स्वभाव, सुगम हृदय और परिश्रमी होते हैं।

भारतवर्ष में अपने राजश्री के प्रति विशेष आज्ञाकारी और जो अपने शासकों से जुड़े हुए हैं और उनके मध्य स्वतन्त्रतापूर्वक सम्बन्धित हैं, कोई नहीं है।

...जब आप भारतवर्ष के वीर (योद्धा) जातियों के नाम लेते हैं और गोरखा, राजपूत, सिक्ख और डोगरा आदि का ध्यान करते हैं, तब यदुवंशी अहीरों को नहीं भूलना चाहिए।"

(१९) श्री रिजले (Shri Risley) कहते हैं—

"...The Yadava Gaole community claims descent from the great Yadava families to one which Shri Krishna, the eighth incarnation of Vishnu belonged. The whole of the north India, Gujrat and Deccan were once ruled by the kings of the Yadava families."[१७]

१६. 'Hand book on Jats, Gujars and Ahirs'; तुलना करो 'गोप क्षत्रिय वर्ण में हैं', पृष्ठ ५४।

१७. 'Tribes and Castes of Bengal', Vol. I, p. 282.

अर्थात्—"यादव ग्वाला समाज अपना अधिकार प्रतिपादन करते हैं कि वे यादवों के उस परिवार से हैं जिनमें आठवें विष्णु के अवतार कृष्ण थे। समस्त उत्तर भारत, गुजरात व दक्खन एक समय यादव परिवार के राजाओं द्वारा शासित था।"

(२०) "In the 'Prem Sagar' we read of the families of Yadu that was so grievously oppressed. The Ahirs say that Nanda, the large cattle-owner and apparantly rich man, in whose house the mythical Krishna was brought up was of their tribes; he was, according to the story, of the family of Yadu."[१८]

अर्थात्—"हम 'प्रेमसागर' में यदु के परिवारों के सम्बन्ध में पढ़ते हैं कि वे अत्यधिक सताये गये थे। अहीर कहते हैं कि महान् पशुस्वामी और स्पष्टरूप से सम्पत्तिशाली नन्दजी थे जिनके गृह में कृष्णजी लाये गये थे, उनकी जाति के थे; गाथा के अनुसार वे यदु के वंश में थे।"

(२१) श्री एच० ए० रोज (Shree H. A. Rose) कहते हैं—

"The name Ahir is doubtless derived from Sanskrit Abhir. The first historical mention of the Ahir occurs in the confused statements of the Vishnu Puran concerning them and other dynasties which succeeded the Ahirs in third century A. D. In the fourth century the Abhiras are described as republican tribes settled in Eastern Rajputana and Malwa. They are divided into three Khamps or subtribes—

1. The Nandbansi—descendants of Nand.
2. The Jadudansi—descendants of yadu.
3. The Gwalbansi—descendants of Gopals."[१९]

अर्थात्—"अहीर निस्सन्देह संस्कृत आभीर से व्युत्पन्न हैं। आभीरों का प्रथम

१८. 'The Journal of the United Institute of India', Vol. XI, No. 182.

१९. 'The Glossary of the Tribes in the Punjab', Vol. II, p. 4.

ऐतिहासिक वर्णन गड़बड़ रूप से विष्णु पुराण में उपलब्ध होता और दूसरे वंश जो तीसरी शताब्दी में उत्तराधिकारी के रूप में हैं। चतुर्थ शताब्दी में आभीर पूर्वी राजपूताना व मालवे में प्रजातन्त्र जाति के रूप में वर्णित किये गये हैं। वे तीन उपजातियों में विभाजित हैं—

१. नन्दवंशी—नन्द के वंशज।
२. यदुवंशी—यदु के वंशज।
३. ग्वालवंशी—गोप के वंशज।

अहीरों की शाखा-प्रशाखाओं का वर्णन

अहीर विशेष रूप से तीन जिलों में पाये जाते हैं। नन्दवंशी मध्य द्वाबा, यदुवंशी अपरद्वाबा और ग्वालवंशी लोअर द्वाबा और वाराणसी में विशेषरूप से पाये जाते हैं।[१]

इन तीनों समूह के अहीर परस्पर जुड़े हुए हैं और अन्तर्जातीय विवाह नहीं करते हैं।

नन्दवंशी ८४ गोत्रों में उत्तरप्रदेश में विभाजित हैं— "समरफल, किश्नौत, भगत, विलेहनिया, दिसवार, नागोवा, कनौधा, दूनर, रावल, टेंगुरिया, कौर, कामरिया, बारौसिया, मुजवार, दाहिमा, निरबान, खरखरी, ढिरहोर, सितौलिया, जरवरिया, बारोठी, गोंडा पाठक।

इनके अतिरिक्त ६४ 'कुलनाम' और हैं जिनमें मुख्य हैं[२]—

मोलक, संतोरिया, विघोटो, खोसिया, खलिया, लिनिवाल, अफरिया, मैला खियाला, खोरो, सेसोतिया, गोंडवाल, गिर्द, भामसारा, जंजोरिया, कंकौरिया, नागामिया।

उत्तरप्रदेश में अहीर १८ उपजातियाँ में हैं—

"वेणुवंशी (राजा वेणु की सन्तान), भिरगुदी, दौवा, घिनघौरी, गद्दी, गामेल, घोड़चढ़ा, घोसी, गूजर, खुनखुनिया, राजौरिया और रावत।"[3]

---

१. श्री जे०एन० भट्टाचार्य कृत "हिन्दू कास्ट्स एण्ड सेक्ट्स, कलकत्ता, १८९६, पृष्ठ २९७।
२. क्रुक, आप० सीट० १ पृ० ५३।
३. वही।

परस्पर विवाह करनेवाले समूहों का वर्णन

लिलार, चौपर, गद्दी, गूजर, पधान, (प्रधान) और लाला। ये समूह देशवाली, कन्नौजिया, मघरिया और पूरबिया की भाँति स्थानीय हैं।

मुसलमान हुए घोसी अहीरों के वंशनाम

बघेला, बेहुआ, चौधरी, चौहान, गहलोत, गौड़, ग्वाल, पठान, राजपूत, सय्यीद, सदीक, तोमर और तुर्क हैं।[४]

उत्तर प्रदेश से भिन्न बिहार की उपजाति श्रेणी

बिहार में अहीर उन्नतिशील हैं। वे नौमुलिया या मझरोत, सतमुलिया या कृष्णौत, गोरिया या दहिराज व दहियाराज हैं।[५]

पूर्णिया जिले में अन्य प्रकार के यों हैं—

"घोसीन, नन्दगोप, सफासी और गोयारिया।"

बंगाल और बिहार के पूर्णिया जिले के कुछ खण्डों में प्रबल हैं जो गोयाल्स, सद्गोप या सफालगोप, सभी कृष्ण से सम्बन्धित होने का दावा करते हैं।[६]

"मध्यप्रदेश में घोसी अपने को ठाकुर होने का दावा करते हैं और उनकी वंशावली भाटों के पास है जो 'पटिया' है। ये घोसी दो समूहों में विभाजित हैं, हवेलिया ग्रामों में और बिरछेया जो वनों में निवास करते हैं।"[७]

"छत्तीसगढ़ और उड़ीसा क्षेत्र में अहीर रावत और गहरा हैं जो बड़ी संख्या में हैं।"[८]

रावत विभिन्न समूहों में विभाजित हो गये हैं; यथा झडिया, कोसरिया और कन्नौजिया। झडिया जंगली अभ्यासों के कारण प्रचलित हैं। कोसरिया कोसल के वंशज थे।[९]

---

४. क्रुक, आय० सीट० २, पृष्ठ ४१९-२०।
५. रिजले, op. cit., I, p. 284.
६. बुचानन: op. cit., (Purnea report).
७. रिजले व हीरालाल, op. cit., pp. 225-26, III, pp. 34-35.
८. वही, II, p. 19.
९. वही, पृष्ठ २५, घुर्रे, op. cit., n. 34.

"धौवा अहीर (Dhauwa Ahirs) बुन्देला राजपूतों की वर्णसङ्कर (Illegitimate) सन्तान हैं और ये अहीर पदवी में छोटे हैं और रघुवंशी व रान्या अहीरों के गृहों में धाय का कार्य करते हैं।"[१०]

मध्यप्रदेश में नरवरिया अहीर हैं जो ग्वालियर के समीप नगर के कारण पुकारे जाते हैं।"[११]

गुजरात राज्य के अन्य स्थानों के अतिरिक्त कच्छ व सौराष्ट्र के अहीरों की बस्ती प्राचीन है

वे निम्नांकित हैं—

"अम्बालिया, बराडिया, भदरका, भारिया, मुथर, चेतरिया, छुचर, चुदासम, गागिया, गोधम, गोहेल, गोराई जोगल, काछोट, नन्दनिया, पीठिया रावलिया, सीसोतिया और बसरा। प्रदेशीय आधार पर ये नाम हैं। मछा मोरवी के समीप मछु नदी से, प्रथालिया वगद में रहने से, बोरीचा सोराठिया सोराठ से, चोरिदा रून में चोराद से हैं। इन श्रेणियों में परस्पर विवाह नहीं होते हैं परन्तु सौराठिया अपकृष्ट माने जाते हैं। ये सौराठिया जूनागढ़ के राव नवघन के वंशज हैं।"[१२] काठियावाड़ में उपर्युक्त सभी श्रेणियों का एक-दूसरे से खानपान है।

"खानदेश में अहीर सात विभागों में हैं जिनमें ग्वालवंशी भारवथिया, धिदामवर, घोसी और गूजर प्रसिद्ध हैं।"[13]

पूना और खानदेश के अहीरों के समूह जो परस्पर विवाह नहीं करते—

"बलदारखामवाले, बणिया, बारोदिया, बिलोरिया, धानोरिया, हजारिया, हिमवार, पठारिये, कटारिये, कूकेलिव, मोरिये, परवार और फूलसूंघे।"[१४]

दक्कन (Deccan) के अहीर रोमवंश, ग्वालवंश, धिदामवार, भारवाथिया

१०. केप्टेन जे० मुरडो, 'On the Country of South', J. R. A. S. I, p. 248.

११. वही।

१२. Ethnographical Survey of Bombay, p. 9.

१३. Bombay Gazetter (Khandesh District), XII p. 79.

१४. Ethnographical Survey of Bombay, p. 9.

और घोसिया श्रेणी में हैं। दक्कन के घोसी व गद्दी दो भागों में हैं जो बेन्दीस और गूजर कहलाते हैं।[१५]

"मैसूर के गोलार यदुकुल अथवा कृष्णकुल के हैं जो अपने को कृष्ण जाति के समान स्वीकार करते हैं।"[१६]

कन्नाद गोल्ला की श्रेणियाँ

"हलगोल्ला, हवगोल्ला, कदगोल्ला, केम्पेगोल्ला और उजगोल्ला—ये श्रेणियाँ परस्पर सम्बन्धित हैं।"[१७]

बेलगाम जिले में गोल्ला छह श्रेणियों में है—अद्वीया, तेलुगु, गोल्ला, हनामगोल्ला, कृष्णीतगोल्ला, केमगुरीगोल्ला, पकनाकगोल्ला और शास्त्रगोल्ला। केनगुरीगोल्ला विशेषतया आन्ध्रप्रदेश में पाये जाते हैं।

बीजापुर में गोल्लों की श्रेणियाँ

"मोरे, पवार, शिन्दे और यादव। अन्तिम दो मराठा रक्त में मिश्रित हैं।"[१८]

बंगाल में पल्लभ या बल्लभ घमघोष के वंशज कहे जाते हैं जो कृष्ण के परिश्रम से छलांग लगा लिये हैं जबकि बोगरे या उज्जैनिया उज्जैन से आये। ढाका में सद्गोल्ला या श्वेतगोल्ला और लालगोल्ला विवाह संस्कार में दूल्हे के परिधान के रंग से हैं। सद् लालों की अपेक्षा उच्च माने जाते हैं। कान्तिताहा गायों को कान्ति या काँटा में बाँधने की रीति से ये नाम हैं।[१९]

जाट, अहीर और गूजर आपस में हुक्का पीते हैं। बम्बई में अहीर पक्का (पूड़ी और शाक आदि) और कच्चा (चपाती, भात व दाल आदि) मराठों के

१५. Gunthorpe, op. cit., p. 42.

१६. Thurston, 'Castes and tribes of South India', II, Madras, 1909, p. 284.

१७. Enthoven, op. cit., II p. 12.

१८. वही, पृष्ठ १०।

१९. Risley, op. cit., I, p. 284.

साथ भोजन करते हैं और हुक्का पीते हैं।[२०] अहीर व घोसी मराठों को जब हुक्का देते हैं तब अपना साफी (कपड़े का टुकड़ा) देते हैं परन्तु मराठा अहीर व घोसियों को अपनी साफी नहीं देते हैं।[२१]

"यदुवंशियों के भेद इस प्रकार से हैं—

मोलख, भासरी, सन्तोरिया, दगड़, सोसाहिया सुसूतिया, खल्लिया, लोनियाल, रावत, जोंथला, अपहारिया, बिचवालिया, मरला, खोरो, सिसोदिया, सोथनाल, गन्दवाल, कोसिया, गिर्थ, भामसारा, जंजारिया, नूनीवाल, कांकोरिया, कोला, निगानी।"[२२]

अहीरों की उपाधियाँ

सिंह, वर्मा, राय, राउत, रावत, चौधरी, राव, मण्डल अपने नामों के अन्त में लगाते हैं। आजकल 'यादव' भी लगाते हैं।

जाटुआ चर्मकार अपने को यदुवंशी होने का दावा करते हैं। वे भी 'जाटव' नाम के अन्त में लगाते हैं। 'जाटव' कहते-कहते वे 'यादव' भी कहने लगे हैं। राजस्थान के एक मन्त्री ने भी यादवों में मिलने का प्रयास किया था जिसको अ० भा० यादव (अहीर) महासभा ने स्वीकार नहीं किया।

श्री रामनारायण 'यादवेन्दु', बी०ए०, एल०-एल०बी० हिन्दी के अच्छे लेखक थे। 'यादवेन्दु' शब्द देखकर शायद पाठक उन्हें अहीर न समझ लें, वे 'जाटुआ चर्मकार' थे।

वर्मा—(वर्मन्) (न०)—[वृणोति आच्छादयति शरीरम्, वृ+मतिन्] कवच, बख्तर, क्षत्रिय की उपाधि।

जो क्षत्रिय युद्ध में कवचधारण करके जाते थे वे 'वर्मा' कहलाते थे।

राय—[सं० राजा] राजा, सरदार, सामन्त।

बिहार प्रान्त के अहीर 'राउत' लिखते थे पर अब सभी 'राय' लिखते हैं।

राव—हरयाणा के अहीर अपने नामों के अन्त में 'राव' लिखते हैं। रेवाड़ी

२०. Blunt, E. A., Bombay, MCMXXXI, p. 89. Crooke, op. cit., I, 65, Bhattacharya, op. cit., p. 297.

२१. Ethno., Surv. Bombay, p. 15.

२२. 'जाति-अन्वेषण' पृष्ठ २५७।

नरेश अहीर हैं जो 'राव' लिखते हैं।

चौधरी—[सं० चतुर+धर] प्रधान, किसी समाज या मण्डली का मुखिया जिसका निर्णय उस समाजवाले मानते हैं। 'चौधरी' उपाधि अहीरों के अतिरिक्त कूर्मी, मैथिल ब्राह्मण, भूमिहार ब्राह्मण, पासी (हरिजन), चर्मकार (हरिजन) भी लगाते हैं।

रावत—[सं० राजपुत्र] छोटा राजा, शूर, वीर, बहादुर, सामन्त, सरदार। अहीरों के अतिरिक्त बिहार में भूमिहार ब्राह्मण भी 'रावत' लिखते हैं।

मण्डल—बिहार प्रान्त के कुछ जिलों में लगाते हैं।

राउत—संज्ञा पु० [संस्कृत राज+पुत्र] राजवंश का कोई व्यक्ति, क्षत्रिय, वीर पुरुष, बहादुर।[१]

वारि, कूर्मी, अहीर ये तीनों अपने नामों के अन्त में 'राउत' लिखते हैं। वारि तो अभी भी लिखते हैं पर कूर्मी व अहीरों ने परित्याग कर दिया है। अहीर 'राउत' न लिखकर 'राव', 'राय' लिखने लगे हैं।

श्रीमान् राजकुमार लाल प्रद्युम्न सिंह रईस, खैरागढ़ (मध्यप्रदेश) लिखते हैं (क्षत्रिय सूची)—"६०२ राउत मसोला (पंवार), ६०३ राउत मोघरा (पंवार), ६०४ राउत रिगवाड़।"[२]

विद्यावारिधि डॉ० भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री' ज्येष्ठानुसन्धान पण्डितगणाभ्यन्तर (Senior Research Fellow), वाराणसेय-संस्कृति-विश्वविद्यालय लिखते हैं—

"हमारे मतानुसार 'राउत' [तुलनीय—क्षत्रिय अर्थ में प्रयुक्त अल्मोड़ा का रौत ज्यू] के मूल में 'राजपुत्र' शब्द अवस्थित है। 'राउत' (>राज-पुत्र) से विकसित एक शब्द और मिलता है—'राव'। 'राय' शब्द राजपुत्र>राउत से विकसित नहीं है। उसके मूल में राज (T) शब्द वर्तमान है।..... अजयगढ़

१. श्री रामचन्द्र वर्मा द्वारा सम्पादित 'संक्षिप्त हिन्दी शब्द-सागर' पृष्ठ १०६५ [संवत् २००२ वि० में काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, चतुर्थ संस्करण]।

२. 'नागवंश', पृष्ठ ३९१ [संवत् १९८३ वि० में लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

और उत्तरी गुजरात के शिलालेखों में 'राउत' और 'राउत्त' शब्द राजपूत के अर्थ में उत्कीर्ण है। सौरों से संबद्ध राउत शब्द या तो रामढ [>रावथ>रावत> राउत] से विकसित हुआ है ['म' का विकास 'व' होता है। यथा—नमन>नवना, गमन>गवन, गवना, आचमन>अँचोना आदि] या फिर उक्त जाति कभी राजपद पर आसीन रह चुकी हैं।...''[3]

□

३. 'बुन्देलखण्ड की प्राचीनता', पृष्ठ २८-२९ [विक्रम संवत् २०२१, सन् १९६५ ई० में विद्वद्-गोष्ठी, डी० ५/११० मीरघाट, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

क्या जाट विदेशी हैं ?

भारतवर्ष में जाटों की संख्या अत्यधिक है। असम, बंगाल, उत्कल व बिहार में जाट नहीं पाये जाते हैं। अफगानिस्तान, बलोचिस्तान, चीन, नेपाल, ईरान, स्कैण्डनेविया, तुर्क, जर्मनी, रूस, स्पेन, जटलैण्ड, ग्रीस, अरब में जाटों का राज्य था।

पंजाब, कश्मीर, पेशावर, पटियाला, फरीदकोट, जींद, नाभा, कलसिया, भगोवाला, सनघर, फतेहगढ़, भागा, खंदा, सिरानवाली, बटाला, कलासबजवा, मुरसान, हाथरस, फंफूंद, मुरादाबाद, भरतपुर, धौलपुर, टोंक, सिन्ध, मालवा, दिल्ली प्रभृति में इनका राज्य था। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जाट विशेष पाये जाते हैं।

'जाट' शब्द कैसे बना ?

पाणिनि ने अपने समय के प्रचलित शब्दों और प्राय: प्रत्येक राजनैतिक संघों की अनेक स्थलों पर चर्चा की है। उन्होंने अष्टाध्यायी के भ्वादिगण में एक परस्मैपदी धातु लिखी "जट झटसंघाते"—अर्थात् जट शब्द समूह के लिए प्रयुक्त होता है। 'जट' धातु का अर्थ है कि "जिसके द्वारा या जिसमें बिखरी हुई शक्तियाँ एकत्र हो जाएँ।" जटसंघ का रूप भी इस समय तक ऐसा ही था।

'चान्द्रव्याकरण' में एक प्रयोग आता है—'अजयज्जर्टो हूणान्' अर्थात् जर्ट ने हूणों को पराजित किया। यहाँ 'जर्ट' शब्द से जाट ग्रहण किया जा सकता है। जाट, जट्ट, जार्त्त आदि समान शब्द प्रतीत होते हैं।

पाणिनीयाष्टकम् (अष्टाध्यायी) के अध्याय ३, पाद ३, सूत्र १९ 'अकर्तरि च

कराके संज्ञायाम्' से जट धातु से संज्ञा में 'घञ्' प्रत्यय होता है। जट् + घञ् प्रत्यय के घ् और ञ् की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है। 'अ' रह जाता है अर्थात् जट् + अ ऐसा रूप होता है। पुनः अष्टाध्यायी अध्याय ७, पाद २, सूत्र ११६, 'अत उपधाया' से उपधा अर्थात् जट् में के 'ज' अक्षर के 'अ' के स्थान पर वृद्धि अर्थात् दीर्घ हो जाता है। जाट् + अ = 'जाट' ऐसा शब्द बन जाता है।

परमात्मा का नाम भी 'जट' है

"महानखो महारोमा महाकोशो महाजटः।
प्रसन्नश्च प्रसादश्च प्रत्ययो गिरिसाधनः ॥"

—[महाभारत, अनुशासनपर्व, दानधर्मपर्व, अध्याय १७, श्लोक ८९]

यहाँ 'जट' शब्द आया है। टीकाकारों ने 'जट' का अर्थ जटावाला किया है।

पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम' की टीका— "....४८९ महाजटः—बड़ी-बड़ी जटावाले"[1]

सैनिकों के वर्णन में

"एकाक्षो द्वादशाक्षश्च तथैवैकजटः प्रभुः।

—[महाभारत, शल्यपर्व, अध्याय ४५, श्लोक ५८]

पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री : "....."एकजट"....."[2]

'एकजट' का तात्पर्य हुआ सबका प्रभु अर्थात् अध्यक्ष।

'जटासुर' की चर्चा

"जटासुरां मद्रकाणां च राजा कुन्तिः पुलिन्दश्च किरातराजः।

—[महाभारत, सभापर्व, अध्याय ४, श्लोक २४]

पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री : "इसके सिवा जटासुर, मद्रराज शल्य, राजा कुन्तिभोज, किरातराज पुलिन्द.....और बहुत-से प्रधान क्षत्रिय उस सभा में

१. 'महाभारत' (षष्ठ खण्ड) [अनुशासन, आश्वमेधिक, आश्रमवासिक, मौसल, महाप्रस्थानिक और स्वर्गारोहणपर्व], पृष्ठ ५५२०, [संवत् २०२१ वि० में गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा मुद्रित व प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।

२. 'महाभारत' (चतुर्थ खण्ड) [द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक और स्त्रीपर्व], पृष्ठ ४२५७, [विक्रम संवत् २०२६ में गीता प्रेस, गोरखपुर, तृतीय संस्करण]।

कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर की सेवा में बैठते थे।"[3]

'जटासुर' शब्द को देखकर **श्री निरंजनसिंह चौधरी** इनको 'जाट' ही समझते हैं।[4]

विद्यावारिधि डॉ० भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री' ज्येष्ठानुसन्धान पण्डितगणाभ्यन्तर वाराणसेय-संस्कृत-विश्वविद्यालय लिखते हैं : "शासकों के पुलिन्द नामकरण से यह तो स्पष्ट है कि पुलिन्द नाम (दस्यु या म्लेच्छ के समान) हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता था। वस्तुतः पुलिन्द क्षत्रिय जाति थी म्लेच्छ या शूद्र नहीं। कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर की सभा में किरातराज पुलिन्द उपस्थित होता था। उसे महाभारत में क्षत्रिय बताया गया है।"[5]

त्रिपाठीजी ने अपनी पुस्तक[6] की पादटिप्पणी सं० ४ में वही 'जटासुरां मद्रकाणां...' श्लोक उद्धृत किया है।

अतः इनकी दृष्टि में भी 'जटासुर' क्षत्रिय था। 'जटा' शब्द देखकर विद्वानों ने 'जाट' समझ लिया है।

श्री बी० एस० दहिया आई० आर० एस लिखते हैं : "(गित्त, गिट्ट से जाट मानते हैं)"....The Jats give its correct pronunciation. Now let us see how, त् (t) of Gitta (गित्त) becomes 'ट्' (T) of Gitta (गिट्ट). This change of dental surd into a cerebral is very common in Prakrit language. Everybody knows how Pattan (पत्तन) becomes Pattan (पट्टन), in the name Anhillapattan. Grammarian Vararuchi in his Prakrtaprakasa, formulated a special rule for the change of त् (t) into ट् (t) (III, 23). Hemachandra also gives examples of this change of dental into a cerebral, viz Tagara

३. 'महाभारत' (प्रथम खण्ड) [आदिपर्व और सभापर्व], पृष्ठ ६७४, [संवत् २०२५ वि० में गीता प्रेस, गोरखपुर, तृतीय संस्करण]।

४. 'जाट इतिहास' पृष्ठ ६, [सन् १९५७ ई० में जाटहितकारी प्रकाशन, गोपीनाथ बाजार, वृन्दावन (उ० प्रदेश) द्वारा प्रकाशित]।

५. 'बुन्देलखण्ड की प्राचीनता', पृष्ठ ४२।

६. वही, पृष्ठ ४२।

—Tragara, Trasara— Tasara, tuvara—tuvara. It is this manner that Jat becomes Jat (जात—जाट) evidently, Gilgit has not been effected by this change."[७]

अर्थात्—"जाट शुद्ध उच्चारण देता है। हम देखें कि कैसे गित्त का 'त्' 'ट्' हो जाता है। यह प्राकृत भाषा में दन्त्ययुक्त के कारण परिवर्तन हो जाता है। सभी जानते हैं कि 'पत्तन', कैसे पट्टन 'अन्हिलपाटन' नाम में हो जाता है। वैयाकरण वररुचि ने 'प्राकृतप्रकाश' में एक विशेषनियम त् को ट् (३, २३) के परिवर्तन में बनाया है। हेमचन्द्र भी दन्त्ययुक्त के उदाहरण देते हैं; यथा—तगरा; त्रगरा, त्रासरा—तासरा, तुवारा—तुवारा। इसलिए इस रीति से जाट, जात—जाट हो जाता है। प्रमाणस्वरूप, गिलगित में इस परिवर्तन का प्रभाव नहीं हुआ है।"

श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य एम० ए० अपनी आंग्ल भाषा की पुस्तक 'हिस्ट्री आफ मिडीवल हिन्दू इण्डिया' में लिखते हैं—"Lastly we have to speak about the Jats. Their enthonological characteristics also, as we have already seen, are clearly Aryans. They are fair, tall, high nosed and long headed. Does their history contradicts their being Aryans ? It may be stated atonce that the Jats have very little history of their own till we come to quite recent times when the present Jat Kingdoms both Hindus and Sikhs in the U.P. and the Punjab were founded. But the Jats have the oldest mention of the three. They are mentioned in the Mahabharat as Jartas in the Karna Parva. The next mention we have of them is in the sentence अजयज्जर्टो हूणान् in the grammar of Chandra of the fifth century. And this shows that the Jats were of the enemies of Huns and not their friends. The Jats opposed and

७. 'Jats the Ancient Rulers' (A Clan study), p. 6, [In 1980 published by Sterling Publishers Private Ltd., AB/9, Safdarjang Enclave, New Delhi-110016, First edition].

defeated Huns..."[८]

अर्थात् "अन्त में हम जाटों के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं। उनकी नृवंश विद्या के गुण से हम देख चुके हैं कि स्पष्टरूप से वे आर्य हैं। वे सुन्दर, लम्बे और बड़ी नाकवाले हैं। क्या उनके इतिहास उनको आर्य नहीं बतलाते हैं ? यह बात नितान्त कही जा सकती है कि जाटों का अपना कोई भी इतिहास उस समय से पूर्व का नहीं है जबकि वर्तमान हिन्दू, सिक्ख जाटों के राज्य उत्तर प्रदेश और पंजाब में स्थापित हुए। परन्तु इन तीनों में जाट प्राचीन हैं। महाभारत में जटित्का (जारताज) कर्णपर्व में इनका वर्णन पाया जाता है। पांचवी शताब्दी के चन्द्र के व्याकरण में उनकी द्वितीय चर्चा 'अजयज्जर्टो हूणान्' वाक्य में है। और यह प्रदर्शित करता है कि जाट हूणों के शत्रु थे उनके मित्र नहीं थे। जाटों ने उनका सामना किया और हूणों को पराजित किया।..."

"शाकलं नाम नगरमापगा नाम निम्नगा।
जर्तिका नाम वाहीकास्तेषां वृत्तं सुनिन्दितम् ॥"

—[महाभारत, कर्णपर्व, अध्याय ४४, श्लोक १०]

पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री : "वहाँ शाकल नामक एक नगर और आपगा नाम की एक नदी है, जहाँ **जर्तिक** नामवाले वाहीक निवास करते हैं। उनका चरित्र अत्यन्त निन्दित है।"[९]

यहाँ **जर्तिका** शब्द है उससे 'जाट' अर्थ निकालना भ्रमपूर्ण है। उसी कर्णपर्व में 'जर्तिका' को गोमांसभक्षक लिखा है—

"धाना गौड्यासवं पीत्वा गोमांसं लशुनैः सह।
अपूपमांसवाट्यानामाशिनः शीलवर्जिताः ॥"

—[महाभारत, कर्णपर्व, अ० ४४, श्लोक ११]

पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री : 'वे भुने हुए जौ और लहसुन के साथ गोमांस खाते और गुड़ से बनी हुई मदिरा पीकर मतवाले बने रहते हैं। पूआ, मांस

८. श्री देशराज जघीना (भरतपुर) लिखित 'जाट इतिहास', पृष्ठ ५७, [सन् १९३४ ई० में श्री सत्यपाल शर्मा, कान्ति प्रेस, माईथान—आगरा द्वारा मुद्रित व श्री ब्रजेन्द्र साहित्य समिति, आगरा द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

९. महाभारत (चतुर्थ खण्ड), पृष्ठ ३८९३।

और बाटी खानेवाले बाहीक देश के लोग शील और आचार से हीन हैं।"[10]

यदि 'जतिका' को जाट माना जाय तो उन्हें आर्य कहते हुए गोमांस भक्षक मानना पड़ेगा जो अशुद्ध है। वैद्यजी की कल्पना भ्रमपूर्ण है।

श्री देशराजजी भी इससे सहमत नहीं हैं।[11]

वाहिकों को कहीं-कहीं व्रात्य क्षत्रिय भी कहा गया है।

जाटों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में एक मनोरंजक कथा

महादेवजी के श्वसुर राजा दक्ष ने यज्ञ रचा और अन्य प्राय: सब देवताओं को तो यज्ञ में सम्मिलित होने का निमन्त्रण दिया, पर न तो महादेवजी को बुलाया और न अपनी पुत्री सती को ही निमन्त्रित किया। पिता का यज्ञ समझकर सती बिना बुलाये हुए ही पहुँच गई, किन्तु जब वहाँ उसने देखा कि यज्ञ में न तो उनके पति का भाग ही निकाला गया और न उसका ही सत्कार किया गया तब उसने वहीं अपना प्राणान्त कर दिया। महादेवजी को जब यह समाचार मिला तो उन्होंने दक्ष-और उसके परामर्शदाताओं को दण्ड देने के लिए अपनी जटा में से 'वीरभद्र' नामक गण उत्पन्न किया। वीरभद्र ने अपने अन्य साथी गणों के साथ आकर राजा दक्ष का सिर काट लिया और उसके साथियों को भी पूरा दण्ड दिया। यह कथा किंवदन्ती के रूप में ही नहीं रही वरन् संस्कृत श्लोकों में इसकी पूरी रचना की गयी है जो 'देवसंहिता' के नाम से है। उस पुस्तक में लिखा है कि विष्णु ने वहाँ आकर शिवजी को प्रसन्न करके उनके वरदान से दक्ष को जीवित किया और दक्ष और शिवजी में समझौता कराने के पश्चात् शिवजी से प्रार्थना की कि महाराज आप अपने मतानुयायी 'जाटों का यज्ञोपवीत संस्कार क्यों नहीं करवा लेते जिससे हमारे भक्त वैष्णव और आपके भक्तों में कोई झगड़ा न रहे परन्तु शिवाजी ने विष्णु की इस प्रार्थना पर यह उत्तर दिया कि मेरे अनुयायी भी प्रधान हैं।"

'देवसंहिता' के कुछ श्लोक निम्न प्रकार हैं—

पार्वत्युवाच:

भगवन् सर्वभूतेश सर्वधर्मविदांवर:।
कृपया कथ्यतां नाथ जटानां जन्मकर्मजम्॥ १२॥

---

१०. महा० कर्णपर्व, पृष्ठ ३८९३।

११. 'जाट-इतिहास', पृष्ठ ८३।

अर्थ—हे भगवन्! हे भूतेश! हे सर्वधर्मविशारदों में श्रेष्ठ! हे स्वामिन्! आप कृपा करके मेरे लिए जट जाति का जन्म एवं कर्म कथन कीजिए।

का च मातापिता ह्येषां का जाति वद किं कुलम्।
कस्मिन् काले शुभे जाता प्रश्नानेतान् वद प्रभो॥ १३॥

अर्थ—'हे प्रभो! इनकी माता-पिता कौन हैं? जाति क्या है? कुल-वंश क्या है? किस शुभ काल में इनका जन्म हुआ है? इन प्रश्नों का उत्तर दें।'

श्रीमहादेव उवाच—

"शृणु देवि जगद्वन्दे सत्यं सत्यं वदामि ते।
जटानां जन्म कर्माणि यन्न पूर्वं प्रकाशितं॥ १४॥

अर्थ—श्रीमहादेवजी बोले—हे विश्ववन्दनीया देवि! जट जाति का जन्म, कर्म सब सत्य-सत्य कहता हूँ जो आज पर्यन्त किसी ने पहले प्रकाशित नहीं किया है।

"महाबला महावीर्या महासत्यपराक्रमा।
सर्वाग्रे क्षौत्रिया जटा देवकल्पा दृढव्रता:॥ १५॥"

अर्थ—(शिवजी बोले) जट महाबली, महावीर्यवान् और महासत्य पराक्रमी हैं। सब क्षत्रियों में पहले रही यह जट जाति देव जाति में श्रेष्ठ और दृढ़ व्रतवाले हैं।

"सृष्टेरादौ महामाये वीरभद्रस्य शक्तित:।
कन्यानां दक्षस्य गर्भे जाता जट्टा महेश्वरी॥ १६॥

अर्थ—हे भगवति! सृष्टि के आदि में वीरभद्रजी की योगमाया के प्रभाव से उत्पन्न जो पुरुष उनके द्वारा और दक्ष महाराज की कन्या से जट्ट जाति की उत्पत्ति हुई।

"गर्वखर्वोत्र विप्राणां देवानां च महेश्वरी।
विचित्रं विस्मयं सत्त्वं पौराणकैस्तङ्गोपितम्॥ १७॥"

अर्थ—हे महेश्वरी! जट्ट जाति की उत्पत्ति का जो इतिहास है वह अत्यन्त आश्चर्यमय। इस इतिहास में विप्र जाति एवं देव जाति का गर्व खर्व होता है। इस कारण इतिहासलेखकों ने जट्ट जाति के इतिहास को प्रकाशित नहीं किया है।

हम उस इतिहास को तुम्हारे पास यथार्थ रूप से वर्णन करते हैं।[१२]

इस कथा से मिलती-जुलती कथा 'शिव महापुराण' रुद्र संहितायां सीतीखण्ड, अ० ३२, श्लोक १५ से २७ तक में भी है।

वहाँ शंकर की जटा से वीरभद्र की उत्पत्ति की चर्चा है।

इस कथा पर विचार—'देव संहिता' पुराण व उपपुराण भी नहीं है। दोनों विद्वानों ने यह नहीं लिखा कि इसके लेखक कौन हैं तथा कहाँ से प्रकाशित हुई है। शिवजी की जटा से जाटों की उत्पत्ति अवैज्ञानिक तथा सृष्टिक्रम के विरुद्ध होने से प्रमाण की कसौटी पर खरी नहीं उतरती है।

पं० अंगद शास्त्री की कल्पना—संवत् १९२६ विक्रमी में पं० अंगद शास्त्री ने 'जाठरोत्पत्ति' नाम की एक संस्कृत पुस्तक राजा साहब श्री गिरिप्रसादजी बेसमा (अलीगढ़) के प्रोत्साहन से तैयार की थी। उसमें पुराणों की परशुराम और सहस्रार्जुनवाली कथा का उल्लेख करके कहा गया है कि जब २१ बार के युद्ध से पृथ्वी क्षत्रियविहीन हो गयी तो राजकन्याओं ने ब्राह्मणों से वीर्यदान लिया। क्षत्राणियों के पेट से पैदा होने के कारण वे सन्तानें (संस्कृत में पेट को जठर कहते हैं) जाठर कहलाईं। "और दक्षिण भारत को छोड़कर उत्तर में हिमालय के अंचल में जठर देवकूट पहाड़ में रहने लगीं।"

इस पर विचार—परशुराम, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्रजी के समय हुए थे। उस समय भी क्षत्रिय थे। यह कथा काल्पनिक है। जाटों को नियोगज सन्तान कहना भ्रम मात्र है।

डॉ० देशराजजी इस पर लिखते हैं—"यह बात इतनी अवैज्ञानिक, निराधार और वाहियात है कि इस प्रकाश के समय में इसे कोई सत्य नहीं मान सकता। न यह सत्य है कि पृथ्वी क्षत्रियविहीन हुई थी।"[१३]

---

१२. 'जाट-इतिहास', पृष्ठ ८५-८६ से उद्धृत [मूल ग्रन्थ 'देवसंहिता' मुझे देखने को नहीं प्राप्त हुआ—लेखक]

तथा कविराज श्री योगेन्द्रपाल शास्त्रीकृत 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान-पतन एवं जाटों का उत्कर्ष', पृष्ठ २५८ [मार्च १९६२ ई० में ठा० संसार सिंह, प्राप्ति स्थान शक्ति आश्रम कनखल (हरद्वार), पो० : गुरुकुल कांगड़ी, प्रथम संस्करण]।

१३. 'जाट इतिहास', पृष्ठ ७८।

अमर हुतात्मा पं० लेखरामजी 'आर्यमुसाफिर' ने 'रिसाला जिहाद' में जाट शब्द के यदु अपभ्रंश जादू, जाद, जात और जाट बतलाया है।[१४]

जेट, जिट, जित, जाट कुछ लोग मानते हैं।

कुछ लोग 'ज्ञात' से 'जाट मानते हैं।

"ज्ञात का उच्चारण हिन्दी और सरल संस्कृत में जाट होता है। फिर जिस समय में ज्ञात से जात या जाट बोलचाल में प्रयोग होने लगा।..."[१५]

चौधरी रामलाल हाला ने योगिराज श्रीकृष्ण चन्द्र महाराज से अड़तीसवीं पीढ़ी पहिले होनेवाले सम्राट् उशना याट से जाट नाम प्रचलन का सिद्धान्त स्थिर किया है।[१६]

श्री बी० एस० दहिया आई० आर० एस० लिखते हैं—

"Yaska (4/5th century B. C.), in his Nirukta (Science of Etymology) mentions a term, Jatyah Jatnarah (जाट् जाटणारः). This is found in the very first chapter, and seems to describe the Jats as having long Jatas (hair)."[१७]

अर्थात्—"यास्क (४/५ शताब्दी पूर्व) अपने निरुक्त (शब्द-व्युत्पत्ति विज्ञान) में एक नियम वर्णन करते हैं, जाट्य जाटणारः। यह प्रथम अध्याय में ही पाया जाता है और यह जाटों की लम्बी जटा (केश) होने का वर्णन प्रतीत होता है।

दहियाजी का भ्रम—आपने निरुक्त का जो प्रमाण दिया है वह अशुद्ध है। आपने पाठ अशुद्ध दिया है। यहाँ 'जाट' से कोई तात्पर्य नहीं है। पूरा प्रमाण है—निरुक्त अ० १।पा० ४।खं० १४।सही पाठ है—"जाट्य आट्णारो"।

दहिया जी ने 'आट्णारो' को 'जाटणारः' लिख दिया है जो किसी भी संस्करण में नहीं है।

---

१४. 'जाट इतिहास', पृष्ठ ८४.।

१५. वही, पृष्ठ १०५।

१६. 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान-पतन और जाटों का उत्कर्ष', पृष्ठ २५८।

१७. 'Jats the Ancient Rulers' (A Clan Study), p. 14.

पं० चन्द्रमणि विद्यालङ्कार, पालीरत्न[१८], पं० राजाराम शास्त्री[१९], पं० भगवद्दत्तजी बी० ए०[२०], आचार्य पं० विश्वेश्वरजी 'सिद्धान्तशिरोमणि',[२१] स्वामी ब्रह्ममुनिजी परिव्राजक 'विद्यामार्तण्ड'[२२], पं० छज्जूराम शास्त्री, विद्यासागर, पं० देवशर्मा शास्त्री व पं० भगीरथ शास्त्री[२३], डॉ० लक्ष्मणस्वरूप एम० ए०, डी० फिल्० सम्पादित व पं० सत्यभूषण 'योगी' वेदालङ्कार, एम० ए०, शास्त्री (द्वारा अनुवादित)[२४] ये सभी दशविद्वान् "आट्णारो" पाठ मानते हैं, अतः दहियाजी का 'जाटणारः' लिखना भयंकर भूल है।

'जाट्य' शब्द—जाट्यो जटा समूहो जाटस्तद्वान् जटावान्—यप्-प्रत्ययः "रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्" (अष्टाध्यायी ५।२।१२०) वा० अन्येभ्यो ऽपि दृश्यते।

अर्थात्—"रूपादाहतप्रशंसयोर्यप् (अष्टा० ५।२।१२०) सूत्र पर 'अन्येभ्यो ऽपि दृश्यते' वार्तिक से 'मतुप्' अर्थ में 'जटा' शब्द से 'यप्' प्रत्यय और पुनः स्वार्थ

---

१८. 'वेदार्थ-दीपक निरुक्तभाष्य' पूर्वार्ध, पृष्ठ ५८, [माघ संवत् १९८१ जनवरी सन् १९२५ ई०, प्रथमावृत्ति, हरिद्वार]।

१९. 'निरुक्त भाषाभाष्य', पृष्ठ ६१, [सन् १९१४ ई० में बाम्बे मशीन प्रेस, लाहौर में मुद्रित व आर्ष ग्रन्थावलि लाहौर द्वारा प्रकाशित प्रथम संस्करण]।

२०. 'निरुक्तशास्त्रम् भाषार्थ तथा भाषाभाष्य', पृष्ठ ४३, [संवत् २०२१ वि० में श्री रामलाल कपूर निक्षेप निधि (ट्रस्ट) अमृतसर द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२१. 'निरुक्तम्', पृष्ठ ९१, [पौष संवत् २०२२ वि०, सन् १९६६ जनवरी में ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी-१ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२२. 'निरुक्तसम्मर्शः', पृष्ठ ४५, [संवत् २०२३ वि० सन् १९६६ ई० में भाष्यकार द्वारा प्रकाशित, व आर्य साहित्य मण्डल लि० अजमेर द्वारा प्राप्य, प्रथम संस्करण]।

२३. 'निरुक्तम्', पृष्ठ ३९, [सन् १९६३ ई० में मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, अध्यक्ष संस्कृत पुस्तकालय, २७३६ कूचा चेलां, दरियागंज, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित, प्रथम साधारण संस्करण]।

२४. 'निघण्टु तथा निरुक्त', पृष्ठ ३७, [सन् १९६७ ई० में मोतीलाल बनारसीदास, बंगला रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]

में 'अण्'। जट्यः एव जाट्य=जटावान्।

सभी ने 'जटावान्, जटावाला अर्थ किया है। इससे 'जाट' शब्द का बोध प्रतीत नहीं होता है। दहियाजी की यह क्लिष्ट कल्पना है।

डॉ० देशराज ने मासिक पत्र 'विशाल भारत' कलकत्ता, भाग २६, नवम्बर १९४० ई०, अंक ५, पृष्ठ ४८५ से ४८८ तक 'भारतीय इतिहास में जाटों का स्थान' शीर्षक एक लेख प्रकाशित करवाया था। उससे जाटों के सम्बन्ध में बहुत सी बातों का ज्ञान होता है। वह लेख इस प्रकार है—

जाट जाति भारत में जट, जटऽ और जाट नाम से मशहूर है। यूरोपियन और अरबी लेखकोंने उसे जेटी, जिट, गाथ और जत (जात) नामों से याद किया है। संस्कृत-साहित्य में जट, जर्टा और जात नामों से उनका उल्लेख मिलता है। पाणिनि ने जट को संघवाची शब्दों की सूची में दिया है। साधारणतया अन्य कोषों में भी जाट के अर्थ संहति और समूह दिये हैं। 'हिस्ट्री आफ़ दी जटस्' के लेखक प्रोफ़ेसर कालिकारंजन कानूनगो ने जाट शब्द का परिचय इस प्रकार दिया है—

The ancient Yadavas, like the modern Jats, were not a homogeneous tribe but a composite race rather confederacy of tribes, consisting of Andakas, Bhojas, Kukkuras, Dasharnas etc. Profile were the progeny of Yadu; so are the Jats today.

अर्थात् पुराने यादव आजकल के जाटों की भाँति ही जाति के न थे, बल्कि एक सम्मिश्रित-जाति और जातियों का संघ था, जिसमें कि अन्धक, भोज, कुक्कुर व दशार्ण आदि क़ौमें शामिल थीं। जिस प्रकार यदु बहुत थे, उसी प्रकार आजकल के जाट हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि जाट संघवाची समूह है और इस समूह में अनेक सामरिक वंश शामिल हैं। उदाहरण के लिए भरतपुर के जाट-नरेश यदुवंशी* और धौलपुर के शिविवंशी हैं। पुराने क्षत्रिय वंश मद्र, नव, वृष, शूर, वृष्णि और दशार्णों के खानदान जहाँ उनमें शामिल हैं, वहाँ बौद्धकाल के भी अनेक वंशों का उनमें शामिल होना मालूम हुआ।

प्रोफ़ेसर कालिकारंजन क़ानूनगो के कथनानुसार उनमें प्रजातंत्री सिद्धान्तों की

---

* 'बुलन्दशहर गजेटियर' राजा लक्ष्मणसिंह कृत।

मान्यता अधिकांश में रही है। अन्य अंगरेज लेखकों ने उन्हें अराट्ट और अवार (राजारहित शासन संघ) के नामों से भी सम्बोधित किया है। जाटों के सम्बन्ध में जनश्रुति है कि वे शिवजी के गणों में से निकले हैं किन्तु ऐतिहासिक सचाई यह है कि भारत में शिवियों का गण-राज्य था। 'ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स आफ दी नार्थ वैस्टर्न प्रॉविन्सेज एण्ड अवध" में मिस्टर डब्ल्यू० कुर्क साहब ने लिखा है—

"The Jats of the south-eastern provinces divide themselves into two sections : Shivigotri or of the family of Shiva and Kashyapagotri."

अर्थात्—दक्षिण-पूर्वी प्रांतों के जाट अपने को दो भागों में विभक्त करते हैं। एक तो शिवि-गोत्री या शिव के वंशज और दूसरे कश्यप-गोत्री।

अब हमें यह देखना है कि विभिन्न राजवंशों का यह संघ (जाट) बना कब? भारतीय इतिहास में इस प्रकार के संघ की चर्चा हम महाभारत में पढ़ते हैं। भगवान् कृष्ण ने द्वारिकाद्वीप में अन्धक, भोज और कुक्कुर आदि लोगों का एक संघ कायम किया था। इससे भी पूर्व हम पंजाब में वाहलीक जाति के अनेक वंशों का संघ पाते हैं। बौद्ध काल में वैशाली में आठ राजवंशों का एक संघ था, जो लिच्छिवि-गण के नाम से प्रसिद्ध था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र, मनु और याज्ञवल्क्य की स्मृतियों में संघों के प्रकार भी बताये हैं। उनमें ग्राम-संघ, जनपद-संघ और कुल-संघों का विशद वर्णन है। ऊपर हम जिस प्रकार के संघ का उल्लेख कर आये हैं, वह कुल-संघ था और कुलों के संगठन से बना हुआ राष्ट्र 'जात-राष्ट्र' कहलाता था। जात-राष्ट्र के सिद्धान्तों में विश्वास रखनेवाले व्यक्ति और कुल-कालान्तर में जात और अनेक प्रांतिक प्राकृत-भाषाओं के उच्चारण-भेद से जाट, जट, जटा, ज्ञात, जर्टा, जेटी, जेटा और गाथ नामों से मशहूर हुए। संक्षेप में हम इस बात को इस प्रकार कह सकते हैं कि 'जाट' जाति अनेक राज-वंशों का एक ऐसा संघ है, जो जाति-राष्ट्र के सिद्धान्तों को मानकर एक संगठन में आबद्ध हुए हैं।

महाभारत-काल के बाद जो इतिहास हमें उपलब्ध होता है, उसमें जाटों के प्रबल पराक्रम का परिचय फारस के सम्राट् दारयवहु (डेरियस) के भारत-आक्रमण के समय (ईस्वी पूर्व ५३०-५२८) मिलता है। यह डेरियस प्रथम था। सिकन्दर से लड़नेवाला डेरियस दूसरा है। कहा जाता है कि जाटों ने इसका सामना पश्चिमी सागर में किया था, जहाँ से इसके साथियों में से केवल सात बच सके थे।

स्ट्राबो और हैरोडोटस ने साइरस के साथ जाटों के युद्ध होने की बात भी लिखी है। कहा जाता है कि बादशाह साइरस ने जेहुन नदी के निकारे बसनेवाले जाटों पर हमला किया। रानी तमिस्रा (जिसे यूनानी लेखकों ने टोमरिसा लिखा है) अपनी सेना लेकर मुकाबिले के लिए आई। पहली लड़ाई में जाटों की जीत हुई। साइरस ने अपनी सेना के अपरिमित खाद्य पदार्थों में नशीली चीजें मिलवा दीं और भागते समय अन्य सामग्री के साथ उन्हें भी छोड़ गया। जाट लोग विजयोन्माद में उन पदार्थों को लूट-लूटकर खा गये, जिनसे वे थोड़ी ही देर बाद उन्मत्त होकर नाचने-कूदने लगे। इसी समय साइरस ने हमला करके हजारों जाटों को मौत के घाट उतारा। उनकी अधीश्वरी रानी तमिस्रा सतलज की ओर भाग गई। इस वर्णन में सचाई कितनी है, यह अभी तक तय नहीं हो सका है। कुछ लोग इसे पीतसागर में, कुछ सिन्ध सागर में और कुछ उत्तर भारत के ऊपर के देश में मानते हैं।

हमारे मत में ईस्वी पूर्व उनकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लड़ाई सिकन्दर महान् के साथ ईरान और भारत की भूमि पर हुई है। उन दिनों ईरान में एक जाटालि प्रान्त था। दारा की सहायता के लिए ये भारतीय ईरानी (इण्डोसिथक) जाट १५ हाथी और २०० रथ लेकर लड़ाई के मैदान में पहुँचे थे। यूनानी लेखकों ने लिखा है कि प्रत्येक जाट ने युद्ध के समय ऐसा पराक्रम दिखाया मानो उसे अपने बाहुबल के आधार पर ही अपनी विजय में पूर्ण विश्वास है। ये इण्डोसीथिक (ईरानी जाट) वीर अपने घुड़सवारों को यूनानियों की कमानवाली सेना में घुसा ले गये। तब सिकन्दर को स्वयं आगे बढ़ना पड़ा। तीर चलाने में ये विलक्षण योग्यतावाले थे। बड़ी बहादुरी के साथ यूनानियों से भिड़े किन्तु अर्बोला के मैदान में दारा के भाग्य में पराजय लिखी थी। मिलटन ने लिखा है कि सिकन्दर ने जीत के उपलक्ष में बलख में समारोह किया, जहाँ पर कि कैथीज नाम के एक जाट सरदार का आधिपत्य था। वहीं युद्ध में पकड़े गये समस्त जाट कैदी सिकन्दर ने छोड़ दिये। इसके बाद अभिसार होता हुआ सिकन्दर ज्यों ही पंजाब में उतरा वे राजा पौरुष के नेतृत्व में झेलम के किनारे सिकन्दर से फिर भिड़ गये।* सिकन्दर के साथ आये यूनानी लेखकों ने जिन अस्सिकेनी, मूसिक और मलोई, शिवोई आदि जातियों

---

* राजा पौरुष मद्र जाट थे।

का वर्णन किया है, स्ट्राबो ने उन्हें जाट जाति की शाखाएँ लिखा है।*

सिकन्दर के बाद जाटों के अपूर्व युद्ध-कौशल का आंशिक वर्णन चान्द्र व्याकरण के 'अजयज्जर्टा हूणान्' में मिलता है। डाक्टर काशीप्रसाद जायसवाल का कथन है कि यह वाक्य गुप्त सम्राट् स्कन्धगुप्त पर लागू होता है क्योंकि उन्होंने हूणों को हराया था। गुप्त कारस्कर वंश की धारणा शाखा के जाट थे। श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य अपने 'मध्यकालीन हिन्दू भारत' के इतिहास में व्याकरण के इस वाक्य को मालवा-नरेश महाराजा यशोधर्मा पर लागू करते हैं और कहते हैं—'वर्द्धन नरेश जाट थे पर वास्तविक बात संभवतः यह है कि यह वाक्य उन समस्त जाट नरेशों पर लागू होता है, जो हूणों से लड़े थे। इन लड़नेवालों में गुप्त, मौखरि, वर्द्धन और धर्मन भी थे। सन् ५२९ ई० में महाराजा यशोधर्मा मन्दसौर, वर्धन (नरसिंह) गुप्त मगध, प्रभाकरवर्द्धन थानेसर और आदित्य धर्मा मौखरी कन्नौज की सम्मिलित शक्ति ने कहरूर के मैदान में हूणों को पराभूत किया था। ये समस्त राजवंश आपस में सम्बन्धी थे। चन्द्र ने, जो कि सातवीं सदी के आरम्भिक वर्षों में मौजूद था, अपने व्याकरण में वाक्य-रचना के एक उदाहरण में 'अजयज्जर्टा हूणान्' का प्रयोग किया है, जिसका अर्थ है 'जाट हूणों पर विजयी हुए।'

ऐतिहासिक अनुसंधानों द्वारा प्राप्त हुए प्रबल प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध होने पर कि गुप्त, वर्द्धन, धर्मन और मौखरि लोग जाट थे, भारत के इतिहास में जाटों का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह बात बहुत दूर तक प्रमाणित हो चुकी है कि भारत के प्रसिद्ध प्रजातन्त्री जत्थे शिवि, मद्र, नव, वृष, वृष्णि और कुक्कुर जाट थे। मौर्य और कुशान सम्राट् सिवा जाटों के और कुछ नहीं हैं। 'बम्बई गजेटियर' जिल्द ४, भाग १, पृष्ठ ४५९ पर सर जेम्स कैम्पबैल ने लिखा है कि उनका प्रमुख प्रतिनिधि कनिष्क था।

सबसे अधिक नुकसान जाटों को तैमूर का सामना करने और महमूद ग़ज़नवी को लूटने के बदले में उठाना पड़ा था। तारीख़ फ़रिश्ता के आधार पर महमूद ग़ज़नवी के साथ युद्ध होने का वर्णन एक लेखक ने इस प्रकार किया है—"सोमनाथ की लूट और गुजरात-विजय के बाद जिस समय महमूद अपने स्वदेश को लौट रहा

* टाड राजस्थान, परिशिष्ट ६।

था, तो सिन्धु के जाटों ने उसपर अचानक हमला किया और उसे बहुत तंग किया। सैकड़ों स्त्री-बच्चों को, जिन्हें महमूद गुलाम बनाकर अपने साथ लिये जा रहा था, जाटों ने छुड़ा लिया। महमूद को इससे बड़ा गुस्सा आया, और दूसरे वर्ष —सन् १०२६ ई० में जाटों को खास तौर से नष्ट करने के लिए उसने पंजाब पर चढ़ाई की। भारत में आकर उसने सुना कि इधर के जाट नाविक युद्ध में बड़े चतुर हैं और वे नदियों के बीच में ही अधिक संख्या में बसे हुए हैं। इस पर उसने मुल्तान में पन्द्रह सौ नावें तैयार कराईं, और हरेक नाव में छह-छह लोहे की तीक्ष्ण शलाखें लगवायीं, जिनसे टक्कर खाते ही शत्रु की नाव फट जाए। इधर जाट भी झेलम नदी में चार हजार नावें लेकर आये। उन्होंने अपने स्त्री-बच्चों को सिन्धु द्वीप में भेज दिया। महमूद की हरेक नाव पर बीस आदमी लम्बे-लम्बे बर्छे और तीर-कमान लेकर बैठे थे। दोनों ओर से भयंकर लड़ाई हुई। जाटों की अधिकांश नावें गजनवी की नावों से टकराकर गर्क हो गयीं और जाट बुरी तरह परास्त हुए।" यह ठीक है कि उनके करीब पचास हजार आदमी इस लड़ाई में खत्म हो गये, किन्तु महमूद की भी फिर दुबारा भारत पर आक्रमण करने की हिम्मत नहीं रही।

तैमूरलंग ने खुद अपनी जीवनी में लिखा है कि, "हिन्दुस्तान में, मुझे सबसे अधिक दिक्कत जाटों को बरबाद करने में उठानी पड़ी।" यह कौन नहीं जानता कि तैमूर ने गाँवों में आग लगवाकर उन्हें बरबाद करने की कोशिश की, किन्तु वे फिर भी कायम रहे। जाटों ने न केवल उनका बल्कि उसके बाद आनेवाले प्रत्येक विदेशी आक्रान्ता का डटकर मुकाबिला किया। नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली सबको उन्होंने नाकों चने चबवाये। पंजाब में 'घल्लूघारा' का किस्सा बड़ा मशहूर है। राजपूत-इतिहास में जो दर्जा हल्दीघाटी का है, सिख-इतिहास में वही दर्जा 'घल्लूघारा' का है। इसमें दुर्रानी बादशाह और सिख जाटों का अन्तिम फैसला हुआ था। उमरकोट (सिन्ध) के पास उन्होंने हुमायूँ के भी दाँत खट्टे किये थे। इस प्रकार ईस्वी पूर्व कई शताब्दी पहले से, जबसे कि भारत पर शत्रुओं के आक्रमण होने आरम्भ हुए, जाटों ने भारत की स्वतन्त्रता और मर्यादा को कायम रखने के लिए सदैव अपने प्राणों की बलि दी है। स्वदेश के इन वीर प्रहरियों ने सदियों तक अकेले ही शत्रुओं का सामना किया है।

राजपूतों और मुसलमानों का संघर्ष मुख्यतः पृथ्वीराज चौहान के समय

(तेरहवीं सदी) से आरम्भ होता है। इससे पहले बप्पा रावल ने अवश्य उनसे युद्ध किया था; किन्तु जाट भारत के फाटक पर आबाद होने के कारण सदैव ही बलिदान के लिए तैयार रहे हैं। पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति ने जाट-इतिहास की भूमिका में लिखा है—"जाट जाति के दो बड़े गुण हैं—एक तो यह कि वे किसी एक सत्ता को देर तक सिर झुकाकर नहीं मान सकते और दूसरा यह कि वह धार्मिक या सामाजिक रूढ़ियों की अत्यन्त दासता से घबराते हैं। इन्हीं गुणों का प्रभाव था कि वे ७०० वर्षों तक मुसलमानों के शासन में रहे, परन्तु रहे प्रायः विद्रोही बनकर ही।" हमें खूब मालूम है कि दिल्ली में जिन दिनों पठानों और मुगलों का संसारव्यापी दबदबा था, उन दिनों भी रोहतक के जाट आसानी और इच्छा से किसी भी वर्ष भूमि-कर न देते थे। इस बात को आज तक भी वहाँ इस प्रकार गाया जाता है—"अपनी बोई आप खात हैं, नहिं देंहि किसी को दाना। बागरिया मत जानियो, यह है देस हरियाना।"

किसी भी हुकूमत से इन्हें कभी भी डर नहीं रहा। जब गुलाम-बादशाहों में गृह-कलह हुआ, तो रजिया बेगम सब जगह से निराश होकर जाटों की शरण में गई। जाटों ने सहायता दी किन्तु विजय उस अभागिन के नसीब में ही न थी।* तैमूर की भटनेर की लड़ाई में उनको इतनी क्षति हुई कि प्रायः दो शताब्दी तक वे सँभल न पाये, किन्तु सोलहवीं शताब्दी से फिर उन्होंने सँभलना आरम्भ किया। सत्रहवीं और अठाहरवीं शताब्दी में वे इतने जोर से आगे आये कि उनके वेग को रोकना मुस्लिम-शक्तियों को मुश्किल हो गया। पंजाब में गुरु गोविन्दसिंह के मन्त्र से दीक्षित होकर वे मिस्लों के रूप में संगठित हुए और ब्रज में वीर गोकुला की अध्यक्षता में उन्होंने बगावत का झण्डा उठाया। पंजाब के सिखों की १२ मिस्लों में से ८ मिस्लें (जत्थे) जाटों के थे। महाराजा रणजीतसिंहजी के नेतृत्व में उन्होंने समस्त पंजाब पर ही अपना प्रभुत्व नहीं जमा लिया, वरन् उत्तर में समस्त काश्मीर तथा सीमा-प्रान्त और पश्चिम में आधा सिन्ध उनके अधिकार में आ गया। जो पठान भारत पर आक्रमण करना बाएँ हाथ का खेल समझने लग गये थे, उन्हें अब अपने ही देश की रक्षा करना मुश्किल हो गया। आधी शताब्दी तक काबुल के बादशाह जाटों की सहायता के मुहताज रहे और उनका भाग्य पंजाब-

* वाकये राजपूताना, जिल्द ३।

केसरी महाराजा रणजीतसिंहजी के हाथों में बँधा रहा। इन घटनाओं का जिक्र करते हुए भाई परमानन्दजी ने लिखा है—"एक शब्द में इतना कह देना जरूरी है कि पंजाब में खालसा-राज्य स्थापित करके सीमाप्रान्त की तमाम पठान जातियों को अपने अधीन करना और अफगानिस्तान के पठानों को कई बार हरा देना, जो कि हमारी जाति के इतिहास में एक अचम्भा समझा जाता है, जाट जाति के वीरों का ही काम था। मैं इतना कह देना चाहता हूँ कि इस देश में क्षत्रिय के कर्तव्य का जाटों ने यदि राजपूतों से बढ़कर नहीं तो कम भी पालन नहीं किया है।"

मुस्लिम-साम्राज्य को भारत से खत्म करने में जाटों का मराठों से कम महत्त्व-पूर्ण योग नहीं रहा है। आज भी भारत में मुस्लिम-साम्राज्य के खात्मे के चिह्न-स्वरूप भरतपुर, धौलपुर, नाभा, जीन्द, पटियाला, फरीदकोट और कलसिया जैसी रियासतें हैं। ये रियासतें उन्होंने किन्हीं हिन्दू रईसों से छीनकर नहीं लीं; वरन् मुगलों-पठानों के आततायी शासन को समाप्त करके ली हैं। यदि राजपूतों की तरह वे अंग्रेजों के आरम्भ से ही दोस्त बन जाते और उनके विरुद्ध उन्नीसवीं सदी में बगावत का झण्डा न खड़ा करते, तो उनके राज्य की सीमा खैबरघाटी से मानसरोवर तक और वजीरी प्रदेश से सतलज तक होती। यू० पी० के मथुरा, आगरा और अलीगढ़ के जिले राजा महेन्द्रप्रताप के बन्धुगढ़ मुरसान नरेशों के पास होते। किन्तु यह कैसे हो सकता था कि जब वे यूनानी, ईरानी, तातारी, दुर्रानी, मुगल और पठान सभी से लड़े थे, तो अंग्रेजों को अपने पराक्रम का परिचय नहीं देते। पंजाब और ब्रज में दोनों ही जगह उन्होंने अंग्रेजों के दाँत खट्टे किये, चाहे फिर वे हारे ही हों, किन्तु उन्होंने अंग्रेजों की ही कलम से लिखा लिया कि, "जाट संसार की सामरिक जातियों में से किसी से कम नहीं हैं।" भरतपुर में तो उनकी वीरता इस दर्जे पर पहुँची कि यह लोकोक्ति चल पड़ी—"आठ फिरंगी नौ गोरा, लड़े जाट के दो छोरा।" इसी बात को श्री वियोगी हरि ने अपनी 'वीर सतसई' में इस प्रकार व्यक्त किया है—

यही भरतपुर दुर्ग है, दुजय दीर्घ भयकारि।
जहँ जट्टन के छोहरे, दिये सुभट्ट पछारि॥

ब्रज में भरतपुर के राजागण इतने लोकप्रिय हैं कि वे 'ब्रजेन्द्र' कहे जाते हैं। उनकी लोकप्रियता का पता तो उस समय चला था जब प्रतापी जवाहरसिंह ने (सन्

१७६५ ई० में) दिल्ली को आततायियों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए उसपर आक्रमण किया था। लाखों ब्रजवासी उनके साथ हो लिये थे, उनमें कुछ लोग तो ऐसे भी थे जिन्होंने अपने खेतों पर समाचार सुना और वहीं से सीधे दिल्ली को चल पड़े थे। दिल्ली की इस भयानक लूट को इतिहासकार 'जाटगर्दी' के नाम से पुकारते हैं।

स्वाभिमान और प्रण की रक्षा में जाट राजपूतों से कम हठीले नहीं हैं। उनके मुँह से एक बार जो बात निकल जाए, उसे वे सर्वस्व होमकर भी पूरा करने की कोशिश करते हैं। अंग्रेजों से भरतपुर की कम्पनी सरकार की इच्छानुसार सन्धि हो चुकी थी, किन्तु स्वतन्त्रता का पुजारी होलकर समस्त राजपूत राजाओं से निराश होकर जब भरतपुर पहुँचा, तो भरतपुर नरेश ने उसे अपना दीग का मजबूत किला सौंप दिया। अंग्रेजों के सेनापति लार्ड लेक ने जब भरतपुर नरेश से पूछा कि आप अंग्रेजों से लड़ाई करने और होलकर को अपने आश्रय से निकाल देने में से किसे पसन्द करते हैं तो तत्कालीन भरतपुर नरेश महाराज रणजीतसिंहजी ने कहा था—"हमने होलकर को दीग में बैठने का वचन दे दिया है, उसे तो हर हालत में निभायेंगे ही।" और उसे निभाया भी। इसीलिए ब्रज में कहा जाता है—"गूजर टेक अहीर हट जाट कही सो कही।" हाथरस और मुरसान के राजाओं ने भी अपने वचन के पीछे ही अपने राज्यों को गँवाया था। जब सासनी के अधिपति के पास लार्ड लेक का पत्र अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार करने और सासनी को अंग्रेजों के हवाले कर देने का पहुँचा तो राजकुमारों ने कहा था—"बिना लड़े हम सासनी को कैसे दे सकते हैं?" ग्वालियर के किशन नाम के कवि ने इस बात को इस प्रकार पद्यबद्ध किया है—"पत्री को देख बेटे पहुपसिंह के बोले। गढ़ देवेंगे मगर जरा जंग तो होले। क्या याद करेगा हमें धाया है फिरंगी?"

इस प्रकार जाटों का जितना भी इतिहास है, वह वीरता और शौर्य्य से तो पूर्ण है ही, किन्तु स्वदेश-भक्ति और स्वाभिमान के लिए मर मिटने की घटनाओं से भी खाली नहीं है। वर्तमान भारत के निर्माण के लिए देश में जो भी प्रयत्न हो रहे हैं, जाटों ने उसमें भी यथोचित भाग लिया है। विश्व-प्रेमी राजा महेन्द्रप्रताप को कौन नहीं जानता? अन्य लोगों के सम्बन्ध में विशेष कुछ लिखने का समय शायद अभी नहीं आया है।

डॉ० राजबली पाण्डेय एम०ए०, डी०लिट्०, विद्यारत्न, आचार्य एवं अध्यक्ष प्राचीन भारतीय इतिहास तथा संस्कृत विभाग, भाषा शोधसंस्थान, जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर तथा भूतपूर्व प्राचार्य भारती महाविद्यालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय 'जाट' शब्द के सम्बन्ध में लिखते हैं—

" 'जाट' शब्द 'यादव' से न निकलकर 'धार्ष्ट' (धृष्ट के वंशज) से व्युत्पन्न हैं। यादव से जाटव बन जाएगा किन्तु जाट नहीं।"[२५]

'आरट्टा' का अर्थ कुछ लोग 'जाट' करते हैं—

"आरट्टा नाम ते देशा नष्टधर्मा न तान् व्रजेत्॥ ३३॥
आरट्टा नाम वाहीका न तेष्वार्यो द्वयहं वसेत्॥ ४१॥"

—[महाभारत, कर्णपर्व, अध्याय ४४]*

यहाँ **डॉ० सुरेन्द्रकुमार शर्मा एम० ए०** 'अरट्टा' का अर्थ 'जाट' करते हैं—

"वहाँ आरट्टा (जाट) लोग रहते हैं।··· वह आरट्टा (जाट) नाम के पंजाबियों (वाहीक) का इलाका है···।"[२६]

इस पर टिप्पणी करते हुए **श्री खुशवन्तसिंह** ने लिखा है—

"जाटों में स्वतन्त्रता और समानता की भावना थी।··· (देखें, ए हिस्टरी आफ सिक्स, जिल्द १, पृष्ट १५)[२७]

'जाटों' के क्षत्रित्व पर विचार

'जाट' अहीर, गूजर तीनों एक ही श्रेणी की जातियाँ हैं। ये शुद्ध क्षत्रिय हैं।

(१) "महाभारत युद्ध के पश्चात् राजसूय यज्ञ के समय पर भारत के सभी राजाओं ने महाराज युधिष्ठिर को ज्येष्ठ की पदवी दी थी। उन्हीं के वंश के लोग

---

२५. 'यदुवंश का इतिहास' पृष्ठ २३८ की पाद टिप्पणी सं० २, [श्री कृष्ण प्रकाशन, दारानगर, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

* गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा वि० संवत् २०२६ में प्रकाशित, तृतीय संस्करण; पृष्ट ३८९४-३८९५।

२६. पाक्षिक पत्रिका 'सरिता', नई दिल्ली, सितम्बर (द्वितीय) १९८२ ई०, अंक ६५८, पृष्ठ ९१-९२।

२७. वही, पृष्ठ ९२।

आगे चलकर के 'ज्येष्ठ' से 'जाट' कहलाने लगे।"[1]

(२) **श्री नेशफील्ड** लिखते हैं—"The word Jat is nothing more than the modern Hindi pronounciation of Yadu or Jadu the tribe in which Krishna was born."[2]

अर्थात्—"जाट शब्द यदु वा जदु के वर्तमान हिन्दी उच्चारण के अतिरिक्त कोई अन्य शब्द नहीं है, यह वही जाति है जिसमें कृष्णजी उत्पन्न हुए थे।"

(३) **पं० परमेश शर्मा एम० ए०** का विचार है—"जाट आर्यपुत्र, भारत की सन्तान हैं और ब्रजमण्डल तथा मालवा के मूल निवासी हैं। सम्पूर्ण जाट अपने-आपको एक स्वर से यादव (चन्द्रवंशी) सन्तान मानते हैं, जबकि इनमें सूर्यवंश अथवा अग्निकुलीन (राजपूत) शाखाओं के जाट भी मिलते हैं।"[3]

(४) **डॉ० महेन्द्र कुमार शास्त्री**, बम्बई ३१ (भूतपूर्व सम्पादक 'वेदवाणी') का विचार है— "···अनेक इतिहासज्ञ गुप्तों को जाट ही सिद्ध करते हैं। प्रसिद्ध ऐतिहासिक काशीप्रसाद जायसवाल ने भी इन्हें जाट ही माना है। उनके अनुसार पंजाब के जाटों का एक धरण गोत्र है। वही धरण गोत्र इन गुप्त सम्राटों का था।

इनके नाम के आगे 'गुप्त' पद लगने से अनेक इन्हें वैश्य (अग्रवाल) समझते हैं किन्तु यह गलत है, क्योंकि आजकल "गुप्त" शब्द नाम से अलग बाँक (Surname) के रूप में प्रचलित है जैसे रामप्रसाद गुप्त। इस प्रकार के नाम गुप्त सम्राटों के नहीं हैं। वहाँ तो यह गुप्त शब्द नाम के साथ है। यथा—'चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त' यदि गुप्त को अलग कर दिया जाए तो नाम अधूरा रह जाता है। वस्तुतः "गोप्ता" (रक्षक) का सूक्ष्म रूप 'गुप्त' बन गया दीखता है। कालिदास ने इसी अर्थ

---

१. 'जाट इतिहास', पृष्ठ ८४।

२. वही, पृष्ठ ८४; तुलना करो श्री राजपाल सिंह शास्त्री तथा श्री परमेश शर्मा एम० ए० द्वारा सम्पादित 'क्षत्रियों का इतिहास' (भूमिका तथा जाट वंशावली), प्रथम भाग, पृष्ठ २९ [८ अप्रैल, १९७८ ई० में मधुर प्रकाशन, आर्यसमाज मन्दिर, बाजार सीताराम, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

३. 'क्षत्रियों का इतिहास' (भूमिका तथा जाट वंशावली), प्रथम भाग, पृष्ठ २९-३०।

में यह शब्द प्रयुक्त किया है। यथा "आ समुद्रगोप्तानां" समुद्र-पर्यन्त पृथ्वी का पालन करनेवाले सम्राट्। इसलिए सम्भव है इसी अर्थ में गुप्त सम्राटों ने अपने नाम के साथ यह शब्द जोड़ लिया हो। कुछ भी हो, ध्रुवस्वामिनी के देवर के साथ पुनर्विवाह ने इन्हें जाट ही सिद्ध किया है।"[4]

(५) 'गुप्तवंश' को **डॉ० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा** डी० लिट्०, राय-बहादुर, महामहोपाध्याय क्षत्रिय मानते हुए लिखते हैं—

"गुप्तवंशी राजा किस वंश के थे इसका कुछ भी उल्लेख उनके पहले के शिलालेखादि में तो नहीं मिलता। परन्तु उक्त वंश के पिछले समय के राजाओं के लेखों में उनका चन्द्रवंशी होना लिखा है।··· गुप्तवंशियों का विवाह-सम्बन्ध लिच्छिवी* और वाकाटक आदि क्षत्रिय वंशों के साथ होने के प्रमाण मिलते हैं, जो उनका क्षत्रिय होना ही बतलाते हैं।"[5]

डॉ० काशी प्रसाद जायसवाल[6] के मतानुसार गुप्त लोग 'कारस्कर' गोत्र के जाट थे, जो प्रारम्भ में पंजाब से आये थे। उनके प्रतिनिधि आज कक्कड़ जाट हैं।

जायसवाल जी लिखते हैं—"कई भिन्न-भिन्न साधनों से इस एक ही बात का पता चलता है कि गुप्त लोग कारस्कर जाट थे, जो पंजाब से चलकर आये थे। मेरी समझ में आजकल के कक्कड़‡ जाट उसी मूल समाज के प्रतिनिधि हैं, जिस समाज के गुप्त लोग थे। कारस्करों में गुप्त लोग जिस विशिष्ट उपविभाग के थे, उसका नाम धारण था। प्रभावती गुप्ता के अभिलेख (पूना प्लेट्स) में जो 'गोत्र'

---

४. 'क्षत्रियों का इतिहास', (भूमिका तथा जाट वंशावली), प्रथम भाग, पृष्ठ २६०।

* 'लिच्छिवी' को ओझाजी क्षत्रिय मानते हैं—(लेखक)

५. 'राजपूताने का इतिहास' जिल्द पहली, पृष्ठ १२७ से १२९ तक, [विक्रम संवत् १९९३ वि० में वैदिक यन्त्रालय, अजमेर द्वारा मुद्रित व व्यास एण्ड सन्स, पुस्तक विक्रेता, अजमेर द्वारा प्राप्य, द्वितीय संस्करण]।

६. JBORS, १९, मार्च + जून, १९३३ ई०।

‡ मिलाओ रोजकृत Glossary २.३६३ पाद-टिप्पणी। इस नाम का उच्चारण 'कक्कड़' भी होता है।

शब्द आया है, उसका मतलब जातीय उप-विभाग से ही है। अमृतसर में धारी नाम के एक प्रकार के जाट पाये जाते हैं* और इस "धारी" शब्द की तुलना हम प्रभावती गुप्ता के संस्कृत शब्द 'धारण' से कर सकते हैं। इस बात का पूरा-पूरा समर्थन कौमुदी-महोत्सव से भी होता है और चन्द्रगोभिन् से भी होता है जो निस्सन्देह एक गुप्त ग्रन्थकार था।..."[७]

इसका समर्थन **श्री बी० एस० दहिया** ने भी किया है।[८]

(७) ग्रियर्सन (इण्डियन इपिग्राफिया, जिल्द ४३-४६), व जेम्स केम्पबेल (बॉम्बे गजेटियर, जिल्द ९, भाग १०, पृष्ठ ४६१) ने लिखा है कि महाभारत में मद्रकों के साथ जाटतृकों का उल्लेख मिलता है, अतः सम्भवतः जाट इनके ही वंशज हैं।"[९]

(८) **इतिहासवेत्ता ठा० जगदीशसिंह गहलोत** एम० आर० ए० एस०, विद्याविनोद का विचार है—"राजपूतों व जाटों में यदि विशेषरूप से भिन्नताएँ मिलती हैं तो वे ये हैं कि जाटों में विधवा विवाह का होना, स्त्रियों में पर्दा-प्रथा का न होना, उत्पादन एवं श्रम को महत्त्व देना, वर्गवाद में विश्वास नहीं करना तथा वंशानुगत अधिकारों में कम विश्वास करना आदि। राजपूतों में यह बातें उतनी मात्रा में नहीं मिलती हैं। इन्हीं कारणों से राजपूत व जाट आर्य क्षत्रियों में से होते हुए भी अलग-अलग दिखाई पड़ते हैं। यों इनका 'शारीरिक गठन, सैनिक-सेवा, गोत्रों आदि की समानता राजपूतों जैसी ही है और वैसे ही गोत्र (गहलोत, दाहिया, पँवार, सोलंकी, यादव, तंवर, मोर आदि) दोनों में मिलते हैं। वस्तुतः दोनों वंश एक ही लगते हैं। रोहतक जिले के जाट आज भी अपने को क्षत्रिय ही बतलाते हैं।

---

* Glossary of Tribes & Castes of the Punjab & N.W. Frontier, खण्ड २, पृष्ठ २३५।

७. 'अन्धकारयुगीन भारत', पृष्ठ २५१-२५२, [संवत् १९९५ वि० में नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

८. 'Jats the Ancient Rulers' (A Clan Study) p. 175 to 188.

९. इतिहासज्ञ ठा० जगदीशसिंह गहलोत लिखित 'ऐतिहासिक लेखमाला' पृष्ठ ७३, [हिन्दी साहित्य मन्दिर, मेड़ती गेट के अन्दर, जोधपुर द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

ज्यादातर जाट राजपूताना के पश्चिमी व उत्तर-पूर्वी भाग, पंजाब के पश्चिमी भाग व दिल्ली में रहते हैं। यों वे सिन्ध व सौराष्ट्र में भी जट कहलाते हैं। जाटों में ज्यादातर हिन्दू व सिक्ख धर्मावलम्बी हैं लेकिन पंजाब में मुस्लिम भी काफी हैं। जाटों के मुख्य गोत्र हैं—पुनिया, बेनीवाल, लोहिया, आसायच, सारण, गौदारा, बागोरा, मोहिल और खारीपट्टा।..."[१०]

(९) **भाई परमानन्दजी एम० ए०** का विचार है—"ऐसा मालूम पड़ता है यादु नस्ल की एक शाख जाट कहलाने लगी। जाट और यादु लफ्ज एक-दूसरे से बहुत मिलते-जुलते हैं। यादुओं के हैहय कबीले की एक शाखा का नाम जात या सुजात था। यह भी कहा जाता है कि कश्यप ऋषि ने अग्निकुल राजपूतों की तरह जाटों को भी क्षत्रिय बनाया। नस्ल के लिहाज से जाट बिल्कुल राजपूतों से मिलते हैं। राजपूत लोग उन्हें इसलिए अपने से छोटा समझते हैं कि उनमें करेवा का रिवाज पाया जाता है। लेकिन गौर करने पर यह भी नतीजा निकल सकता है कि जाट हिन्दू समाज की उस हालत से ज्यादा मिलते हैं जो कि पुराणों के पहिले पाई जाती थी। देवर लफ्ज के मानी दूसरे पति के है। दूसरी कई बातों से भी यह मालूम होता है कि जाटों पर बनिस्पत दूसरे हिन्दुओं के पुराणों की तालीम का बहुत कम असर हुआ है। मसलन जाट अभी तक 'कुल' की हालत में पाये जाते हैं। उनमें जाति-पाँति की तकसीम नहीं पाई जाती जो बाकी हिन्दू समाज में इतने जोर से पाई जाती है। भाषा, करेक्टर और विचारों से भी यही जाहिर होता है कि जाट लोग वैदिक जमाने की सुसाइटी के आम हिन्दुओं की निस्बत बेहतर कायम मुकाम हैं।"[११]

(१०) **श्री कालिका रंजन कानूनगो** लिखते हैं—"हम इतना जानते हैं कि कोई वैज्ञानिक कारण (फिलालाजेकिल) या (एथोनोलोजीकल) इनके भारतीय आर्य होने के विपक्ष में नहीं है। ये न सिथियन हैं, न जथरा हैं, ये मध्य एशिया के जथरा पहाड़ों से आनेवाले नहीं हैं, किन्तु सच्चे भारतपुत्र हैं जिन्होंने मालवा और राजपूताना को पंजाब से जाने के पहिले अपने पुरुषों का घर बतलाया था। जाटों से इस बात को स्वीकार कराना कि वे **पुराने यादवों** की सन्तान नहीं हैं बहुत

---

१०. इतिहासज्ञ डॉ० जगदीशसिंह गहलोत लिखित "ऐतिहासिक लेखमाला पृष्ठ ७३।

११. 'जाट-इतिहास', पृष्ठ ९४।

मुश्किल है।"[१२]

(११) **श्री ग्रार्नी लेथम** जाट-राजपूत सम्बन्ध पर लिखते हैं—

"The Jat in blood is neither more nor less than a converted Rajput and vice versa; a Rajput may be a Jat of the ancient faith."[१३]

अर्थात्—"जाट रक्त में परिवर्तन किये हुए राजपूतों से न तो अधिक ही है और न कम ही है किन्तु अदल-बदल है। एक राजपूत प्राचीन धार्मिक विश्वास से एक जाट हो सकता है।"

(१२) **श्री इबट्सन** जाट व राजपूतों के सम्बन्ध में लिखते हैं—

"But whether Jats and Rajputs were or were not originally distinct and whatever aboriginal elements may have been affiliated to their society, I think that the two now form a common stock, the distinction between Jat and Rajput being social rather than ethnic. I belive that those families of that common stock whom the tide of fortune has raised to practical importance have become Rajputs almost by mere virtue of their rise..."[१४]

अर्थात्—"किन्तु चाहे जाट और राजपूत पहिले भिन्न थे या नहीं और चाहे कुछ भी प्राचीन रीति-रिवाज उनके समाज में वर्ती जाने लगीं मैं समझता हूँ कि अब यह दोनों जातियाँ एक उभयनिष्ठ कुल बनाती हैं। जाट और राजपूतों की भिन्नता केवल रीति-रस्म की है न की जातियता की है। मैं विश्वास करता हूँ कि इस मिश्रित कुल का वह परिवार जिसको भाग्यवश राजनैतिक उन्नति ने अग्रसर कर दिया वे अपनी उन्नतावस्था के प्राप्त होने से ही राजपूत कहलाने लगे।..."

(१३) **श्री पी० जे० फागन** कहते हैं—"The opinion of Indian

---

१२. 'जाट इतिहास', पृष्ठ ७३२।

१३. 'Anthology of India', p. 254 तुलना करो 'जाट इतिहास',; पृष्ठ ११४।

१४. 'जाट इतिहास', पृष्ठ ११८; 'Punjab Ethnography', 1883, p. 220.

best authorities seem to be gradually turning to the belief that the connection between the Jats and Rajputs is more intimate then was formerly supposed."[१५]

अर्थात्—"भारतवर्ष के सर्वोत्तम अधिकारियों का मत धीरे-धीरे इस विश्वास की ओर बढ़ रहा है कि जाट और राजपूतों का सम्बन्ध जैसाकि पूर्व भी कल्पना किया जाता था उससे घनिष्ठ है।"

(१४) **श्री कुर्क** की सम्मति है—"It would probably require a life time of careful study and comparision before we could reach any satisfactory decision in the question whether Jats and Rajputs are identical, similar or distinct races."[१६]

अर्थात्—"संभवतः इस बात का सावधानी से अध्ययन और तुलना करने में कि जाट और राजपूत पृथक् हैं, समान हैं या पृथक् जाति हैं इसके सन्तोषजनक निर्णय तक पहुँचने में सारे जीवन का समय आवश्यक है।"

(१५) दहियाजी लिखते हैं—"It is shown in Tribes and Castes that a Rajput marrying a Jat woman, may or may not become a Jat, but if his descendents adopted widow remarriage, then, he certainly would become a Jat."[१७]

अर्थात्—"यह देखा जाता है कि एक राजपूत एक जाट स्त्री से विवाह करता है तो वह एक जाट नहीं हो सकता है; परन्तु जब उसकी सन्तानें विधवा विवाह को अपनाती हैं तो वे निश्चय ही जाट हो जाते हैं।"

(१६) **कर्नल जेम्स टॉड** लिखते हैं—"जिट—जाट—भारतवर्ष के ३६ राजवंशों की समस्त प्राचीन वंशावलियों में 'जिट' राजवंश का समावेश किया जाता है; किन्तु किसी में भी इस जाति को राजपूत नहीं बताया गया है। और न मुझे राजपूतों तथा जिट अथवा जाटों में परस्पर विवाह आदि के सम्बन्ध का एक भी उदाहरण देखने को मिला। यह जाति भारतवर्ष भर में फैली हुई है

---

१५. वही, पृष्ठ १२०।

१६. वही, पृष्ठ १२१।

१७. 'Jats the Ancient Rulers' (A Clan Study), p. 119-120.

किन्तु इसके अधिकतर व्यक्ति कृषि का व्यवसाय करते हैं, तथा देशवासियों में इस जाति का स्थान बहुत ऊँचा नहीं माना जाता।

पंजाब में आज भी वे अपने प्राचीन 'जिट' को धारण किये हुए हैं। यमुना और गंगा के तट पर बसनेवाले 'जाट' कहलाते हैं, जिनमें भरतपुर का जाट राजा अत्यन्त प्रसिद्ध है। सिन्ध के किनारे और सौराष्ट्र में रहनेवाले जट पुकारे जाते हैं, राजस्थान के अधिकांश कृषक जाट हैं, सिन्ध के पार की कई जातियाँ, जो इस्लाम-धर्म स्वीकार कर चुकी हैं, अपनी उत्पत्ति इन्हीं लोगों से हुई बतायी हैं।"[१८]

पुनः टॉड लिखते हैं—"...जिटवंशी राजा की माता यदुवंश में पैदा हुई थी। इससे जाहिर होता है कि इस जाति के **यदुवंशी** होने का दावा सही है।..."[१९]

कर्नल जेम्स टॉड के लेखानुसार 'जाट' का स्थान ३६ राजकुलों में है तब इसे क्षत्रिय मानने में आपत्ति क्यों? अन्त में टॉड ने उन्हें 'यदुवंशी' मान ही लिया है।

(१७) **श्री अजीजसिंह प्रह्लादसिंह परिहार** एच० एल० एम्० पी० (सदस्य, क्षत्रिय रिसर्च सोसाइटी, दिल्ली) बालाघाट लिखते हैं—(१४) जीत या गोटे (जाट) Jat—यह एक जाति हो गई है जो ३६ राजकुलों में पाई जाती है और यादववंशी प्राचीन नाम जातिवंश था, परन्तु इस कुल के लोगों के साथ किसी राजपूत ने विवाहादि नहीं किया। महाराज राईरस के राज्य-समय से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक इन्होंने अपना प्राचीन धर्म छोड़ दिया था।...

टॉड साहब ने सातवीं सदी की एक शिलालिपि का पता लगाया है। उसमें लिखा है कि इस वंश के किसी राजा ने यदुकुल की एक रमणी के साथ विवाह किया था। इसी से जीत लोग अपने को यदुवंशी कहते हैं। यह भारतभर में फैले हुए हैं। इनमें भरतपुर के राजा प्रसिद्ध हैं। इनको यदुवंश से निकला हुआ मानते हैं। ...महाराजा रणजीतसिंह इसी वंश के थे। इस जाति के अकाली नामधारियों में

---

१८. 'Annals & Antiquities of Rajasthan का हिन्दी अनुवाद 'राजस्थान' भाग १, खण्ड १, पृष्ठ १६३-१६४ (पं० देवीलाल पालीवाल एम० ए० द्वारा अनुवादित व डॉ० रघुवीरसिंह, डी० लिट्० द्वारा सम्पादित) सन् १९६३ ई० में मंगल प्रकाशन, गोविन्द राशियों का रास्ता, जयपुर (राजस्थान) द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

१९. श्री केशव कुमार ठाकुर द्वारा अनुवादित 'राजस्थान का इतिहास' पृष्ठ ७२ [सन् १९६५ ई० में आदर्श हिन्दी पुस्तकालय, ४९२ मालवीय नगर, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, दूसरा संशोधित संस्करण]।

अभी तक चक्र धारण किया जाता है, जिसका व्यवहार भगवान् कृष्णचन्द्रजी ने स्वयं किया है।"[२०]

(१८) महीराजस्तु बलवान् तृतीयो देहलीपतिः।
सहोद्दीनस्य नृपतेर्वशमाप्य मृतिं गतः ॥२५॥
.....

मेहना म्लेच्छजातीया जट्टा आर्यमयाः स्मृताः।
क्वचित् क्वचिच्च ये शेषाः क्षत्रियाश्चपहानिजाः ॥२८॥

—[भविष्यपुराण, प्रतिसर्ग पर्व ३, खण्ड ४, अध्याय २]*

अर्थात्—दिल्ली का तीसरा राजा पृथ्वीराज बलवान् शहाबुद्दीन गोरी बादशाह के वश पड़कर मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥२५॥ वह तो चौहान कुल की वृद्धि करके स्वर्ग को प्राप्त हुआ। उसके वंश में जो राजपूत हुए उनकी स्त्रियों ने पिशाच तथा म्लेच्छों से भोग किया। उससे वर्णसंकर जातियाँ हुईं। न वे आर्य हैं न वे म्लेच्छ हैं। वह जट्ट तथा मेहन बन गये ॥२६-२७॥ उनमें से मेहन म्लेच्छ बन गये तथा जाट आर्यरूप हो गये और जो कहीं-कहीं बाकी रहे वे चौहानवंशी क्षत्रिय कहलाये ॥२८॥"

इसकी आलोचना करते हुए शास्त्रार्थ महारथी **पं० मनसारामजी** "वैदिकतोप" लिखते हैं—"यह लेख जाटों के किसी विरोधी का लिखा हुआ प्रतीत होता है। इसमें जाटों की हतक की गई है तथा उनको क्षत्राणियों के पेट से म्लेच्छों द्वारा उत्पन्न हुए वर्णसंकर बतलाया गया है जो कि अत्यन्त गलत है। **वास्तव में जाट यादववंशी हैं।** यादव शब्द से बिगड़ कर ही जाट शब्द बना है। यह जाति इतनी वीर है कि इसने मुसलमान बादशाहों को डोला नहीं दिया तथा इस जाति ने ही नियोग (करेवे) की प्राचीन रीति को प्रचलित रखकर अपनी प्रतिष्ठा तथा चरित्र को सुरक्षित रक्खा है।..."[२१]

---

२०. 'क्षत्रिय वर्तमान', पृष्ठ १७४ [सन् १९२८ ई० में लेखक द्वारा स्वयं प्रकाशित, तृतीयावृत्ति]।

* संवत् १९६७ वि० में श्री वेंकटेश्वर स्टीम् मुद्रणालय, बम्बई द्वारा मुद्रित व प्रकाशित, द्वितीय संस्करण।

२१. 'भविष्य पुराण की आलोचना', पृष्ठ ३३-३४ [संवत् १९८२ वि० में आर्य पुस्तकालय, सरस्वती आश्रम, अनारकली, लाहौर द्वारा प्रकाशित]।

(१९) श्री केनेडी के मत से श्रीकृष्ण जिस घुमक्कड़ जाति के बाल देवता हैं उनकी वर्तमान सन्तान हैं जाट और गूजर।[२२]

(२०) जाटराष्ट्रगुरु श्रीमदाचार्य श्रीनिवासाचार्य महाराज लिखते हैं—"यदु के वंशज कुछ समय तो यदु के नाम से प्रसिद्ध थे, किन्तु भाषा में 'य' को 'ज' बोले जाने के कारण जदु-जद्दू-जट्टू-जाट कहलाए। कुछ लोगों ने अपने को 'यायात' [ययातेः पुत्रः यायाता] कहना आरम्भ किया जो 'आजात' दो समानाक्षरों का पास ही में सन्निवेश हो तो एक नष्ट हो जाता है अतः जात—और फिर जाट हुआ।..."[२३]

(२१) श्री रमेशचन्द्र गुणार्थी रिसर्च स्कॉलर ठि० सावर, जि० अजमेर, लिखते हैं—"(जाट क्षत्रिय) भारत के छत्तीस राजवंशों में जिट या जाट जाति का भी स्थान रहा है। मगर इस जाति के साथ राजपूतों के सम्बन्धों का वर्णन नहीं मिलता। किन्तु यह अपने को यदुवंशी ही मानते व बताते हैं तथा इनके गोत्र प्रवर आदि सभी यदुवंशियों से ही मिलते हैं। मौजूदा समय में इस वंश के राज्य भरतपुर, धौलपुर, पटियाला, नाभा, जीन्द, फरीदकोट, कलसिया व कूचेसर आदि रियासतें हैं।"[२४]

(२२) राजकुमार लाल श्री प्रद्युम्नसिंहजी खैरागढ़ स्टेट (नागक्षत्रिय) भूत-पूर्व प्रधानमन्त्री अखिल भारतवर्षीय क्षत्रिय महासभा, नागपुर अपने पत्र दिनाङ्क ६-११-१९४४ ई० में लिखते हैं—"क्षत्रिय महासभा का ४३वां अधिवेशन नागपुर में सन् ४-४-१९४५ में हुआ था। उसमें प्रस्ताव पास हुआ है कि मराठा,

---

२२. ज० रा० ए० सा०, सन् १९०७; तुलना करो—आचार्य पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी कृत 'सूर-साहित्य', पृष्ठ २०-२१, [सन् १९७३ ई० में राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, ८, फैज बाजार, दिल्ली ६ द्वारा प्रकाशित, प्रथम बार]।

२३, 'जाट इतिहास', पृष्ठ १५[जीवो, १६१/१, महात्मागांधी रोड, कलकत्ता-७ द्वारा प्राप्य, प्रथमावृत्ति]।

२४. "राजस्थानी जातियों की खोज" पृष्ठ ७३ [सन् १९५० ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति, गुणार्थी सदन, घटियाली' वाया देवली (जि० अजमेर) द्वारा प्राप्य]

जाट, गूजर और अहीर क्षत्रिय जाति में सम्मिलित किये जाएँ। यह प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास हो चुका है।"[२५]

(२३) "कृषि पेशा करनेवाली जातियों में से जो असली राजपूत वर्ग में से हैं वे गूजर और जाट हैं।"[२६]

(२४) एक अध्ययनशील महोदय अपने लेख 'राजस्थान की जातियाँ'[२७] में लिखते हैं—"जाट—ये लोग किसान हैं। गाय, भैंस, बकरी, ऊँट आदि मवेशी रखते हैं और खेती करते हैं। बीकानेर राज्य में प्राचीन समय जाटों के छोटे-छोटे कई राज्य थे। अब भी राजस्थान में इनके भरतपुर और धौलपुर दो राज्य हैं। कुछ इतिहासकारों का मत है कि जाट लोग राजपूत हैं, पर यह बात सत्य नहीं है। विधवा विवाह इन लोगों में भलीभाँति प्रचलित हैं।..."

टिप्पणी—विधवा विवाह करने से कोई जाति नीच नहीं हो सकती है। बाल-विधवा विवाह वैदिक प्रणाली है। राजस्थान में नातरायत राजपूत पुनर्विवाह करते हैं। आज तो आर्यसमाज के प्रचार से सभी जातियों में विधवा विवाह प्रचलित होने लगा है। पं० ईश्वरचन्द्रजी विद्यासागर जन्मना बंगाली ब्राह्मण, पक्के पौराणिक थे पर उन्होंने विधवा विवाह का कानून बनवाया और विधवा की सन्तान को सम्पत्ति में अधिकार दिलवाया, अतः जाट क्षत्रिय हैं।

(२५) कु० रामेश्वरसिंह (रामबाबू) चौहान का मत है—"१३—जाट यद्यपि ३६ राजकुलों में जाट (जित) लोगों का भी नाम आता है किन्तु इस वंश

---

२५. ठा० बलरामसिंह कृत 'आभीर राजपूत रत्नावली', पृष्ठ २८, [सन् १९४५ ई० में श्रीकृष्ण प्रेस, दारानगर, वाराणसी द्वारा मुद्रित व ठा० रामप्रसाद सिंह [पता नहीं है] द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२६. 'राजपूताना गजेटियर', भाग १, पृष्ठ २६२; तुलना करो कुँवर यतीन्द्र कुमार अधिकारी, सम्पादक 'वीरगुर्जर', आगरा कृत 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास अर्थात् गुर्जर इतिहास—प्रथम भाग, पृष्ठ ५१, [सन् १९३३ ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

२७. मासिक पत्र 'क्षात्रधर्म', अजमेर का 'राजस्थान अङ्क', वर्ष ३, अक्टूबर + नवम्बर १९३९ ई० अङ्क, १-२, पृष्ठ १५, [ठा० नारायण सिंह बी० ए० द्वारा सम्पादित]

के लोग कहीं राजपूत नहीं लिखे गये और न इनका कहीं विवाह सम्बन्ध ही किसी राजपूत कुल के साथ पाया गया। कहते हैं कि जित (जाट) वंश की राजमाता यदुवंशी थी, इसी कारण इनको ३६ राजकुलों में भव्य स्थान मिला है।... जाट लोग अपने को यदुवंशी भी कहते हैं।..."[२८]

(२६) ठा० उदयनारायण सिंह टाड राजस्थान के आधार पर जाटों को ३४ छत्तीस राजकुलों में लिखा है।[२९] इससे ये क्षत्रिय सिद्ध होते हैं।

(२७) डॉ० इन्द्रदेव नारायण सिंह 'निकुंज' लिखते हैं: "जाटों की जनसंख्या राजस्थान के अन्दर राजपूतों से अधिक है। पंजाब, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के भी कुछ जिलों में ये पाये जाते हैं।

...यद्यपि कुछ अंग्रेज लेखकों ने इन्हें ३६ कुलों के राजपूतों में माना है, परन्तु राजपूत लोग इन्हें अपना सजातीय नहीं मानते हैं न इनसे विवाह-सम्बन्ध ही करते हैं।

भरतपुर के राजा जाट वंश के हैं। जाट लोग वीर होते हैं। इन्होंने मुसलमान बादशाह महमूद को बहुत छकाया था...।"[३०]

टिप्पणी—जब जाट ३६ राजकुलों में माने जाते हैं तो उनको क्षत्रिय मानने में आपत्ति क्यों हैं? निकुम्भजी ने बलात् कई क्षत्रियों को वैश्यों की श्रेणी में रखकर अपनी अनभिज्ञता प्रकट की है।

(२८) डॉ० रुद्रसिंह तोमर मन्त्री इन्द्रप्रस्थ क्षत्रिय सभा लिखते हैं:—
"(३३) जिट (जाट) भारत के छत्तीस राजकुलों की सब प्राचीन सूचियों में 'जिट' ने स्थान पाया है परन्तु न तो कोई इन्हें राजपूत बताता है, और न इनका राजपूतों के साथ शादी-व्यवहार का उदाहरण ही मिलता है। ये अपने तईं अब तक यदु-

२८. 'श्री राजपूत वंशावली', पृष्ठ २३-२४, [सन् १९४१ ई० में ठा० बनवारी सिंह एण्ड सन्स, ११/२०२ गणेशनगर, कानपुर द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति]।

२९. 'क्षत्रिय वंशावली', पृष्ठ ७०, [संवत् १९९४ वि० में श्री वेङ्कटेश्वर स्टीम प्रेस बम्बई द्वारा मुद्रित व प्रकाशित]।

३०. 'भारतीय वैश्यों का संक्षिप्त इतिहास', पृष्ठ ११ से १३ तक, [सन् १९६३ ई० में शास्त्र प्रकाश भवन मधुरापुर, पो० मधुरापुर, द्वारा बिदुपुर बाजार, जि० मुजफ्फरपुर बिहार द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

वंशी प्रकट करते हैं। और अपने गोत्र प्रवरादि भी यदुवंशियों के अनुसार बताते हैं।...

इस वंश का राज्य भरतपुर, धौलपुर, पटियाला, नाभा, जींद, फरीदकोट व कुचेसर आदि कई जागीरें हैं। (छत्तीस राजकुलों में होने के कारण यहाँ लिखा गया है)।..."[३१]

टिप्पणी—जब जाट यदुवंशी बतलाये जाते हैं और ३६ राजकुलों में इनकी गिनती है तब इनको क्षत्रिय न मानना पक्षपात व ईर्ष्या है।

(२९) विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र, मुरादाबाद का कथन है—
"जाट—यद्यपि छत्तीस राजकुलों की सूची में जिट वा जाट ने स्थान पाया है, परन्तु न तो कोई इन्हें राजपूत मानता है और न इनका किसी राजपूत जाति के साथ विवाह होना पाया जाता है; यह भारतभर में फैले हुए हैं इनमें भरतपुर के राजा प्रसिद्ध हैं। शेष लोग खेतीबाड़ी का काम करते हैं, इनके संस्कार भी लोप हो गये हैं तथा इनमें पण्य भी होता है इस कारण उत्तम कक्षा से गिरे जाते हैं। पंजाब में जिट कहे जाते हैं। इनकी जाति वा आदि निवास स्थान सिन्ध नदी के पश्चिम तरफ के देश माने गये हैं और इनको यदुवंश से निकला हुआ मानते हैं। टाड महोदय इनको यूची वा यूटी शाखा में मानते हैं, यह तक्षक की शाखा भी माने जाते हैं तथा दन्तकथा से महादेवजी की जटा से कोई इनकी उत्पत्ति मानते हैं पर एक शिलालेख में पाया जाता है कि जिटवंशी राजा की माता यदुवंश की थी जिसके कारण इनको ३६ राजकुलों में भव्य स्थान मिला है। सन् ई० की पाँचवीं शताब्दी में ये पंजाब में बस गये थे। सन् ४४० ई० में इनका राज करना तो पाया जाता है; टाड महोदय का कहना है जब यादव लोग शालिवाहन पुर से बाहर हुए, तब वे सतलज नदी उतरकर मरुस्थल में दाहिया और जोहिया राजपूतों के अश्रित हुए, वहाँ देरावल राजधानी स्थापित की, और यहीं किसी दबाव के कारण उन्होंने यदुनाम छोड़ जाट नाम धारण कर लिया हो तो क्या आश्चर्य है? जिसकी यदुकुल के इतिहास में बीस शाखा पायी जाती हैं यह लोग बड़े वीर होते हैं। इन्होंने

३१. 'रुद्र क्षत्रिय प्रकाश', पृष्ठ ९६, [संवत् १९८३ वि० में क्षत्रिय इतिहास अन्वेषक समिति, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति]; अब यह संस्था समाप्त हो गई है—(लेखक)।

महमूद को बहुत सताया और उसका अपमान भी किया था, इनका निवास सिन्धु नदी के पूर्वी किनारे पर था। महाराजा रणजीतसिंह इसी वंश में थे। इस जाति के अकाली नामधारियों में अभी तक चक्र धारण किया जाता है जिसका व्यवहार भगवान् कृष्णचन्द्रजी ने स्वयं किया है।"[32]

टिप्पणी—मिश्रजी के लेख से जाट स्पष्ट रूप से क्षत्रिय सिद्ध होते हैं।

(३०) **श्री श्रवणकुमार यादव सिद्धान्तशास्त्री, साहित्यालङ्कार** लिखते हैं :—"केवल अहीर, जाट और गूजर ही शुद्ध क्षत्रिय हैं। औरों में शक, हूण, तातार और यवनों के रक्त मिले हुए हैं।"[33]

(३१) **श्री बजरंगलाल लोहिया, कलकत्ता** लिखते हैं—"जाट—राजस्थान में जाटों की जनसंख्या राजपूतों से भी अधिक है। जोधपुर, नागौर, मेडता तथा पर्वतसर आदि भागों में इनकी आबादी की प्रधानता है।

जाट अपने वंश की उत्पत्ति शिवजी की जटा से मानते हैं। उनका कथन है कि उनके वंश का नाम जाट होने का कारण यही है। **मिस्टर डी० सी० इबट्सन जाटों को राजपूतों की ही शाखा मानते हैं।** उनके मत से जाट और राजपूत दोनों का उत्पत्ति-केन्द्र एक ही है और जो भेद उन दोनों में दिखाई पड़ता है, वह केवल सामाजिक है। **कर्नल टाड** ने भी जाटों को राजपूतों के ही एक महान् वंश के नाम से सम्बोधित किया है। जनरल कनिंघम राजपूतों को तो आर्य-सन्तान मानते हैं, परन्तु जाटों को वह उत्तर-पश्चिम से भारत में प्रवेश करनेवाली सीथियन जाति की सन्तान होने का अनुमान लगाते हैं।

मारवाड़ के जाटों में तीन भेद हैं। प्रथम तो वे लोग हैं जो अपने को असली बताया करते हैं। उनका कथन है कि उन्होंने अपने रक्त की शुद्धता को बिगड़ने नहीं दिया है। फिर इनकी दो शाखाएँ हैं—एक का नाम गोदारा है और दूसरी का नाम पनियाँ। इन दोनों के नाम इनके पूर्व-पुरुषों के नाम पर, जो सहोदर भाई

---

३२. 'जाति-भास्कर', पृष्ठ २२६, [संवत् १९९५ वि० में श्री वेङ्कटेश्वर स्टीम् प्रेस, बम्बई द्वारा मुद्रित व प्रकाशित]।

३३. 'यदुवंश की खोज', पृष्ठ ३८०, [लेखक द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण, अध्यापक योगदा सत्संग क्षीरोदामयी विद्यापीठ, लखनपुर, मानभूमि, बिहार]।

थे, प्रचलित हुए हैं। इसीलिए दोनों खापों में परस्पर विवाह-सम्बन्ध नहीं होता।

दूसरे वे जाट हैं जिनके साथ राजपूत मिश्रित हो गये हैं। मुसलमानी शासन-काल में अनेक राजपूत मुसलमानों से भयभीत होकर जाटों में मिल गये थे और उन्हीं का व्यवसाय भी अपना लिया था तथा समय के प्रभाव के साथ उन्हीं में सम्मिलित हो गये।

तीसरे वे जाट हैं, जो आजणा नाम से पुकारे जाते हैं। उनका सामाजिक स्थान हीन माना जाता है। उन लोगों की सभा उनके ग्राम के नाम पर पड़ी है। उदाहरणार्थ, मुण्डेल, इन्दानियाँ, हाडेल इत्यादि।

मारवाड़ के जाटों का व्यवसाय यद्यपि सैनिक नहीं है, किन्तु उनके शरीर की आकृति सैनिक कहलानेवाली जातियों की आकृति की अपेक्षा किसी अंश में भी हीन नहीं है। जाट शरीर में राजपूतों के समान लम्बे-चौड़े, हृष्ट-पुष्ट, स्वस्थ और सुदृढ़ होते हैं। उनकी आकृति से वैसी ही वीरता झलकती है, जैसी कि राजपूतों की आकृति से। जाट बड़े परिश्रमशील होते हैं। उनके मिजाज में निर्भीकता होती है। जंगल में जाट की प्रधानता इतनी होती है कि निम्नलिखित कहावत प्रचलित हो गयी है—

जंगल जाट न छेड़िये हाटां बीच किराड
रांघड़ कधी न छेड़िये जब तक करे विनास।

अर्थात्—जंगल में जाट को और दुकान पर बनिये को कभी नहीं छेड़ना चाहिए तथा राजपूत को तो कभी छेड़ना ही नहीं चाहिए, अन्यथा वह कभी-न-कभी अवश्य नष्ट कर डालता है।

जाट कृषि-कार्य में सर्वोत्कृष्ट होते हैं। जमीन बनाने और उसकी उन्नति करने के काम में वे विशेषज्ञ समझे जाते हैं। जिस स्थान पर जाट बस जाते हैं, उस स्थान की उन्नति हो जाती है। कहा जाता है—जहाँ जाट वहाँ ठाठ।

जाट को चौधरी अथवा पटेल के नाम से पुकारने पर वह अपने को सम्मानित मानता है। जाट हँसी-मजाक में बड़ा निपुण होता है। मन का निर्भीक होने के कारण वह अत्यन्त स्पष्टवादी होता है। उसमें संकोच की मात्रा बहुत कम होती है।

जाट गुड़ खाने का बड़ा शौकीन होता है। जाटों में गुड़ का बड़ा चलन और व्यवहार है। यहाँ तक कि गुड़ द्वारा ही उनके यहाँ विवाह और सगाई-सम्बन्ध पक्के हो जाते हैं।

जाटों में विधवा का नाता भी होता है और उनके यहाँ उसकी रीति अत्यन्त सरल है। जो विधवा किसी व्यक्ति के साथ अपना नाता करना निश्चय करती है, उसका भावी पति चारे का एक बोझ सर पर लादकर अपने घर के निकट मार्ग में खड़ा हो जाता है और वह विधवा उसके सर का बोझ उतारकर अपने सर पर रख लेती है तथा पति के घर की ओर चल देती है। पीछे-पीछे उसका पति उसके साथ हो लेता है। जहाँ नाते का प्रस्तावक पुरुष होता है वहाँ स्त्री अपनी स्वीकृति स्वरूप पानी का एक घड़ा लेकर बीच मार्ग में खड़ी हो जाती है। पुरुष आता है और उसका घड़ा लेकर चल देता है। पीछे-पीछे वह स्त्री उसी के साथ चली जाती है। कदाचित् पुरुष का घर दूर हुआ, तो पुरुष उस स्त्री को रात्रि में अपने घर ले जाता है। जाटों का विश्वास है कि यदि अपने पति के घर पहुँचने के पूर्व कोई उस स्त्री का मुख देख ले, तो निश्चय ही छह महीने के भीतर उसकी मृत्यु हो जाए।

जाटों का एक पन्थ है। उस पन्थ के अनुयायी जसनाथी जाट कहलाते हैं। उनको लोग सिद्ध मानते हैं। सन् १४८८ ईस्वी में बीकानेर जिले के कछरासर ग्राम के निवासी एक जसनाथ नाम के सन्त ने इस पन्थ की स्थापना की थी। ये जाट बीकानेर, माखरा और नागौर जिले के पांचला ग्राम में एक काली ऊन का डोरा बाँधे रहते हैं। इस पंथ के अनुयायियों की यही मोटी पहचान है। इनके शव या तो इनके निवास-गृह की ड्योढ़ी के निकट अथवा पशुओं के घर में गाड़ दिये जाते हैं।

जसनाथी जाटों तथा अन्य जाटों के आपस में विवाह-सम्बन्ध होते हैं। वधू को विवाह के पश्चात् अपने पिता के घर की प्रथाएँ छोड़कर पति के घर की प्रथाएँ सीख लेनी पड़ती हैं।

मारवाड़ के जाटों में तेजा का नाम बहुत प्रसिद्ध है। उसके प्रति उनकी बड़ी भक्ति है। अजमेर तथा किशनगढ़ जिले के जाट तेजा को बहुत मानते हैं। तेजा नागौर जिले के खडनाल ग्राम का निवासी था। उसका विवाह किशनगढ़, इलाका पनेर ग्राम में हुआ था। एक बार वह अपनी ससुराल गया था। वहाँ मेर जाति के कुछ व्यक्ति पनेर के एक गूजर की गौएँ घेरकर ले गये। गूजर ने सबसे सहायता माँगी, पर किसी ने उसकी गायें छुड़ाने का साहस नहीं किया। उस दशा में तेजा ने गायों को चुरा ले जाने वाले मेरों का पीछा किया और उनको लड़ाई में वीरता

के साथ पराजित कर गूजर का गोधन वापस लाकर गूजर को दे दिया। किन्तु तेजा इस संघर्ष में इतना आहत हुआ कि वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। दैवयोग से इसी बीच में उसे एक सर्प ने डँस लिया। फलतः तेजा की मृत्यु हो गयी और तेजा की पत्नी अपने पति के साथ वहीं जलकर सती हो गयी। उस समय से तेजा की याद में एक मेला किशनगगढ़ में प्रतिवर्ष लगता था। इस मेले में बैलों का अच्छा क्रय-विक्रय हुआ करता था। जोधपुर महाराज विजयसिंह के समय से यह मेला किशनगढ़ से उठकर पर्वतसर चला गया। मेले के किशनगढ़ से उठकर पर्वतसर जाने की कहानी बड़ी मनोरंजक है। महाराज विजयसिंह के शासनकाल में पर्वतसर में एक हकीम था जो बुद्धि का बड़ा प्रखर तथा चतुर था। उसने देखा कि इस मेले द्वारा किशनगढ़ दरबार को प्रतिवर्ष पाँच-सात हजार रुपयों का लाभ होता है। अतः उसने इस मेले को किसनगढ़ से उखाड़कर पर्वतसर में जमाना निश्चित किया।

उसने अनेक उपायों द्वारा प्रचार आरम्भ किया कि उसको स्वप्न में तेजा ने आज्ञा दी है कि मेरा मेला पर्वतसर में भराना चाहिए। उसने तेजा की मूर्ति भी रात को किशनगढ़ से उखाड़कर पर्वतसर में स्थापित कर दी और यह प्रकट किया कि तेजा ने आज्ञा दी है कि मैं किशनगढ़ में दुःख पाता हूँ। मुझे मारवाड़ ले चलो। इसके पश्चात् मेला किशनगढ़ में बन्द होकर पर्वतसर में भरने लग गया। कारण उसमें मारवाड़ के ही अधिकांश जाट और गूजर आदि अपने-अपने मवेशी विक्रयार्थ लेकर आते हैं।"[३४]

(३२) **डॉ० राजबली पाण्डेय, एम० ए०, डी० लिट्**, अध्यापक, इतिहास विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय जाटों को राजपूतों की छत्तीस शाखाओं में लिखते हैं।[३५]

---

३४. 'राजस्थान की जातियों', पृष्ठ २२ से २७ तक, [संवत् २०११ वि० मई सन् १९५४ ई० में लेखक द्वारा प्रकाशित, सादा संस्करण, कलकत्ता पुस्तक भण्डार, १७१ ए० हरिसन रोड, कलकत्ता द्वारा प्राप्य]।

३५. 'गोरखपुर-जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियों का इतिहास', पृष्ठ २०१, [संवत् २००३ वि० में ठा० महातम रावत, प्रकाशक व विक्रेता, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित]।

पुनः "(आ) जाट—जाट प्रायः पंजाब, सिन्ध, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पाये जाते हैं। ये लोग अपने को यादव और आभीरों से अभिन्न मानते हैं।"...[३६]

(३३) **श्रीनगेन्द्रनाथ वसु** 'प्राच्य विद्यामहार्णव', तत्त्वचिन्तामणि, एम० आर० ए० एस० लिखते हैं :—"जाट—१ भारतवर्ष की एक प्रसिद्ध जाति। भारतवर्ष के युक्तप्रदेश, पंजाब, राजपूताना और सिन्ध में अधिकांश अधिवासी जाट ही पाये जाते हैं। इन प्रदेशों के सिवा अफगानिस्तान, बेलुचिस्तान आदि प्रदेशों में भी इनका वास है। जाट जाति की संख्या बहुत ज्यादा है। ये भिन्न-भिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न नामों से प्रसिद्ध हैं। मतलब यह कि, जुती, जिती, जूट या जाट इनमें से कोई भी नाम क्यों न हो, भारतवर्ष में तीन शताब्दी पहले उनकी संख्या अन्यान्य जातियों से कहीं अधिक थी। जाट जाति की उत्पत्ति के विषयों में सबों का एक मत नहीं है। कोई कहते हैं, देवादिदेव महादेव की जटा से इस जाति की उत्पत्ति हुई है, इसीलिए इनका जाट नाम पड़ा है। **किसी का यह भी कहना है कि जाट जाति चन्द्रसूर्यवंशी है।** अध्यापक लासेन प्रमुख पण्डितों का कहना है कि महाभारत में जो मद्र और जार्तिकों का उल्लेख है, जाट जाति उन्हीं में शामिल हैं। **इसके अतिरिक्त कोई-कोई कहते हैं कि जाटगण राजपूत हैं।** किसी निम्न श्रेणी की राजपूत शाखा से उत्पन्न होने के कारण राजपूत समाज में इनका यथोचित सम्मान नहीं है। इस मत से सहमत पण्डितगण कहते हैं कि, राजपूत और जाटों में जातिगत विशेष कुछ पार्थक्य नहीं है; किन्तु व्यवसाय के तारतम्यानुसार इनमें सामाजिक प्रभेद पड़ गया है, राजपूतों के ३६ वंशों में जाटों का भी उल्लेख है। पहले राजपूतगण इन लोगों से वैवाहिक सम्बन्ध करने में किसी प्रकार की लज्जा नहीं करते थे। यद्यपि इस समय इन लोगों के साथ राजपूतों का प्रकाश्य विवाह प्रचलित नहीं है; तथापि राजपूतगण दैवाहिक सम्बन्ध में इनसे पूर्णतया विच्छिन्न नहीं हो सके हैं।

जाटों की उत्पत्ति के विषय में एक प्रवाद है—एक दिन एक गुर्जर जातीय स्त्री सिर पर पानी भरी एक गागर ले-जा रही थी। उसी समय एक भैंस रस्सी तोड़कर भागी जा रही थी। उस स्त्री ने अपने पैर से भैंस की रस्सी को इस तरह दबाया

३६. 'यदुवंश का इतिहास', पृष्ठ २३७।

कि वह भैंस जहाँ की तहाँ खड़ी रह गई। एक राजपूत राजा दूर से यह दृश्य देख रहे थे, वे उक्त स्त्री पर बहुत ही आसक्त हुए और उसे अपने घर ले गये। राजपूत और इस गुर्जर जातीय स्त्री के सम्मिश्रण से एक नवीन जाति की उत्पत्ति हुई, जो इस समय जाट नाम से प्रसिद्ध है। अधिकांश जाट ही अपनी उत्पत्ति के विषय में उक्त विवरण को सुनाया करते हैं।

यूरोपीय विद्वानों का कहना है कि, जाटगण भारत के आदिम अधिवासी नहीं हैं। व्यक्ति या राज्य के अधःपतन के समय अक्सस नदी के किनारे बक्त्रिया और खुरासान के मध्यवर्ती स्थान से स्किदीय (एक) गण भारत की तरफ अग्रसर हुए थे। इन लोगों ने क्रमशः भारत में प्रवेश किया।..."[३७]

(३४) **श्री एफ० एस० यांग**—"जाट सच्चे क्षत्रिय हैं।"[३८]

(३५) **जाटराष्ट्र गुरु श्रीमदाचार्य श्रीनिवासाचार्य महाराज** लिखते हैं :—"यदु के वंशज कुछ समय तो यदु के नाम से प्रसिद्ध थे। किन्तु भाषा में 'य' को 'ज' बोले जाने के कारण जदु-जदू-जट्टू-जाट कहलाये। कुछ लोगों ने अपने को 'यायात' [ययातेः पुत्रा यायाता] कहना आरम्भ किया जो 'जाजात' दो समानाक्षरों का पास ही में सन्निवेश हो तो एक नष्ट हो जाता है, अतः जात—और फिर जाट हुआ।"...[३९]

(३६) **श्री दीनानाथ 'सिद्धान्तालंकार व श्री द्वारिका प्रसाद 'सेवक'** लिखते हैं—"जट, झट, जो अब जाट कहे जाते हैं, निश्चय ही आर्यों के वंशज हैं। जट या जाट्ट का संस्कृत शब्दार्थ संघ या समूह ही है। धौलपुर और भरतपुर नरेश इसी वंश के हैं।"[४०]

३७. 'हिन्दी विश्वकोष,' अष्टमभाग, खण्ड १६९-१८०, पृष्ठ १९३ से १९६ तक, [सन् १९२४ ई० में श्री विश्वनाथ वसु, ९ विश्वकोष लेन, बाग-बाजार, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित]।

३८. 'क्षत्रियों का इतिहास,' [भूमिका तथा जाट वंशावली' प्रथम भाग, पृष्ठ २५१.]।

३९. 'जाट इतिहास', पृष्ठ १५।

४०. 'पतन के कगार पर', पृष्ठ १२४, [मई सन् १९७५ ई० में श्री द्वारका प्रसाद 'सेवक', ३०३-बी० गांवठनविले पार्ले (पश्चिम), बम्बई-५६ द्वारा प्रकाशित, प्रथमावृत्ति]।

(३७) **पं० उपेन्द्रनाथ शर्मा**, कोतावाली के समीप, भरतपुर (राजस्थान) ने जाटों का बृहत् इतिहास[४१] लिखा है। उसके अध्याय २, पृष्ठ ३५ से ६७ तक में जाटों की उत्पत्ति तथा विस्तार में प्रबल पुष्ट प्रमाणों से उन्हें क्षत्रिय सिद्ध किया है।

(३८) **पं० किशोरीदास वाजपेयी शास्त्री** लिखते हैं :—"जाट'—पहाड़ीजन-'जाट' भी किसी समय 'शिव' (हिमालय) की जटाओं से, जटिल चोटियों से नीचे उतरकर आये थे; गंगा की ही तरह। फिर ऊपर नहीं गये। यहीं नीचे रम गये और पशुपालन के साथ-साथ कृषक बन गये, **क्षत्रियत्व भी ग्रहण किया।** किसी समय भरतपुर के जाटों ने दिल्ली को दहला दिया था। मेरे ब्रजभाषा के दोहों का जो संग्रह 'तरंगिणी' नाम से सन् १९३४ में प्रकाशित हुआ था, उसमें एक दोहा यह भी है—

फाटक दिल्ली दुर्ग के, किये धका दै भंग।
तिन जाटन के छिलत हैं, अब खादी सों अंग॥

हम यहाँ शब्द व्युत्पत्ति बतलाना चाहते हैं; बस। सो, बतला चुके कि जटाओं से, हिमालय की चोटियों से, नीचे आनेवाले लोग 'जाट'।

निश्चय ही पहले यह विशेषण होगा—'पहाड़ी' की तरह। आगे चलकर संज्ञा बन गया और विशेषण भी—हिन्दू जाट, सिख जाट, मुसलमान जाट।"[४२]

(३९) **श्री पी० एन० ओक एम० ए०** लिखते हैं :—"The Jats are a warrior community of North India. In popular light conversation a Jat is always referred to as mindless, thoughtless, tactless, impetuous and blunt hard-hitter, K. R. Kanungo's History of the jat is a fairly comprehensive book.....

The territory that the Jats controlled was about 250 miles in length from Meerut and Rohtak districts in the north to Dholpur in the south, and about 100 miles in width from Alwar

---

४१. 'जाटों का नवीन इतिहास', [सन् १९७७ ई० में मंगल प्रकाशन, गोविन्द राजियों का रास्ता, जयपुर-१ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

४२. त्रैमासिक 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', वर्ष ७१, वैशाख संवत् २०२३ वि०, अङ्क १, पृष्ठ ८९-९० में प्रकाशित 'गूजर, जाट और नाग' शीर्षक लेख।

to Etah. The river Yamuna was its exis and Delhi and Agra two of its important towns....."[४३]

अर्थात्—जाट उत्तर भारत का एक योद्धा समाज है। लौकिक वार्त्तालाप में जाट सदैव मस्तिष्करहित, विवेकरहित, अकुशल, क्रोधी, रूक्ष, कठोर मारनेवाला निर्देश किया जाता है। श्री के० आर० कानूनगो का 'जाटों का इतिहास' सुन्दर विस्तृत ग्रन्थ है।.....

वह प्रदेश जिसमें मेरठ और रोहतक जिले उत्तर में, धौलपुर दक्षिण में लगभग २५० मील लम्बाई में थी और लगभग १०० मील अलवर से एटा तक चौड़ाई में जाटों के अधिकार में था। यमुना नदी इसका केन्द्र था और दिल्ली और आगरा इसके दो प्रसिद्ध नगर थे।..."[१]

जाट, अहीर, गूजरों की सजातीयता—जाट, अहीर, गूर्जर तथा राजपूतों ने मिलकर 'अजगर' शब्द बनाया था। 'अजगर' में 'अ' अहीर, 'ज' 'जाट', ग 'गूर्जर' व 'र' राजपूत के लिए प्रयुक्त हुआ है।

वास्तव में ये सब एक ही वंश व श्रेणी के हैं।

'जनगणना प्रतिवेदन' में कहा है—

"Jats, Gujars and Ahirs smoke and drink together."[२]

अर्थात्—"जाट, गूजर और अहीरों में परस्पर धूम्रपान (हुक्का)—पानी होता है।"

श्री देशराजजी लिखते हैं—"पंवार, सोलंकी, तंवर या तवार आदि गोत्र जाट, गूजर, मराठा तीनों जातियों में मिलते हैं। सुर्वे और राणा मराठों के भी

---

४३. 'Institute for Rewriting Indian History,' annual number 1984 A. D. meeting invitation annul Report and Historical notes, p. 62 [Printed by Ankur Printing Press, 40/48, Jatan street Ltsari Gate, Meerut-2].

१. सभी जाटों को मस्तिष्करहित, विवेकरहित, अकुशल आदि कहना व लिखना अनुचित हैं। इस प्रकार तो प्रत्येक योद्धा जाति को ऐसा कहा जाता है। सभी वर्णों में ऐसे लोग पाये जाते हैं। जाटों में एक-से-एक वीर, बुद्धिमान्, लेखक, विद्वान् आदि हैं। ओकजी का यह कथन व्यर्थ है—[लेखक]।

२. 'Census Report', 1805, App. B., p. 14.

गोत हैं और यह गोत जाटों के भी हैं। जिस तरह से मराठों का एक बड़ा समूह अपनी उत्पत्ति कश्यप से मानता है उसी तरह जाटों में भी एक ऐसा दल है जो कि अपने को कश्यप का वंशज कहता है। मराठों में गणपति की पूजा का जिस भाँति प्रचार है जाट शिवाजी को उससे अधिक श्रद्धा की दृष्टि से पूजते हैं। सामाजिक रहन-सहन और खानपान में मराठे उतने ही स्वतन्त्र हैं जितने कि जाट। शारीरिक गठन और लम्बाई-चौड़ाई में मराठे जाटों से कुछ हलके अवश्य हैं किन्तु रण-कुशलता में मराठों और जाटों में कोई अन्तर नहीं। जाट और मराठे दोनों की मानसिक प्रवृत्तियाँ, स्वभाव, साहसिकता, बिल्कुल समान हैं। उनके युद्ध के तरीकों में इतिहास अधिक भेद नहीं बतलाता। शत्रु के सामने न झुकने तथा लोभ और प्राण-रक्षा के लिए आन को न खोने की उनकी आदत ने काफी प्रसिद्धि दी है। दोनों ही जातियों का अराजकवाद और गणतन्त्रवाद से सम्बन्ध रहा है और यह भी सही है कि अराजकतावादियों और प्रजातन्त्रवादियों के अधिकांश समूह इन दोनों जातियों से सन्निहित हैं। नाग लोगों की कई शाखाएँ जाट और मराठों में शामिल हैं। अन्तर इतना है कि मराठे दक्षिण-पश्चिम में रहते हैं और जाट उत्तर-पश्चिम में। यदि यह सौभाग्य प्राप्त हुआ होता कि इन दोनों जातियों की बस्तियाँ एक ही जगह होतीं तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि जाट और मराठों के जाति बन जाने का सूत्रपात अब तक हो जाता। मुस्लिम-काल के राजनैतिक संघर्ष में जाट और मराठे देश के हित के लिए जितने अधिक शीघ्र एक दूसरे के मित्र हो गये थे, उससे यह सिद्ध होता है कि राष्ट्र तथा समय की पुकार का उन्हें शीघ्र ही अनुभव हो जाता है और अनुभवशील जातियाँ शीघ्र ही संगठित हो जाती हैं और जबकि वह एक ही वंश और स्टाक के हों तो कोई कठिनाई नहीं रहती।

जाट और गूजरों में सिर्फ पारस्परिक शादियों का रिवाज नहीं है, बाकी खानपान, रहन-सहन, हुक्का-पानी सबमें एक हैं। जाट यदि कृषि-विद्या में निपुण हैं तो वे पशु-पालन में। भाषा, भेष, धार्मिक और सामाजिक विश्वास कोई भी ऐसी चीज नहीं जिनसे जाट और गूजर दो जातियाँ मानी जाएँ। उनकी जातीय उपाधियाँ (खिताब) चौधरी, पटेल, मुकद्दम, फौजदार और ठाकुर आदि एक ही होते हैं।

अहीर जो कि भारत की प्राचीन क्षत्रिय जाति है और अराजकता के लिए

काफी प्रसिद्ध रही है, जाटों का इससे रक्त सम्बन्धी तथा सामाजिक सम्बन्ध मराठों और गूजरों जैसा निकटतम है। श्रीकृष्ण को जाट और गूजर दोनों ही पूर्व-पुरुष मानते हैं। यद्यपि इस समय अहीरों में परस्पर भी कुछ ऐसी दुर्भावनाएँ उत्पन्न हो गयी हैं कि वह स्वयं एक शाखवाले दूसरी शाखवालों को अपने से हीन समझते हैं। लेकिन जाटों का सर्व अहीरों से चाहे वे अपने लिए यादव, गोप, नन्द, चाहे आभीर कहें एक-सा व्यवहार है। जैसे खानपान में जाट और गूजरों में कोई भेद नहीं वैसे ही अहीर और जाटों में भी कोई भेद नहीं। इतिहासों में इनके रहने का भी स्थान निकट-निकट बतलाया गया है। भारत से बाहर भी जहाँ कहीं जाटों का अस्तित्व पाया जाता है वहीं अहीरों की बस्तियाँ भी मिलती हैं। चीन में जहाँ जाटों को यूची नाम से याद किया गया है वहाँ अहीरों को शू नाम से पुकारा गया है। ईरान में जाटालि प्रदेश के निकट ही अहीरों की बस्तियाँ भी पाई जाती हैं। ठा० देशराज सिंहजी ने मराठों को भी जाटों का सजातीय बतलाया है।

मराठे भी कृषक हैं। बम्बई गजेटियर में लिखा है—"मराठा (अर्थात् खेतिहर) जाति सीधी-साधी, खुले दिल की, स्वाधीन बुद्धिवाली, उदार और भली होती है। यह भलाई करनेवालों का विश्वास करती है। बहादुर और बुद्धिमान् होती है।..."[3] छत्रपति शिवाजी महाराज इसी मराठा जाति में से थे।

श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य एम० ए० एल्०-एल्० बी०, आनरेरी फैलो, बम्बई विश्वविद्यालय, मराठों के सम्बन्ध में लिखते हैं—"हमारे मत से चालुक्य, राष्ट्रकूट, यादव आदि सच्चे मराठा क्षत्रिय वंश हैं।"[4]

महमहोपाध्याय, रायबहादुर डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा डी०लिट्०—"मरहटों का सम्बन्ध राजपूताने के साथ बहुत रहा है अतएव हम यहाँ बहुत ही

---

३. सर यदुनाथ सरकार सी० आई० एम० ए०, डी० लिट्० कृत 'शिवाजी', पृष्ठ ७-८, [जून १९४९ ई० में हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर, कार्यालय, गिरगाँव, बम्बई द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संशोधित संस्करण]।

४. 'हिन्दू भारत का उत्कर्ष अर्थात् राजपूतों का प्रारम्भिक इतिहास', [मध्य-युगीन भारत, भाग २], पृष्ठ ४४८, [संवत् १९८६ में श्री काशी विद्यापीठ, काशी द्वारा प्रकाशित]।

संक्षेप में उनका परिचय देना उचित समझते हैं।"[५]

पुनः "दक्षिण के महाराष्ट्र देश के रहनेवाले लोग सामान्य रूप से 'महाराष्ट्र' या मरहठे कहलाये, जैसे कि कश्मीर से कश्मीरी, मारवाड़ से मारवाड़ी आदि। पुराने शिलालेखों तथा ताम्रपत्रों के अनुसार पहले दक्षिण में भी भारतवर्ष के अन्य विभागों के समान चारों वर्ण थे। वि० सं० की १५वीं शताब्दी के आसपास वहाँ के ब्राह्मणों में पुराणों के इस कथन पर कि 'नन्दवंशी तथा उनसे पीछे के राजा शूद्र होंगे' विश्वास कर दक्षिण में केवल दो वर्ण ब्राह्मण और शूद्र स्थिर कर दिये और ब्राह्मणों की प्रबलता तथा मुख्यता के कारण उनका आदेश चल निकला; परन्तु वास्तव में देखा जाए तो **मरहठों में क्षत्रियजाति अब तक विद्यमान है** जैसा कि उनके उपनाम मोरे (मौर्य, मोरी), गुप्ते (गुप्तवंशी), पंवार (परमार), चालके (चालुक्य, सोलंकी), जादव आदि से पाया जाता है।..."[६]

पुन: "मरहटा जाति दक्षिणी हिन्दुस्तान की रहनेवाली है। उनके प्रसिद्ध राजा छत्रपति शिवाजी के वंश का मूल पुरुष मेवाड़ के सीसोदिया राजवंश में से ही था।"[७]

उदयपुर राज्य के 'वीरविनोद' नामक बृहद् इतिहास में शिवाजी का महाराणा अजयसिंह के वंश में होना लिखा है (वीरविनोद, खण्ड २, पृष्ठ १५८१-८२)।.....[८]

पुनः ओझाजी लिखते हैं—"मेवाड़ के राणाओं की जन्म-पत्रियों के अन्तर्गत शिवाजी की जन्म-पत्री भी है। जिससे यह भी पाया जाता है कि उस समय भी शिवाजी मेवाड़ के राजों के वंशधर माने जाते थे।"[९]

गूर्जरों को पं० देवदत्त भण्डारकर विदेशी मानते हैं पर उनका मत भ्रमपूर्ण

---

५. 'राजपूताने का इतिहास', जि० १, पृष्ठ ३१६।
६. वही, पृष्ठ ३१६ की पाद-टिप्पणी।
७. वही, पृष्ठ ३१७।
८. वही, पृष्ठ ३१७ की पादटिप्पणी।
९. 'ओझा निबन्ध संग्रह', तृतीय भाग, पृष्ठ ८५, [मार्च १९५४ ई० में साहित्य संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यापीठ, उदयपुर (राजस्थान) द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

हैं। श्री भण्डारकर के मत का खण्डन श्री वैद्यजी ने किया है।"[१०]

ओझाजी गुर्जर (गूजर) वंश के सम्बन्ध में लिखते हैं—"इस समय गुर्जर अर्थात् गूजर जाति के लोग विशेषकर खेती या पशुपालन से अपना निर्वाह करते हैं परन्तु पहले उनकी **गणना राजवंशियों** में थी।"...[११]

पं० विशुद्धानन्द पाठक इतिहास विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का मत है—"....गुर्जर प्रतिहार विदेशी नहीं अपितु प्राचीन भारतीय सूर्यवंशी क्षत्रियों अथवा ब्रह्म क्षत्रियों की संतान थे।"[१२]

राजपूताना गजेटियर में राजपूताने के गुर्जरों का जाति-पद निर्णय करते समय लिखते हैं कि "गुर्जर लोग जिनके लौर और खारी दो भेद हैं, राजपूतों में से हैं।"[१३]

इलियट महोदय मध्यप्रदेश के नागपुर के गूजरों को पवित्र सूर्यवंश से सम्बन्धित निर्णय करते हैं।"[१४]

गुर्जर प्रतिहारों की विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त की तीव्र आलोचना श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य ने की है। कुछ उनसे मिलते-जुलते और कुछ नये तर्कों के साथ धीरेन्द्र चन्द्र गाँगुली[१५], पं० दशरथ शर्मा[१६], श्री कन्हैयालाल

---

१०. 'हिन्दू भारत का उत्कर्ष', (मध्ययुगीन भारत, भाग २), पृष्ठ ३२ से ५४ तक।
११. 'राजपूताने का इतिहास', जि० १, पृष्ठ १४७।
१२. 'उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास', पृष्ठ १२३, [सन् १९७७ ई० में उत्तर प्रदेश शासन, राजर्षि पुरुषोत्तम टंडन हिन्दी भवन, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ द्वारा प्रकाशित, द्वितीय संस्करण]।
१३. 'राजपूताना गजेटियर', भाग १, पृष्ठ २६२; तुलना करो 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास', पृष्ठ ५१।
१४. इलियट (Glossary), भाग १, पृष्ठ ९९; तुलना करो 'गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास', पृष्ठ ५१।
१५. 'इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टरली', जिल्द १०, पृष्ठ ३३७।
१६. 'पूना ओरियण्टलिस्ट', जिल्द २, पृष्ठ ४९ से ५७ 'राजस्थान थ्रू दि एजेज' जि० १, पृष्ठ ४७२; 'लेक्चर्स आन राजपूत हिस्ट्री एण्ड कल्चर', पृष्ठ ५।

माणिकलाल मुंशी[१७] श्रीकृष्णस्वामी आयंगार[१८], श्री वैजनाथपुरी[१९], ने उनके भारतीय होने का समर्थन किया है।

आभीर (अहीरों) को डॉ० राजबली पाण्डेय एम० ए०, डी० लिट्[२०], श्री मन्नालाल जी 'अभिमन्यु' सम्पादक "यादवंश"[२१] यादव क्षत्रिय बतलाते हैं।

सूरदास ने ब्रज में और मथुरा में श्रीकृष्ण का परिचय नन्द अहीर के पुत्र रूप में कराया है।

"वासुदेव घर भीतर आये, मैं 'अहीर' करि जाने" (सूरसागर पद सं० ४०९०)।

"एई सुत नन्द 'अहीर' के" (सूरसागर, पद सं० ३६८१)।

इस प्रकार अहीर, जाट, गूजर, मराठे सभी सजातीय ज्ञात होते हैं।

हमारा अपना तो यह खयाल है कि भारत की मौजूदा आर्य क्षत्रिय जातियों में अहीर सबसे पुराने क्षत्रिय हैं। जबतक जाट, राजपूत, गूजर, और मराठा नामों की सृष्टि भी नहीं हुई थी अहीरों का अभ्युदय हो चुका था। पौराणिक लोगों ने अहीरों को गिराने के लिए काफी जहर उगला है। ऐसा मालूम होता है हैहय, तालजंघ, अथवा कार्तवीर्या अर्जुन जैसे स्वतन्त्र विचार के और ब्राह्मणों के दासत्व का विरोध करनेवाले क्षत्रिय राजे इसी जाति में पैदा हुए थे जो कि अब अहीर कहलाती है। दूसरी बात यह भी है कि मध्यकाल में जिसे रामायण और बौद्ध काल के बीच का समय कहना चाहिए अहीर लोग या तो अराजकवादी थे या गणतन्त्रवादी। ब्रज में इनकी एक शाख गोपों का कृष्ण-काल में जो राष्ट्र था वह प्रजातन्त्र प्रणाली द्वारा शासित गोपराष्ट्र के नाम से था। नन्द जिसके कि यहाँ श्रीकृष्ण का पालन-पोषण हुआ था या तो वे अहीर थे या जाट। अरबी यात्री

---

१७. 'गुर्जर देश', विद्या भवन, भाग १, पृष्ठ १२० तथा १७३-१८१।

१८. 'जर्नल ऑफ दि डिपार्टमेण्ट ऑफ लेटर्स', कलकत्ता विश्वविद्यालय, जिल्द १०, पृष्ठ ३।

१९. 'दि हिस्ट्री ऑफ दि गुर्जर प्रतिहारज्', पृष्ठ ३-९, [सन् १९५७ ई०, बम्बई]।

२०. 'यदुवंश प्रकाश'।

२१. 'अहीरवंश प्रदीप', यदुकुल सर्वस्व।

अलबरूनी ने नन्द को जाट ही लिखा है। कुछ भी बात हो लेकिन इससे यह सिद्ध होता है कि जाट और अहीरों के पुरखे किसी एक ही भण्डार के हैं। इम्पीरियल गजेटियर के कथनानुसार कुछ अहीर आगे चलकर राजपूत हो गये। शायद दक्षिण भारत में ऐसा हुआ हो। पूर्व की ओर के कुछ अहीर ऐसे पेशे करने लग गये हैं जिनके कारण वहाँ के उच्च हिन्दू उन्हें नीची निगाह से देखते हैं। पेशे के कारण जातियाँ गिराने के रिवाज ने भारत की अनेक योद्धा जातियों को पतित बना दिया। किन्तु प्राचीन गौरव अहीरों का क्षत्रियोचित था और वे क्षत्रिय ही हैं इसमें कोई सन्देह नहीं। अहर नाम की जाति भी अहीरों की ही शाखा है। जाटों का उनके साथ भी समानता का व्यवहार है। उत्तर भारत में अहीर और जाटों की सम्मिलित बस्तियाँ हैं और उनमें रस्मरिवाज में कोई बड़ा अन्तर नहीं है। गूजरों के समान ही अहीर और जाटों की कुछ एक उपाधियाँ भी एक ही हैं।"[१]

"जाटों में ऐसे अनेक गोत्र हैं जो राजपूत-गोत्रों से बिलकुल मिलते हैं जैसे बड़गूजर, भट्टी, दाहिमा, दहिया, दीक्षित, गेहरवार, गहलोत, इन्दोलिया, कछवाहा, मोरी, पवार, परिहार, रैकवार, राठौर, राठी, रावत, सिकरवार, सोलंकी, तोमर आदि-आदि। इन गोत्रों से दोनों जातियों का पीछे की कई पीढ़ियों से जाकर एकत्व सिद्ध होता है। एक ही नाम के राजवंश दो अथवा अधिक दलों में (जाट, राजपूत, गूजर) कब और क्योंकर विभक्त हो गये इस प्रश्न का सही उत्तर यह है कि कुछ राजनैतिक मतभेद के कारण, (साम्राज्यवादी और ज्ञातिवादी अर्थात् प्रजातन्त्री होने) कुछ धार्मिक मतभेदों के कारण (जैन, हिन्दू, बौद्ध आदि के संघर्षण) विभिन्न हो गये और बौद्धकाल के बाद पौराणिक धर्म के उत्कर्ष का अवसर है।"[२]

जाटों की शाखा-प्रशाखाओं का वर्णन

ठा० रुद्रसिंह तोमर—जाटों की खापों के सम्बन्ध में लिखते हैं—"दलाल, सिन्धु, राठी, पँवार, तँवर, गुलेयां, देहिया, जटराना, एलावत, काजान, जाखड़,

---

१. 'जाट इतिहास', पृष्ठ १०९ से ११० तक।

२. वही, पृष्ठ ११४-११५।

जूंद, डागर, सेरावत, सिनसिनवाल, मच्छर, छतीर, छकारा, कंचय, पतलिया, मान, देसवाल, सीवाल, दरार, गुलिया, टयोटिया आदि-आदि हैं।"[1]

श्री रमेशचन्द्र 'गुणार्थी' ने 'दलाल' शब्द को 'हलाल' लिखा है। शेष सभी शाखाएँ तोमरजी के लिखे नामों से मिलती हैं।[2]

जाटों की कुछ अधिक शाखाओं की चर्चा 'ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स' पृष्ठ संख्या और जिल्द से प्रदर्शित की जाती हैं—

अर्क [जि० २, पृ० ६, जिन्द क्षेत्र]
अरब [जि० २, पृ० १३, मुलतान क्षेत्र]
अरवल [जि० २, पृ० २१, डेरागाजीखाँ]
भेडा [जि० १, पृ० ५, जिन्द, संगरूर क्षेत्र]
भगर या भग्गु [जि० २, पृ० ३१, अम्बाला क्षेत्र]
भार [जि०१, पृ० ८४, मुल्तान क्षेत्र]
चाकोरा [जि० २, पृ० १४७]
चंकर [जि० २, पृ० १५३]
चनबल [जि० २, पृ० ५२, अमृतसर]
दाहा [जि० २, पृ० २१९]
दाहल [जि० २, पृ० २१९, मुलतान क्षेत्र]
धार [जि० २, पृ० २३५, अमृतसर]
गडर [जि० २, पृ०]
गहेप [जि० २, पृ० ५०]
गेन्दास [जि० २, पृ० २८३, जिन्द]
गोपालक [जि० २, पृ० ३०२, मुलतान क्षेत्र]
गोसल/गुसुर [जि० २, पृ० ३०५, जिन्द क्षेत्र]
गुडा [जि० २, पृ० ३०५]
हरि [जि० २, पृ० ३२७, जिन्द और मुलतान क्षेत्र]
हिन्जरा [जि० २, पृ० ३३३, गुजरानवाला जिला]

---

१. 'रुद्र क्षत्रिय प्रकाश', पृष्ठ ९६; तुलना करो 'क्षत्रिय वर्तमान' तृतीयावृत्ति, पृष्ठ १७५।
२. 'राजस्थानी जातियों की खोज', पृष्ठ ७३।

जाली [जि० २, पृ० ३५१, जिन्द क्षेत्र]
जामुन [जि० २, पृ० ३५२]
जानि [जि० २, पृ० ३५३]
जानेर [जि० २, पृ० ३५३, कपूरथला]
जरिया [जि० २, पृ० ३७७, जिन्द क्षेत्र]
जटाटीर [जि० २, पृ० ३७७, स्यालकोट]
काचेला [जि० २, पृ० ४२०]
कंजलान [जि० २, पृ० ४३७, जिन्द/हिसार क्षेत्र]
कल्हीर [जि० २, पृ० ४३९, मुरादाबाद, अम्बाला, करनाल]
कलखंडा [जि० २, पृ० ४४१, जिन्द क्षेत्र]
कपाही/कापई [जि० २, पृ० ४७५, मुलतान क्षेत्र]
खोसा/खोसार [जि० २, पृ० ५५०, मुलतान क्षेत्र]
कुक/कोक [जि० २, पृ० ५६०, होशियारपुर, नाभा क्षेत्र]
लंगा [जि० २, पृ० ३०]
लाहिल [जि० ३, पृ० १०]
लाखा/लखी [जि० ३, पृ० १९]
लार [जि०३, पृ० ३१]
लाट [जि० ३, पृ० ३२]
मैर [जि० १, पृ० ३६९]
मिहिर [जि० ३, पृ० ४५]
मरार [जि० ३, पृ० ७०, लुधियाना]
माहे [जि० ३, पृ० ४६, अमृतसर, शाहपुरा जिला]
नईच [जि० ३, पृ० १५०, शाहपुर, मुलतान, बाहावलपुर]
नट्ट [जि० ३, पृ० १६५, लुधियाना]
ओझ [जि० ३, पृ० १७६, अमृतसर]
पुरिया [जि० ३, पृ० १९९, जिन्द क्षेत्र]
राड [जि० ३, पृ० २६८]
रैन [जि० ३, पृ० २७१, जिन्द क्षेत्र]
सतेग्राह [जि० ३, पृ० ३८८, अमृतसर]

सांघान [जि० ३, पृ० ३६९]
सारापिया [जि० ३, पृ० ३७४]
सवेरा [जि० ३, पृ० ३९०]
सौंच [जि० ३, पृ० ३९०, जिन्द क्षेत्र]
सिप्रा [जि० ३, पृ० ४२७]
सुदा [जि० ३, पृ० ४३१, बीकानेर क्षेत्र]
सुरा [जि० ३, पृ० ४४५]
तोकास [जि० ३, पृ० ४८१, जिन्द क्षेत्र]
उधाना [जि० ३, पृ० ४८१, लोअर डेराजाट क्षेत्र]
उप्पल [जि० ३, पृ० ४८३, माँटगुमरी, लुधियाना, अमृतसर, जिलाएँ]
विभि [जि० ३, पृ० ५०७, मुलतान क्षेत्र][3]

जाटों की शाखाओं की विस्तृत सूची—अबरा, ऐलावत, अन्दार, आन्तल, आर्य, असिआक, अटवाल, अत्री, औलाख, बब्बर, बगदावत, बजाड़, बाजवा, बल/बाल, बाल्लान, बलहारा, बाण, बैन्स (बेन्स); बस्सी, बाठ, बेलारी, बेन्हवाल (बेनीबाल); भम्बू, भग्गू (भंगल), भिण्डर, भट्टी, बोपाराय, भुल्लर, बरिंग, बिसला, ब्रार, बुघवार, बूरा, चल्ल, चट्ठा, चौहान (चवान); चेबुक, चीमा, छिल्लर, छिकारा, छोंकर, छीना, चिमनी, डवास (डवास), डागर (डागुर); दहिमा, दहिया, दलाल, डल/ढल, दौल्ता, डांगी, दराड, दशवाल, देओल (देवल), धामा (धामी), धालीवाल (धारीवाल); ढाका, धन्खड़, ढान्च, ढान्डा, धनोया, धारण, ढिल्लो, ढिन्डसा, ढिन्डवाला, ढोंन्चक, धूल, दोहन, दोसांझ, गाल्लान, गढ़वाल, गौर (गौरु), गौराया, गजवा, धन्गस (खन्डास), घूमन, गिल, गोधा, गोदारा, ग्रेवाल, गुलिया, गुहिल (गेहलावत), गूहड़, गुरलावत, गोन्दल, गुस्सर, हाल (हाला); हंस, हेर, हुडा, हेन्गा, **जाखड़**, जागलेन, जलौटा, जन्जुआ, जोहल, जनवार, जटासरा, जटयना, झजरिया, जोहिया, जूणो (जौणी), कादमान, (काद्दान), काजला, काक, काकर (काकरान); कठिया, कल्लान, काहलों, कलकिल, कांग, कटारिया, कश्वां, खर, खेर, (खेरे), खरप (खरब), खत्री,

३. श्री दहियाजी कृत 'Jats the Ancient Rulers (A Clan Study) p. 333-334.

खटकल, खोखर, कलेर, कोहाड़, कुलार, कुन्डू, कुन्टेल, लल्ली (लल्ल); लखनपाल, लाम्बा, लाठर, लठवाल, लोचब, लोहान, लोहरिया, माछर (माठर); मदेरना, मधान, माहिल, मलिक, मल्ली (मल्ल), मान, मानाट, मण्ड, मन्डेर, मावला, महला (महलावत), मिन्हास, **मिर्धा**, मिठा, मोखर, मौर (मौड़); मुन्ड, नाल्ल, नलवा, नान्दल (नान्दर), नैन, नैपाल, नरवाल, नौबर (नौबार), नासिर, नहरा, निज्जर, नूनिया (नून), ओल्लान, ओझलान, ओजला, ओढ़ान, (ओढ़ान्), पाहल, पल्लवाल, पन्गाल, पनेसर, पनाइच, पन्नू, पन्याग, परिहार, परोदा, पवार, परसवाल, फोर (पोर), फार्वे, (पारदे), फोगाट, फुल्का, पीरू, पोटलया, पूनिया (पौनिया), राय, राणा, रांझा, राठी, रत्तौल (रठौल); राठौर, **रणधावा**, रापडिया, रावत, रेढू, रिआर, रोज, रूहिल (रोहेला), सहीता, सहरौत (सहरावत), सालार, सलकलान शमिल, समरा, संघा, सन्घड़ा, सागबान, सिनसिनवार, सन्धू (**सिन्धु**), सपरा, सारण, सरोहा (सरोही), सरान्ह (सरान्ध्), सासी, सेखों, सिवाच, स्योकन्द, स्योराण, शाही, शेरगिल, सिविया, सिहमार, सिगरूट, सिद्धू, सिकरवार (सगरवार, सकरवार), सोल्ल, सोल्गी (**सोलंकी**), सुहाग, स्याल, तक्खर, ताल्लान, टांक (टाक), तन्वार, तातरान, ठिन्ड, टेवठिया (**तेवतिया**), ठाकरान, टिवाना, तूर, तुसार, तोमर, उटार, उल्हान, विर्क (वृक); वराइच (भराइच, वराइश), वाटधान।[4]

उपर्युक्त सभी शाखाओं में से कुछ प्रसिद्ध शाखाओं का वर्णन—

ऐलावत—जम्बूद्वीप के सम्राट् ययाति ऐल के वंशज हैं। वाराहमिहिर ऐलावत तक्षशिला व पुष्कालावती, पौरव (पौर जाट) और पंघल जाटों के साथ वर्णन करता है।[5] ऐलावत रोहतक व हरयाणा और उत्तर प्रदेश में पाये जाते हैं।

अटवाल—इनका समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तम्भ पर शिलालेख में 'अटविकास' नाम से उल्लेख है। वहाँ 'वाल' का 'का' है। ये पंजाब में पाये जाते हैं और गुरु नानक महाराज के अनुयायी हैं।

४. श्री दहिया जी कृत 'Jat the Ancient Rules', (A Clan Study), p. 236-244.
५. बृहत् संहिता, ४, २६-२६ [Studies in Indian history and Civilisation by Shree Buddha Prakash, 1962, p. 29-30].

अत्री—ये अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) के खैर व तापाल तहसीलों के ९० ग्रामों में पाये जाते हैं।

औलाख—ये पंजाब व उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में पाये जाते हैं।

भम्बू—दशवीं शताब्दी में भम्बू राजा की राजधानी सिन्ध में भाम्बुरा के नाम से कनिंघम ने की है।[६]

बोध/बोधा/बुधवार :—'बुधवार' खत्रियों में भी पाये जाते हैं। ७ या ८वीं शताब्दी के सिन्ध व बलोचिस्तान के **बोधी** हैं। वर्तमान बुधवार जाट उन्हीं के प्रतिनिधि हैं।

महाराज चन्द्र के पुत्र बुध नाम पर यह वंश चला।

बिजनौर जिले में इस्माईलपुर, हीमपुर, नारायणखेड़ी, और रोहतक में सुनारी नामक स्थान के बुधवारों की आधुनिक उन्नति उल्लेखनीय है।

चौहान (चावान)—चौहानों को प्राचीन ३६ राजवंशों में तो गिनाया है किन्तु यह वंश भी अनेक वंशों का समुदायमात्र है। कुछ लोग इन्हें अग्निवंशी राजपूत मानते हैं, परन्तु यह बात भ्रमपूर्ण है। चौहानों के बहुत से शिलालेख, दानपत्र तथा ऐतिहासिक संस्कृत पुस्तकें मिली हैं, जिनमें से किसी में उनका अग्निवंशी होना नहीं लिखा। 'पृथ्वीराज विजय' में जगह-जगह उनको सूर्यवंशी [काकुत्स्थमिक्ष्वाकुरघू च यद्दधत्पुराभवत्त्रिप्रवरं रघोः कुलम्···२।७१, पृथ्वीराज विजय महाकाव्य] बतलाया है।

जैन विद्वान् श्री नयचन्द्र सूरि ने हमीर महाकाव्य सर्ग १ नामक चौहानों के इतिहास का ग्रन्थ रचा, जिसमें भी चौहानों को **सूर्यवंशी** होना माना है।[७]

छीना—ये जालन्धर (पंजाब) में पाये जाते हैं। श्री एच० एस० छिन्ना आई० ए० एस०, मुख्यमन्त्री, पंजाब सन् १९७६ ई० में इसी शाखा के हैं।

ढील्लों—दिल्ली नाम इन्हीं के कारण हुआ था जो बाद में चौहानों ने ले ली थी। फरिश्ता के अनुसार किदार की मृत्यु के पश्चात् जयचन्द ने कन्नौज की गद्दी ली जो अपने भाई ढिल्ल या दाहला से जीत ली, जिसने दिल्ली नगर की

---

६. Ancient Geography of India, 1973, by Shree B. C. Law, p. 248.

७. डा० ओझाकृत 'राजपूताने का इतिहास', जिल्द १ पृष्ठ, ७२ से ७४ तक।

स्थापना की थी। श्री गुरुदयाल सिंह ढिल्लो, पूर्व प्रवक्ता भारतीय लोकसभा, तथा श्री सरदार प्रकाशसिंह बादल, भूतपूर्व मुख्यमन्त्री पंजाब भी इसी ढिल्लो शाखा के हैं। बंजवार या भंगी मिसल और करोड़ सिंहिया नामक दो मिसले इसी वंश की थी। ढिलान, ढिल्लवाँ इसी शाखा के हैं।

गठवाल/काथवाल/कठिया—"जाटों की प्रसिद्ध शाखा 'मलिक' के साथ मिला दी गयी है यद्यपि सामाजिक उत्सव, विवाहादि में ये अपने गोत्र गठवाल कहते हैं।

खंगास—ये पंजाब व हरयाणा में पाये जाते हैं।

गोराया (घौर, गौरु, गौर)—ये जी० टी० रोड लुधियाना व जालन्धर के मध्य में पाये जाते हैं। ये मान्धाता के वंशज कहे जाते हैं। टॉड ने इन्हें ३६ राजवंशों में गिना है। सिरोही (राजस्थान) पर शासक थे। चौहानों के पूर्व ये अजमेर के चारों ओर भारी संख्या में निवास करते थे। उदयपुर, जयपुर, अजमेर, ब्यावर, किशनगढ़, पंजाब व उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों में इस शाखा के लोग विशेष रूप से पाये जाते हैं। क्षत्रियों में भी **गौर (गौड़)** पाये जाते है। ठा० रुद्रसिंह तोमर ने गौड़ों को सूर्यवंशी क्षत्रिय माना है। गौड़ क्षत्रिय सूर्यवंशी श्रीरामचन्द्र जी के छोटे भ्राता भरतजी के पुत्र तक्षक के वंशज हैं।[८]

आपने 'गौड़ों का इतिहास' भी लिखा था।[९]

डॉ० ओझाजी का मत है—"अवधवाले गौड़ देश (मत्स्य पुराण १२श्लोक ३०) के निवासी ब्राह्मण, राजपूत आदि गौड़ ब्राह्मण, गौड़ राजपूत, गौड़ कायस्थ, गौड़ चमार आदि नामों से प्रसिद्ध हुए। राजपूताने के गौड़ राजपूत और ब्राह्मण संभवतः अवध के गौड़ हैं न कि बंगाल के। उनकी उत्पत्ति भाटों की ख्यातों में स्वयंभुव मनु से बतलाई गयी है और वे चन्द्रवंशी माने जाते हैं।"···[१०]

तोमरजी सूर्यवंशी व ओझाजी चन्द्रवंशी मानते हैं। डॉ० बहादुरसिंह (क्षत्रिय जाति की सूची, पृष्ठ ७४, तृतीयवृत्ति), पं० हरप्रसाद शास्त्री भी इन्हें चन्द्रवंशी मानते हैं।

---

८. 'रुद्र क्षत्रिय प्रकाश', पृष्ठ ५२-५३।

९. 'गौड़ इतिहास', क्षत्रिय रिसर्च सोसाइटी, दिल्ली से संवत् १९९१ वि० में प्रकाशित जो अब अप्राप्य है—लेखक।

१०. 'राजपूताने का इतिहास', जिल्द १, पृष्ठ २७३।

गोन्दल—कश्मीर के इतिहास में इनका नाम 'गोनन्द' पाया जाता है। शताब्दियों तक इन्होंने कश्मीर में राज्य किया। 'गोन्दल' से 'ल' संस्कृतनाम 'गोनन्द' हो गया है। नन्द जाट (मौर्यों के पूर्व) नान्दल (नान्दर) कहलाते हैं।

हाला (हाल)—रिपुशाल्य नृप की मुद्रा पाई गयी है। ये बलोचिस्तान व सिन्ध द्वारा पश्चिम से शाल्वका गिरि[11] वर्तमान हाला पर्वत और पश्चात् उत्तर सौवीरा की ओर बढ़ते हुए मुख्य रूप से उत्तर राजस्थान में बस गये।

संभवतः आधुनिक हाला जाट शाल्व प्राचीनकाल में कहलाते थे, परन्तु साल (स्याल) एक पृथक् जाट शाखा है।

जाखड़—महाभारत में ये जागुड के नाम से कहे गये हैं। वर्तमान लोकसभा के प्रवक्ता श्री बलराम जाखड़ इसी जाट शाखा के हैं।

जटासरा—बृहत् संहिता में ये जटासुर, पोटल, भल्ला आदि कहे गये हैं। 'जटराणा' अब 'राणा' कहलाते हैं।

काकुस्थ (काकवंश)—वायुपुराण ४।२।१४ में इनकी चर्चा है। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तम्भ की शिलालेख में खरप, सलकालान आदि सभी जाटवंशों के साथ वर्णन है।[12]

इक्ष्वाकु के विकुक्षी नामक पुत्र से महाराज ककुस्थ हुए। इनके प्रबल प्रताप के विशेष प्रसार होने से इनका वंश **काकुस्थ और काक एवं काक राणा** नाम से प्रसिद्ध हुआ। ये मेरठ, बिजनौर, जगाधरी के पास पाये जाते हैं। मेरठ में मसूरी, बणा, राफण, पहाडपुर-मुजफ्फरनगर में फईमपुर, राजपुर, तिलोरा ग्राम इसी वंश के हैं। बिजनौर में आलम सराय, नजीबाबाद में रम्पपुरा, पृथ्वीपुर आदि गाँव काकराण हैं। चौदह राणाओं की सन्तति ककोरकला सबगा मेरठ में सिसौना चन्दूपुरा बिजनौर में बसती है।

यादव—सुप्रसिद्ध प्राचीन चन्द्रवंशी महाराज यदु के वंशज यादव कहलाये। 'यदु' का अपत्यवाचक 'यादव' होता है। कानपुर में **'जाजमऊ'** स्थान है जो

---

११. डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल एम० ए०, पी० एच० डी० कृत 'पाणिनी-कालीन भारत', पृष्ठ ४५, [संवत् २०१२ वि० में मोतीलाल बनारसीदास, चौक, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

१२. 'इण्डियन एण्टिक्वरी', वाल्यूम २।

'ययाति के कोट' के नाम से प्रसिद्ध है। आज सम्पूर्ण अहीर अपने को 'यादव' कहते हैं।

"२९ दिसम्बर १०३१ ई० (पहली मुहर्रम ४२३ हिजरी) को पूरी होनेवाली 'तहकीकए हिन्द' नामक पुस्तक में प्रसिद्ध अरब यात्री अबुलरिहा मुहम्मदअबिन अहमद अलबुरुन ने भगवान् कृष्ण को जाट जाति का पूर्वज लिखा। 'कारनामा राजपूत' के लेखक नजमुलगनी ने लिखा है कि "इस जाट कौम को भगवान् कृष्ण से पैदा होने का गुमान रफ होता है।" इसी भाँति बुलन्दशहर मेमायर्स के लेखक राजा लक्ष्मणसिंह ने लिखा कि "यह प्रमाणित सत्य है कि भरतपुर के जाट श्री कृष्णचन्द्र से गौरवान्वित यादवों के वंशज हैं।"...[13]

शिवस्कन्दे (सौकन्दे)—हालय महाराज से नौवीं पीढ़ी में राजा शिवस्कन्दे से भी यादव वंश की एक शाखा प्रचलित हुई जो 'सौकन्दे' के नाम से दिल्ली के नांगलोई, मंगोलपुरा आदि १२ ग्रामों में और उत्तर प्रदेश के बिजनौर के दारानगर गंज के समीप खरक ग्राम जाटों में प्रसिद्ध है।

खिरवार (खरे)—"भगवान् श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध के पुत्र वृज के बड़े पुत्र खिर थे। इनकी परम्परा ने इनके नाम पर खिरवार वंश की प्रतिष्ठा की। इनके परम पुरुषा खिर का राज्य बृजमण्डल पर था, अतः इस वंश के जाट आज भी बृज के अन्तर्गत आगरा जिले में ही रहते हैं। पथौली इस वंश की अच्छी रियासत रही। पंजाब में तरनतारन के समीप खण्डूशाह, सांगोकी, शेरों, उसभा, झाली, गोलवाड़ा, मानकपुरा इस वंश के प्राचीन आर्यों की बस्तियाँ हैं। मध्य प्रदेश में यह खिरवार शब्द खिनवाल नाम से प्रसिद्ध हुआ। उधर इस वंश के कुछ पुरुष हरदा, होशंगाबाद में जाकर शिवाजी और उनकी परम्परा की सहायता करते हुए 'भोंसला बहादुर' की उपाधि से सत्कृत किये गये। राव जगभरथजी को नृसिंह का इष्ट था। इन्होंने नरसिंहावतार के दो मन्दिर बनवाये और नरसिंहपुर नामक नगरी को बसाया। इनकी परम्परा देर तक इस नगरी पर स्वतन्त्र शासन करती रही। इस परिवार ने हिन्दु-सिक्खों में समान प्रतिष्ठा प्राप्त की।"[34]

खत्री—ग्रीकों ने इन्हें 'जाथ्रोई' (Xathori) संस्कृत क्षत्री के अनुरूप प्राचीन

---

१३. 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान-पतन एवं जाटों का उत्कर्ष', पृष्ठ २८६।

१४. वही, पृष्ठ २८८।

जातियों में वर्णन किया है। कौटिल्य कहते हैं कि वे 'व्रतशास्त्रोपवीजीन' संघ की तरह थे। जायसवाल इन्हें वर्तमान सिन्धी खत्री पहचान करते हैं। पंजाबी खत्री और खत्रीजाट "क्षत्र" के नाम से याद किये जाते हैं। ईरान का प्रथम बादशाह टर्की का प्राचीन 'हिट्टीटेस' मिश्रियों की तरह 'खतीस' 'खत्री' जाने जाते थे। खत्री जाट आजकल रोहतक, सोनीपत में पाये जाते हैं।

राठी (राष्ट्री)—भारतीय साहित्य में राष्ट्रिका के नाम से इनका वर्णन है। इनका वर्णन भोजों के साथ है और दोनों ही शासक थे। जायसवाल के अनुसार सौराष्ट्र नाम इनके बाद पड़ा है। 'अर्थशास्त्र' में 'सुराष्ट्र' और उनके राष्ट्रिका सरकार के सम्बन्ध में चर्चा है।

अशोक के शिलालेखों में इन्हें राष्ट्रिका गिरनार, राथिका शाह बाजगढ़ी और राथका मानसेहरा शिलालेखों में हैं।

हाथीगुम्फा शिलालेख में यह वर्णन है कि उड़ीसा के राजा खारवेल के शासन के चौथे वर्ष में उसने राठी व भोजकों को पराजित किया। आजकल ये मध्यप्रदेश के मालवा में हैं।

राठी गुजरात राज्य में एक व्यापारी समाज है और शायद वे हरयाणा और राजस्थान क्षेत्र में जाट वंश के हैं।

९१७ संवत् में लिखाये हुए राजा अमोघवर्ष के कोन्नूरवाले शिलालेख, ९८७ संवत् के राजा गोविन्दराज के खम्मात के ताम्रपत्र, ९९० वि० के सांगली और १०१५ वि० के करहाड़ स्थान पर लेखों में भी इस वंश को चन्द्रवंश की शाखारूप यदुवंशी लिखा है। हिमाचल प्रदेश की साधारण प्रजा में जम्मू के मियाँ राजपूतों की एक अल्ल, माहेश्वरी वैश्यों में अपने को राठ नाम से व्यवहार करते हैं। क्षत्रिय राठ राठी उनसे सर्वथा पृथक् हैं। लुहारू, खेतड़ी, झुनझुनुवाटी, डीडवाना में तथा अलवर में काली पहाड़ी के चारों ओर राठ या राठी जाट क्षत्रियों की जनसंख्या विशेष है। पंजाब में जीन्द व पटियाला के अतिरिक्त अन्यत्र अभाव है।

रोहतक में बहादुरगढ़, साखौल, सराय, औरंगाबाद, बामरौली, गढ़ी राजुल, खरड़, राजपुर, भापरौद, मेरठ में टीकरी गांगरौली, हिम्मतपुर सूझती, बडकली, करनाल में मनाना करवाल, गाजड़ वाला जाटक, मुजफ्फरनगर में भांपा धीराहड़ी, निरगाजनी, लखनौती, सहारनपुर में लिब्बरहेड़ी, टिकरौल नसीरपुर नारसनकला, जगजीतपुर, बिजनौर में रायपुर, फजलपुर, गंजालपुर काशीमपुर,

करौली, टूंगरी, सफियाबाद, देवीदासवाला, जालपुर में कुं० तारासिंह जी का केवल एक घर, मुरादाबाद में जहाँगीरपुर आदि ग्राम राठी जाटों के हैं।

सिधु (सिद्धू)—'बंगला विश्वकोष', जिल्द ७, पृष्ठ ६ में लिखा है—"पूर्व सिंधु देश जाट गणेर प्रभुत्व थीलो—जाट रमणीगण सुन्दरच औ सतीत्व जन्य सर्वत्र प्रसिद्ध होईय।"

अर्थात्—प्राचीनकाल में सिंधु देश में जाटों का गणराज्य था। और जाट कुल-बालाएँ अपने सौन्दर्य और सतीत्व के लिए सर्वत्र प्रसिद्ध हैं।[१५]

लाहौर में इनकी सब वंशों से अधिसंख्या थी। समस्त पंजाब में ब्रटिश सत्ता के विरुद्ध सर्वप्रथम क्रान्ति का स्वप्न लेना सरदार अजीतसिंह का ही कार्य था, जिन्होंने आजीवन विदेशों में रहकर घोर कष्टों को सहन किया। इन्हीं के भ्राता देशभक्त सरदार किशनसिंह के पुत्र अमरहुतात्मा सरदार भगतसिंह के कारण भारतीय क्रान्ति का इतिहास अत्युज्वल है। सिन्धु वंश के नायक रूप में इस वीर को स्मरण किया जाएगा। इस प्रकार सिन्धु वंश जाटों में अत्यन्त प्रतिष्ठा प्राप्त राजवंश है। आज भी कलसिया, फतेहगढ़, सिरानवाली, बड़ाला, भड़वाल, ठाठर, पधाना, चुनिया भडन, कालया वाला, मौकल आदि विशाल जागीर और वीर विद्वान् साधुसन्त इस दल में हैं।

इनकी अधिक संख्या सिक्खों में है किन्तु मुरादाबाद, मेरठ, हिसार के हिन्दुओं में भी उनकी कुछ स्थिति है। हरयाणा में ये 'सिन्धड़' कहलाने लगे हैं।

पटियाला का राजघराना इसी वंश का है। 'ब्रार' दूसरे वंश, सिन्धुओं से अलग हो गये हैं और ब्रार भी सिन्धु ही हैं। श्री एच० एस० ब्रार, हरयाणा के राज्यपाल इसी वंश के थे।

तँवर (तोमर)—इस प्रसिद्ध वंश के आदि पुरुषा महाराजा ययाति के पुत्र यदु के भाई तुर्वसु थे। 'तँवर' क्षत्रियों में भी पाये जाते हैं। रघुवंशी प्रतिहार जब कन्नौज पर शासन करते थे उस समय दिल्ली से कुरुक्षेत्र तक के प्रदेश पर तँवर-वंशियों का एकाधिकार था। दिल्ली संस्थापक महाराज अनंगपाल तँवरवंशी ही थे।

वर्तमान काल में तँवर राजपूत जाट दोनों दलों में मिलते हैं। जयपुर के

---

१५. 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान-पतन एवं जाटों का उत्कर्ष', पृष्ठ २९६।

पाटन द्यौसा तँवरावटी और गाजियाबाद के समीप ८२ गाँव राजपूत तँवरों के हैं। जाट तँवर दिल्ली के चारों ओर मेरठ, मुरादाबाद, बिजनौर व अलीगढ़ में बसे हुए हैं। मथुरा में महाराना व फालसा ग्राम तँवर जाटों के हैं।

तँवर व तोमर एक ही हैं। 'तँवर' नाम को संस्कृत लेखक 'तोमर' लिखते हैं और भाषा की पुस्तकों में 'तँवर' मिलता है।

तेवतिया (तेवाठी)—शिविगोत्री जाटों ने तिब्बट गाँव के स० गोपालसिंह की अध्यक्षता में भयंकर छापे मारने प्रारम्भ किये। १७०५ ई० में जिनौली या लायलपुर जि० गुड़गाँव में अपना निश्चित स्थान बनाया। इनके अन्य वंशधर जिनौली, नगला, तिरसण, करिज, हाजीपुर, देलाको, छपरौला, अछरौदा, नगंला भुक्कू, अटाली आदि ग्रामों में आ बसे।

इन्होंने भटिण्डा के पूर्व निवास में प्रचलित शिविवंश के स्थान पर अपने को तिव्वत गाँव के नाम से **तेवतिया** प्रसिद्ध कर दिया। मेरठ में जानी खुर्द, चित्तौड़ा, भदौला और मुरादाबाद में भवानीपुर नामक गाँव तेवतियों के हैं।

चौधरी चरणसिंह एम० ए०, एल्-एल्० बी०, भूतपूर्व प्रधानमन्त्री भारत सरकार इसी तेवतिया वंश के हैं।

शिवि—सम्राट् उशीनर के पुत्र शिवि थे। इन्होंने शरण में आये कपोत की रक्षा के लिए अपना मांस और पश्चात् सम्पूर्ण शरीर भी देना स्वीकार करके शरणागत वत्सलता का अमर उदाहरण उपस्थित किया था। पेशावर के उत्तर उद्यान नामक स्थान में इनका राज्य था। जाटों में शिविगोत्रियों की बहुत बड़ी संख्या है। श्री कुर्क महोदय लिखते हैं—

"The Jats of south-eastern divide themselves into two sections Shivgotri of the family of Shiva and Kashyapgotri." अर्थात् दक्षिणपूर्व के जाट अपने को दो भागों में विभाजित करते हैं शिविगोत्री या शिव के वंशज और कश्यपगोत्री। पंजाब में सिक्ख जाटों में शिवहोते दल के क्षत्रिय भी शिविवंश के ही हैं। जालंधर जिले में चकदेशराज, बड़ापिण्ड, छोटी रुढ़का, चकमाह, पिसौड़ी इसी वंश के बड़े ग्राम हैं।

माहला-मोहिल-महनार्या-महलावत—माहिलों का उरियल (वर्तमान उरई—जालौन) नामक रियासत बुन्देलखण्ड (उत्तर प्रदेश) में थी।

इस वंश के जाट राणा वैवरसल के वंशज मेवाड़ में तथा शेष प्रजा पंजाब, हरयाणा, ब्रज, रुहेलखण्ड के विभिन्न जिलों में जा बसे। १९४१ ई० की मतगणना के अनुसार फिरोजपुर में १०४५, अमृतसर में २५५५, जालंधर में १५७५, जींद में ४१७, पटियाले में ७९५, सिक्ख जाट माहिल थे। अलवर का बहरौड जाट गाँव, शेखावटी जामपुर में पईवा, मेरठ में रसूलपुर, दवथला, बइला, मथुरा में छाता, बुलन्दशहर में चिट्टा, हिसार में जननायक कौष्टिन रणजीतसिंहजी मन्त्री पंजाब और राव बहादुर नौनिहाल सिंह का सुप्रसिद्ध डावरा, मिलकपुर, सौराया खेड़ी, लाधड़ी, खुसरा, अलीगढ़ में भोजपुर, जहाँगीराबाद गाँव माहिल जाटों के हैं।

महनार्या—माहिलों की उस शाखा समुदाय में हैं जो बहावलपुर राज्यान्तर्गत महिनारगढ़ के शासक भूसलदेव को अपना पूर्वज मानते हैं। इस राजा भूसलदेव को ग्रीक राजा ने पराजित किया था। वह किला आज भी ध्वंसावशेष रूप में विद्यमान है। यहाँ के निकले हुए जाट क्षत्रिय 'भूसलान महिनार्या' नाम से प्रसिद्ध हुए। बिजनौर जिले में वाजिदपुर में आबाद होकर लम्बाखेड़ा में इस वंश का बहुत वैभव चमका।

वेणीवाल—प्लिनी ने इन्हें बेने (Benae) वृसायी (Brysai) के साथ वर्णन किया है। आधुनिक नाम वेणीवाल व वरैश जाट हैं।

ह्यून चांग ने चक्रवर्ती राजा के स्मारक बना केसरिया के समीप स्तूप में राजावेण चकवर्ती का वर्णन किया है।[१६]

कनिंघम ने बिहार, अवध व रुहेलखण्ड में उसी प्रकार की परम्परा वीरता की कहानी की चर्चा की है।

ये अपना इष्टदेव शिव और वंश नाग ही बतलाते हैं। ये अपने को शिव की वेणी = वालों के गुच्छे से उद्भूत लिखाते हैं। बीकानेर की प्राचीन भूमि पर १५वीं शताब्दी तक यह वंश भी १०५ ग्रामों में बसे हुए थे। अब इनके १५ ग्राम ही रह गये हैं। शेष पराजय कष्ट से यत्र तत्र चले गये। हिसार में ३० ग्रामों में हैं। सहारनपुर में दहिया की मण्डावली, मेरठ में दुहाई, बुलन्दशहर में निवैहड़ा, जटपुरा, खदाना में, जिला मथुरा में नानपुर, वही नगर, गानपुरा चन्दौरी, धनौरा ग्राम हैं जो कोसीकलाँ के समीप वेणीवालों के हैं।

---

१६. V. A. Smith, journal of Royal Asiatic Society, 1902, p. 271.

रावत—भूमिहार ब्राह्मण, क्षत्रिय, अहीर आदि जातियों में यह एक उपाधि है। तँवरों की शाखास्वरूप ही यह वंश 'राजावत्' शब्द के अपभ्रंश रूप में प्रचलित हुआ। गुड़गाँव (गुरुग्राम) में पलवल के पास ८० ग्राम और अलीगढ़ में इगलास के समीप ८ ग्राम और बिजनौर में जटपुरा रावत जाटों के सुप्रसिद्ध स्थान हैं।

राव या सराव—'राव' क्षत्रियों व दक्षिण के ब्राह्मणों की उपाधि है। हरयाणा के सभी अहीर अपने नाम के अन्त में 'राव' लिखते हैं। पहले बिहार में इनकी उपाधि **'राउत'** थी। 'राउत' कूर्मी, वारि लोग भी लगाते हैं।

दिल्ली के समीप निवास करनेवाले इन क्षत्रियों को कर्नल टॉड ने तँवर ही माना है। गाजियाबाद के निकट इस वंश के राजपूतों की भी अच्छी संख्या है। सराव वंश का उच्चकोटि का सुप्रसिद्ध वीर बाबा फूलासिंह अकाली था जिन्होंने बड़े-बड़े युद्ध स्वतन्त्र रहकर पठानों व अंग्रेजों से किये। तरनतारन में इस वीर की समाधि है। लुधियाना में दहड़ू, जयपुर में धकियाना, जोधपुर में छाजौली, साडीला, खजवाना, छोटी खाटू, मुजफ्फरनगर में घटायन, बिजनौर में पीपल धंसरपुर, मेरठ में नूरपुर अटौला आदि में रावबंशी जाट रहते हैं।

सहरावत (सहरौत)—तँवरों का यह दल दिल्ली के समीप महरौली, महीपालपुर, नांगल, मंगलापुर, दर्यापुर, पालम, महानगर, कैर, वाजिदपुर, बकरवार, गुड़गाँव में दयालपुर, रोहतक में आधामदानी, कुलताना, भरतपुर में जटौली, हिसार में भगान, नाथवास, खरड़, मेरठ में लिसाढी दरवाजा व जलालाबाद, अलीनगर, अड़ौला, तिगरी ग्राम सहरावों के हैं। इस वंश में चौधरी शहजाद सिंह पंजाब-केसरी रणजीतसिंहजी महाराज का अंगरक्षक वीर पुरुष था। उसके वंशज भोकरहेड़ी में रहते हैं।

तक्षक नाग (टोंक)—तक्षक वंश को ताखा, टोंक, टक्क, तक्खर, तोकस, टोकस, तक्क भी कहते हैं। आजकल हरयाणा में सोनीपत के पास इनके १२ ग्राम है जिनमें राठधना, वैमापुर, ललारा, हरसना, जठेरी, लखाना, लिवासपुर, कालूपुर, लहलुराड़ा, जटसेनी आदि प्रमुख हैं। दिल्ली के तक्षक जाट **टोकस** कहलाते हैं जो खाण्डवदाह में बचने से यहीं बस गये। इनके मुनीरका, मोहम्मदपुर, हुमायूँपुर, हौजखास आदि विशेष सम्पन्न ग्राम हैं। खैरागढ़ नरेश भी नागवंशी हैं। नागवंशी क्षत्रिय भी पाये जाते हैं।

कर्नल टॉड ने टांकों को ३६ राजकुलों की सूची में दिया है। श्री सी० एस० गुप्त के शब्दों में—"टांकों की गाथा सन्तोषजनक स्पष्टीकरण नहीं है। ये मुद्राएँ टंकाणा (टाक) जाति, यौधेय व मालवा लोगों के सदृश उनके समाज के नाम पर हैं। यह प्रकट करता है कि उनकी मुद्राओं पर जिस नाम की चर्चा है धीरे-धीरे मुद्राओं पर अंकित हो गया।"[१७]

टांक मुद्राओं का वर्णन दक्षिण में भी है।[१८]

एक समय समस्त पंजाब टांक देश कहलाता था। चीनी यात्रियों ने इस तथ्य का उल्लेख किया है।

शिव के गले का हार नागों की पूजा के कारण ये नाग कहलाये। 'भारशिव' पर ऐसा विचार श्री काशीप्रसाद जायसवाल का है।

जटराना—इस वंश की जाटू या जाटराना नाम पर ख्याति है। इनके मुजफ्फरनगर (उ० प्र०) में दतियाना, खेड़ागढ़ी के समीप १२ ग्राम और गढ़ी कुण्डला, कुजोपुर, सहदपुर, सोहड़ी जिले रोहतक के उन्नतिशील ग्राम हैं। मायापुर, सोफतपुर, बिजनौर में उदलहेडी नंगला सलारू, मन्नाखेड़ी, सहारनपुर जिले में जजराणों के प्रमुख स्थान हैं।

गिल—यह जाटों का प्रसिद्ध वंश है। पार्थोत्वन के लेखक श्री धनराजसिंह B. A., P. C. S. में इस वंश के लिए लिखा है—"The name of Madu, Gill, Jat, the traditional founder of Mojitha (Amritsar) is derived from Madglah Yudhisthir." (p. 87)[१९]

मदु, गिल, जाट, मजीठा (अमृतसर) के परम्परागत संस्थापक मदग्लह युधिष्ठिर से निकालते हैं।

महाराष्ट्रीय ब्राह्मणों में भी गिल एक वंश है वहाँ भी सम्भवत: गाड़े जानेवाली किंवदन्ति के आधार पर ही वे गिल—**गाडगिल** कहलाते हैं जिनमें श्री

---

१७. विश्वेश्वरानन्द इण्डियोलोजिकल जर्नल (होशियारपुर), जि० १६, भाग १, पृष्ठ ९३।

१८. जर्नल आफ नूसीसमेटिक सोसाइटी आफ इण्डिया, ३० (१९६८), पृष्ठ १२९।

१९. 'क्षत्रिय जातियों का उत्थान-पतन एवं जाटों का उत्कर्ष', पृष्ठ ३७०।

नरहरि विष्णु गाडगिल राज्यपाल पंजाब का नाम उल्लेखनीय है। पंजाब के गिल जाटों ने गुरु गोविन्दसिंह के आह्वान पर सामूहिक रूप से सिक्ख मत को ग्रहण कर लिया। इनकी मजीठा रियासत सबसे समृद्ध व पुरानी है। सेना में इनकी शेरगिल रेजिमेण्ट बड़ी आदरणीय है। पंजाब व हरियाणा में पाये जाते हैं।

पँवार—क्षत्रियों में भी पँवार हैं। कुछ ऐतिहासिक इन्हें अग्निकुल के राजपूत मानते हैं परन्तु यह मत भ्रमपूर्ण है। परमारों के शिलालेखों में उक्त वंश के मूल-पुरुष का नाम धूमराज मिलता है। धूम अर्थात् धुआँ अग्नि से उत्पन्न होता है; शायद इसी पर परमारों के मूलपुरुष का अग्निकुण्ड से निकलना और उसके अग्नि-वंशी कहलाने की कथा पीछे से प्रसिद्ध हो गयी हो तो आश्चर्य नहीं।[२०]

मालवे के परमार राजा मुंज (वाक्पतिराज, अमोघवर्ष) के समय अर्थात् वि० सं० १०२८ से १०५४ (ई० सन् ९७१ से ९९७) के आसपास होनेवाले उसके दरबार के पण्डित हलायुध ने 'पिंगलसूत्रवृत्ति' में मुंज को 'ब्रह्मक्षत्र' कुल का कहा है। ब्रह्मक्षत्र शब्द का प्रयोग प्राचीनकाल में उन राजवंशों के लिए होता रहा; जिनमें ब्रह्मत्व और क्षत्रत्व दोनों गुण विद्यमान हों या जिनके वंशज क्षत्रिय से ब्राह्मण हुए हों।...[२१]

पँवार, परमार, प्रमार एक ही नाम है।

जगदेव पँवार—रोहतक जिले में खरक, बोद कलंगा, मोनडू रिवाड़ी, फूलपुर, बागला आदि ३६ ग्राम हिन्दू पँवारों के हैं। जगदेव पँवार की परम्परा के जाटों में ककडीपुर, नाला, भारसी, भनेडा एलम, ओली माजरा, सवगा, दोघट आदि मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर जिले के ये गाँव प्रमुख हैं। महरौली दिल्ली के पास, मुरादाबाद में काँठ के पास रैनी पालनपुर, बिजनौर में मुगलवालाग्राम पँवार जाटों के हैं।

लोहकवच पँवार—भी अपनी गणना धारानगरी से आये हुए पँवारों में करते हैं। रोहतक, बुलन्दशहर, मेरठ मथुरा के ग्रामों में पाये जाते हैं।

भुल्लर—मानवंश की शाखास्वरूप इस वंश के व्यक्ति हेर वंश से भाईचारा मानते हैं। पारस्परिक वैवाहिक सम्बन्ध नहीं होते। इनका रूप-रंग, डीलडौल मान

२०. ओझाजीकृत 'राजपूताने का इतिहास', जि० १, पृष्ठ ७६।
२१. वही, पृष्ठ ७५-७६।

जाटों के साथ मिलता-जुलता है। ये पंजाब में बहुसंख्यक दृष्टि से बसे हुए हैं। वहाँ ये सब सिक्ख मतानुयायी हैं।

हेर—भुल्लरों को भ्रातृवत् माननेवाला यह दल हीर नाम पर भी प्रसिद्ध है। 'हीर स्याल' की प्रेमगाथा में 'हीर' वंश का नाम था। अम्बाला (हरयाणा) जिले की रोपड़ तहसील में इस वंश के जाट सिक्खों की बहुसंख्या है।

कटारिया—(कटार) कटारिया जाट रोहतक (हरयाणा) जिले में पाये जाते हैं। समचानाग्राम हरयाणा में ये हैं।

लाम्बा (लववंशी)—लव मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्रजी के यमजपुत्रों में कनिष्ठ थे। उनकी राजधानी श्रावस्ती थी। लव ने ही लवपुर (लाहौर) बसाया था। इन्हीं के नाम पर लाम्बा नामक जनपद की स्थापना हुई, जिसका राजा बृहद्बल था जो महाभारत युद्ध में अभिमन्यु द्वारा मारा गया था।

लव के नाम पर प्रचलित लाम्बा वंश का कुछ समुदाय पंजाब में व्यापारसंलग्न होने से खत्री कहलाने लगा किन्तु अधिकांश लाम्बा जाट ही हैं।

बीकानेर में राजगढ़ के पास, जयपुर में सीकर के पास गोठरा आदि ग्राम लाम्बा जाटों के हैं। रोहतक का धारौल, हिसार का दौलतपुर और अलखपुरा लाम्बा जाटों के प्रसिद्ध ग्राम हैं। मुजफ्फरनगर का कबीर नंगला, बिजनौर के बिसाठ रतनपुर, होमपुर, बाभड़पुर, शेरकोट, बदायूँ में नगला अगौल, सूनियाखेड़ा प्रभृति ग्राम लाम्बावंशियों के हैं।

श्री डी० एस० लाम्बा, भूतपूर्व न्यायाधीश, हरयाणा व पंजाब हाईकोर्ट इसी वंश के थे।

लोहरिया (लोहर)—कश्मीर इतिहास में यह प्रसिद्ध वंश है और समस्त वंश को लोहर वंश नाम दिया। वे भारत में लोहरीन में बसे। लोहरकोट-लोहरों का दुर्ग उनके नाम के बाद पड़ा। प्रसिद्ध रानी दिद्दा, क्षेमगुप्त से ब्याही गयी थी जो लोहर के नृप सिम्हा राजा की लड़की थी। वह काबुल के शाही बादशाह भीम लल्लीजाट की लड़की से ब्याहा गया था।

इस प्रकार दिद्दा लोहरिया जाट वंश की थी और काबुल के लल्लीजाट की पोती थी।

लोहरिया जाट मथुरा और दूसरे क्षेत्रों के छह ग्रामों में बसे हुए हैं। रोहतक में सुपाल, मेरठ में भैंसा और मनफोड़ा इस वंश के तीन ग्राम ही जाट लोहर

क्षत्रियों के हैं।

दलाल—ये लोग हरयाणा में ही जन्मे, बढ़े और बसे हैं। यहाँ के सिलौणी, छारा, मातन, माडोठी, आसौदा, जाखौदा, टाण्डाहेड़ी, मेहदीपुर, डाबौदा, चिड़ी, कसार, रिवाड़ी, खेड़ा, खरमान ग्राम गुहाना के पास रोहतक जिले में दलालों के हैं।

'दलाल' उपाधि बंगाल में कायस्थों की भी है पर इनसे कोई सम्बन्ध नहीं है।

बलहारा—कश्मीर में राजवदन बलहारा पुत्र श्री तेजा बलहारा को हम कल्हण की 'राजतरंगिणी' से जानते हैं। स्टेन का कथन है कि बलहारा एक परिवार वा वंशनाम है। यह समय ११२८-११४९ तक श्री जयसिंह का है।

राजवदन इवीषेक और अन्य जिलों के राजपाल थे।

इलियट और डॉसन 'हिस्ट्री आफ इण्डिया'...में बलहारों की वीरता का वर्णन करते हैं जिसके बादशाह भारत के सर्वश्रेष्ठ शासक कहलाये।[२२]

औलाख—ये पंजाब और पश्चिमी उत्तरप्रदेश में पाये जाते हैं।

बैन्स (बिन्स)—कनिंघम के मतानुसार हर्षवर्द्धन इसी कुल का था। ये श्रीमालपुर से सम्बन्धित हैं जो पंजाब में होशियारपुर व जालन्धर जिलों की सीमा पर एक ग्राम है और आजकल माहलपुर कहलाता है। आज भी यहाँ बैन्स जाट बसते हैं।

गुस्सर—इस वंश के बहुत कम लोग हैं। सांची विहार के सफर के पुत्र मका हैं और द्वितीय स्वामी सिंम्हाबाला गुस्सर।[२३] यह नितान्त सम्भव है कि गुस्सर गूजरों के लिए हैं।

गजवा—कुछ प्राचीन मुद्राएँ जयपुर, मालव क्षेत्र में 'गाजवा' का वर्णन करते हुए पायी गयी हैं। ये मुद्राएँ गजवा जाटों की हैं।

जूणा (जौण)—सम्भवतः ये अर्थशास्त्र में वर्णित प्ररजुन हैं। श्री वी० स्मिथ का कथन है कि २२६-२४९ ए० डी० में एक जूणा नृप सिरहिन्द में थे।

खरब (खरप)—इलाहाबाद स्तूप के शिलालेख में खरपरिका के नाम वर्णन किये गये हैं।

---

२२. 'History of India as told by its own Historians' (Elliot and Dowson), Vol. I, (London 1866-77).

२३. 'Archaeological Survey of India', Vol. X, p. 62 ff.

कुण्डू—जालन्धर राज्य त्रिगारटा के हिस्से की चर्चा कौण्डुपाराथ पाणिनि करते हैं। कुनिन्दा ही कुण्डू हैं। पंजाब के होशियारपुर जिले में तप्पामेव में अमोध भुटी (कुनिन्द का नृप) की मुद्राएँ पाई गयी हैं। पामीर पर कुण्डू नगर है।

माछर (माठर)—कनिष्क का मन्त्री माठरा कहलाता था। उनका नाम संस्कृत मत्स्य से हुआ था। माछरी अलवर के समीप उनके बाद नाम पड़ा है। मत्सर या माछर जाट बिजनौर के पुट्ठा तथा उमरपुर में और खेतड़ी सीकर के पास भी हैं। इस गणराज्य की ध्वजा का प्रतीक मत्स्य (मछली) था।

मान—इनकी मुद्राएँ गोआ, कोंकण क्षेत्रों में पायी गयी हैं। चन्द्रवंश की एक शाखा के रूप में इस वंश की सत्ता केवल जाटों में बहुत बड़ी संख्या में है। इनका आदिपुरुष सम्राट् शालीवाहन व भटिदेव की परम्परा में मान नाम का ही एक वीर व्यक्ति था जिसके दलाल, देशवाल और सीबाग नाम के तीन भाई और थे। इन चारों भ्राताओं के नाम से चार वंश चले। करनाल में ठिड नामक मान सरदार ने लादिया किले पर अधिकार करके सर्वप्रथम इस वंश को प्रसिद्धि दी थी। यह स्थान मुक्तेश्वर तहसील में है। इसने थेड़ा ककरसर बसाकर मानराज्य की नींव डालीं। पटियाला की स्थापना के समय ये मान लोग रड़ नामक ग्राम में जाकर बसे। यहाँ मानवंशी भागमल ने नौरंग मण्डी डबवाली, मोर साडरनी बसायी। इसके पोते ने राठी नामक दुर्ग पटियाला में बनवाया। फिरोजपुर की माड़ी दुर्ग कालूमान ने निर्माण कराया। यह गुरु हरराय का शिष्य बनकर प्रसिद्ध हुआ। करनाल के मानों में घोगड़ीपुर और वलाग्राम इसीलिए प्रसिद्ध हैं क्योंकि यहीं पर सर्वप्रथम मठान राजपूतों से युद्ध विजयी होकर मान लोग स्थिर हुए थे। भारतीय सेना और जाट जाति के इतिहास में मान सरदार ऊँचे-से-ऊँचे स्थान पर अधिष्ठित हैं। ये अधिकांश सिक्ख मतानुयायी हैं।

मंगट—श्री बी० एस० मंगट, डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल आफ पुलिस पंजाब इसी वंश के हैं।

मदेरना (मद्रा, माधन)—ये मद वा मध (माधन) मदेरना कहलाते हैं। कुरुक्षेत्र में हैं। इनके १२ ग्राम हैं। इनमें से बहुत-से मुसलमान हो गये हैं।

नूनिया (नून)—श्री एल० ए० वाडेल ने फोयनिशियन नृपों की एक उपाधि नून या नूना की चर्चा की है। 'राजतरंगिणी' में इन्हें 'लवण्य' जो नून

(नमक) का संस्कृत रूप है, कहा गया है। विशेषतया रोहतक से नून की चचा है।[२४] श्री सर फिरोज खाँ नून पाकिस्तान के भूतपूर्व मन्त्री, इसी वंश के हैं।

नेहरा (संघा)—इन दोनों वंशों की चर्चा सुन्धा पहाड़ (जोधपुर) चेचीगदेव चौहान के शिलालेख में है।[२५] मुदाना, याकूबपुर, मवई, औरंगाबाद, गराना, गावड़ी, गढी, कादराबाद आदि १२ ग्राम नेहरों के हैं जो दिल्ली से मेरठवाले मार्ग पर हैं। मोदीनगर की औद्योगिक बस्ती इन्हीं की भूमि पर आबाद है।

समरा—एक समय सिन्ध में यह वंश बस गया था। इनका वर्णन फरिश्ता ने किया है। उसने प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर कहा है कि समरों का राज्य सिन्ध में था, जिन्होंने इस्लाम मत को स्वीकार कर लिया। शेष समरों ने सिक्ख मत को मान लिया।

सरान्ह (सारांघा)—कश्मीर में सातवीं शताब्दी में मकरसिंह मन्त्री का नाम पाया जाता है जो सरान्ह थे। कहा जाता है कि इन्होंने कश्मीर में एक नगर का निर्माण किया।

सोलंकी (सोल्गी)—सोलंकी व चालुक्य एक ही हैं। कुछ लोग इनको अग्निकुल का मानते हैं जो भ्रमपूर्ण है। इस समय सोलंकी और बघेल (सोलंकियों की एक शाखा) अपने को अग्निवंशी बतलाते हैं और वशिष्ठ ऋषि के द्वारा आबू पर्वत के अग्निकुण्ड से अपने मूलपुरुष चुलुक्य (चालुक्य, चौलुक्य) का उत्पन्न होना मानते हैं, परन्तु सोलंकियों के वि० सं० ६३५ से १६०० (ई० स० ५७८-१५४३) तक के अनेक शिलालेखों, दानपत्रों तथा पुस्तकों में कहीं उनके अग्निवंशी होने की कथा का लेश भी नहीं पाया जाता। उनमें उनका **चन्द्रवंशी** और **पाण्डवों** की वंश परम्परा में होना लिखा है।[२६]

सोलंकी क्षत्रिय भी हैं और जाट भी हैं।

फर्रुखाबाद में तिर्वा, गुजरात में लूनावाड़ा, वीरपुरा, धराद, छालियर, उदयपुर में रूपनगर, भीलवाड़ा, जोधपुर में पीपलों, बूँदी राज्य में पंघारा आदि जागीरें

---

२४. श्री ए० स्टेन कृत 'Rajatarangini of Kalhana', Vol. IV, ii.

२५. 'Epigraphica Indica', Vol. IX, p. 74.

२६. ओझाजीकृत 'राजपूताने का इतिहास', जि० १, पृष्ठ २३९; तुलना करो—उन्हीं का ग्रन्थ 'सोलंकियों का प्राचीन इतिहास', प्रथम भाग, पृष्ठ ३-१४।

सोलंकियों की हैं। मालदेव सोलंकी से प्रचलित होनेवाली शाखा के क्षत्रिय भाले-सुलतान के नाम पर प्रसिद्ध हुए जो अर्द्ध-मुसलमान हैं। इनकी सबसे बड़ी संख्या बुलन्दशहर में है।

सिकरवार (सगरवार, सकरवार)—पुराणों में इन्हें 'सकरावाकास' कहा गया है। मथुरा में ये सगरवार कहलाते हैं।

विर्क (वृक)—पाणिनि ने इनकी चर्चा की है। संस्कृत में वृक का अर्थ भेड़िया है।

दाहिमा—दहिया के साथ इनका सम्बन्ध है और दाहिमा व दाहिया के वर्णन एक साथ हैं। राजस्थान में ये अधिकांश राजपूत हैं। मेरठ जिले के समीपवर्ती ग्रामों व खेकड़ा ग्राम में दाहिमा जाट हैं। ३६ राजकुलों में इनकी गणना है।

जोधपुर राज्य के गोठ मांगलोद ग्रामों के मध्य दधिमात देवी के मन्दिर के कारण समीपवर्ती प्रदेश दाहिमा के नाम पर प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ। वहाँ से बाहर आकर बसनेवाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, जाट, अहीर, गूजर सभी में दाहिमा वंश पाया जाता है।

मलिक (मालक)—गाथवाल भी मलिक उपाधि लगाते हैं। खत्रियों में भी मलिक हैं। गठवाला मलिक पाये जाते हैं। हरयाणे में करनाल की उग्राखेड़ी, रिसालू, निम्बली, कुटानी, बुवाना आदि ग्राम, हिसार में उमरासुलतान मलिकों के हैं।

मिर्धा—राजस्थान के जाट 'मिर्धा' कहलाते हैं।

यौधेय (जोहिया)—सार्वभौम सम्राट् ययाति के चतुर्थपुत्र का नाम अनु था। अनु का आठवाँ वंशधर सप्तदीपेश्वर चक्रवर्ती महामना नामक महाराजा हुआ। इनके उशीनर व तितिक्षु नामक दो पुत्र थे। उशीनर पंजाब की अधिकांश भूमि का शासक था। उनकी पाँच पत्नियाँ थीं। बड़ी रानी नृगा से नृग पुत्र हुआ। नृग के पुत्र का नाम यौधेय था। इससे ही वह वंश चला जो भाषा-भेद से जोहिया नाम पर प्रचलित हुआ। श्री कनिंघम ने भी तत्त्व विभाग के प्रतिवदेन के १४वें भाग में इस बात को स्वीकार किया है। बहावलपुर राज्य में आज भी जोहियावार प्रदेश विद्यमान है। इनकी प्राचीन मुद्राएँ लुधियाना के सुनेत स्थान से प्राप्त हुई हैं। रोहतक के सोनीपत किले में सतलज व यमुना के मध्यवर्ती कई भागों से यौधेयों के सिक्के प्राप्त हुए हैं जो कि भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं। इनपर "यौधेया

नाम अथवा यौधेयगणस्य जयः", लिखा रहता है। सम्पूर्ण क्षत्रियों में अपने यौधेय (युद्धप्रिय) नाम को चरितार्थ करने से इन्हें वीरता का अभिमान हो गया था। इन्होंने गुप्त, मौर्य, कुशान सम्राटों से भी टक्करें लीं।

आज भी इस वंश के जाट राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त होने पर पुनः स्वतंत्र अधिकारों के सम्मानसहित जोधपुर, बीकानेर रियासतों में तथा जालंधर में जड़िया, जोड़ा, बिनौला, आदि १२ ग्रामों में बसे हुए हैं। इस वंश की ढाका शाखा के भी अनेक ग्राम हैं जिनमें लोकप्रिय जनसेवक वीतराग कर्मयोगी स्वामी केशवानन्द जी एम. पी. अबोहर का ग्राम ढानी जयपुर राज्य में है। ढकौली, पटौली, औगरी सहदपुर मेरठ में, मिलक भानिपुर, छाचरी आदि जिले बिजनौर में सुप्रसिद्ध ग्राम हैं। इस वंश के प्रधान श्री सिब्बासिंह रईस ढकौली, अखिल भारतवर्षीय जाट क्षत्रिय महासभा के प्रधान भी रह चुके हैं।

शाल्व -शिलाहार-सालार—१८४३ ई. में बम्बई प्रान्त (वर्तमान महाराष्ट्र) के थाना जिले में कृष्णागिरि से प्राप्त शिलालेखा से प्रमाणित होता है कि थाना जिले पर ८०० ई. से १३०० ई० तक इस वंश का राज्य रहा। ये महामण्डलेश्वर क्षत्रिय शिखाचूड़ामणि कहलाते थे। मराठों के सुप्रसिद्ध ९६ कुलों में और राजस्थान के ऐतिहासिकों ने ३६ राजवंशों में इस वंश की गणना करते हुए चन्द्रवंशी यादवकुलीन लिखा है। ये शाल्व के स्थान पर सालार—सिलारकर भी भाषा-भेद से प्रसिद्ध हुए। वर्तमान क्षत्रियों में इस वंश का अधिकांश भाग जाटों में पाया जाता है जिनमें सहारनपुर का थितकी; बिजनौर के सुवाहेड़ी, बहोड़वाला, नयागाँव। हमीदपुर, जमालपुर आदि ग्राम प्रसिद्ध हैं। कहीं-कहीं शाल्व से सेल भी अपभ्रंश हुआ जिनमें बिजनौर जिले के सेह और हुसेनपुर ग्राम हैं।

दधीच या दहिया—टॉड ने ३६ राजकुलों में इनकी गणना करते हुए लिखा है—'सिकन्दर महान् से घोर युद्ध करनेवाले दाही लोग दाहिया ही हैं।' ये क्षत्रिय सिन्धु, सतलज के समीप रहते थे। एक शिलालेख जोधपुर के समीप किनसरिया ग्राम के वाम माता नामक मंदिर से प्राप्त हुआ है जिनमें दहिया वंश का प्रचलन दधीच ऋषि से बतलाते हुए इस वंश के राजाओं की गणना की है। 'मुहणोत नैणसी' ने अपनी ख्यात में दहियों का मूलस्थान गोदावरी के किनारे त्र्यम्बक के पास थालनेरगढ़, आजतर साचौर, वाली, पाली, मालानी लिखा है। उसके बाद हरसारे, मारोठ, पर्वतसर, देरावर, राज जोधपुर में, सावर घटिमाली अजमेर में,

दहिया वंशी क्षत्रिय बसे हुए हैं। जोधपुर राज्य में जालौर का दुर्ग भी इन्हीं दहियों ने बनवाया। सिरोही राज्य में कैर और अम्बाला के १२ ग्राम उन दहियों के हैं जो कि राजपूत दल में सम्मिलित हैं।

चालीस सम्पन्न ग्राम दहियावंशी जाटों के रोहतक की सोनीयत तहसील में हैं। ये सब दहियाराणा दहिया बादशाह कहलाते हैं। बरौना खेड़ा इन सबसे पुराना ग्राम है। यहीं से इस वंश का विस्तार हुआ। इस ग्राम से २४, खाण्डा ग्राम से १२, ससाना से ४ ग्राम बसे। इन तीन के अतिरिक्त प्रगतिशीलता के दृष्टिकोण से महाराज जसवन्तसिंह जोधपुरनरेश के परमसखा वीराग्रगण्य मजलिस सिंह का दहिया भटगाँव है जिनके पौत्र श्री रतनसिंह द्वारा बसाया हुआ रतनगढ़ प्रख्यात कीर्ति लोकनेता राणा टीकाराम बी० ए०, एल-एल० बी०, मंत्री पंजाब, सभापति अखिल भारतवर्षीय जाट महासभा का ग्राम मण्डौरा, गुरुकुल मटण्डु के यशस्वी संस्थापक चौधरी पीरुसिंह का ग्राम मटण्डु और संस्कृत भाषा के विद्वान् महात्मा निश्चलदास (दहियाजाट) की पवित्र भूमि का सिडौली, नारा-नारी हलालपुर, किढौली पहलादपुर, मडौरा, मण्डौरी, आदि ग्राम रोहतक जिले में सुप्रसिद्ध हैं। मेरठ, बिजनौर, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर व अम्बाला जिलों के ग्रामों में दहिया जाट हैं।

डबास—यह भी दहियों की शाखा है, आपस में भाईचारा है। दहियों के समीप से पृथक् इनकी कोई सत्ता नहीं। दिल्ली प्रान्त व सोनीपत जिले की सीमा पर कँझावला, सुलतानपुर, पूठ, बखाला, रसूलपुर, मदनपुर, लाड़पुर, चाँदपुर, रानीखेड़ा इस शाखा के प्रसिद्ध ग्राम हैं। बिजनौर, नगीना में भी पाये जाते हैं।

गोधारा—मेवाड़ के राजवंश से एक पंगु राजकुमार को मोहिलवंश-विनाशार्थ मरुभूमि (बीकानेर) में पं० रामदेव गौड़ गोद में ले आये थे। उसकी सन्तान परम्परा से ही गोदारा नाम प्रचलित हुआ किन्तु यह दल सम्पूर्णतया जाटों में हैं। बीकनेर राज्य की स्थापना काल से पूर्व ७०० ग्रामों में गोदारा रहते थे। इस वंश में ठा० माधवसिंह अपनी चारित्रक महानता के लिए प्रसिद्ध हुए। आपने अखिल भारतवर्षीय शुद्धि महासभा के महामंत्री पद पर रहकर अपने युग के कार्यकर्त्ताओं और आनेवाली युवक परम्परा के सामने एक प्रेरणादायक आदर्श स्थिर किया। आर्यसमाज की प्रत्येक प्रगति में इनका प्रमुख भाग रहा।

जंघारा—भाटों से युद्ध हारनेवाले दल का नाम जंघारा लिखा है परन्तु

महाभारतकालीन तालजंघ के अरि अर्थात् दमन करनेवाले क्षत्रियों का समूह जंघारा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस समुदाय के मेरठ में कौल, बिजनौर में तगरौला, रतनपुर, नगला, किरतपुर आदि ग्राम हैं। इस वंश के मेरठ में सर्वाधिक सुप्रसिद्ध पुरुष अमृतपाणि स्वर्गीय डॉ० भूपालसिंह किरनपुरबासी माने गये जो उत्तर प्रदेश के ख्याति-प्राप्त सफल चिकित्सक एवं सर्जन हुए।

सुकरचकिया-शशि—इस नाम की एक मिसल सिक्खों में भारी प्रभावशाली सिद्ध हुई थी। इस मिसल का प्रारम्भ सुकरचक ग्राम के शसि-सासि चन्द्रवंशी जाटों ने किया। जाटों में इस वंश की बहुत मान्यता है।

सिनसिनवार—यदुवंश में महाराज वृज की ६४वीं पीढ़ी में महाराज विजयपाल हुए। व्याना में इन्होंने राजधानी बनायी। महमूद गजनवी के भानजे सालार महमूद ग़ाजी से युद्ध में हार गये और स्वर्गीय हुए। इनके पुत्र तिहनपाल ने व्याना से बाहर भ्रमण करते हुए शक्ति संचित करके करौली नामक नगर की नींव रक्खी। उनके एक पुत्र ने करौली का राज्य सँभाला। सहजपाल क्रोध कर करौली छोड़-कर चले आये और बिछोर बसाकर राज्य करने लगे। इनके नाम पर **छोंकर वंश** भी प्रचलित हुआ जिनके वंशधर सर इन्द्रसिंह के पुत्र स० बलदेव सिंह, रक्षामन्त्री भारत सरकार रहे।

राणा—सिसौर ग्राम के मूल पुरुष कर्णसिंह से ही रावल व राणा उपाधियों का प्रचलन इतिहासकार मानते हैं। उदयपुर राजघराने के लिए ही नहीं अपितु पंवार वंश के आबूनरेश को रावल व राणा कहा जाता है। जाट क्षत्रियों में कराणा, आदराणा, तातराणा, जटराणा, शिवराणा आदि कई वंश अपनी राणा उपाधि पर गर्व करते हैं। उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में दाहा निरपुड़ा, गहनपुरा, भड़ल और अलीगढ़ में भगवानपुर, खेड़ा, नन्द का नंगला, गज्जू का नंगला, पचह नंगला और बनारसी नंगला राणा वंश के ही ग्राम हैं।

लोहान—चच्चनामा के लेखानुसार लुहाना वह दल है जो मेड़ों की तरह सिंध में जाटों के कट्टर शत्रु व ब्राह्मण राज्य के परम भक्त थे। आगे चलकर इनकी कुछ संख्या जाटों में मिल गई। इनके सिंध में दो दल थे—एक योद्धा और दूसरे व्यापारी। योद्धा क्षत्रिय जाट लोहाना कहलाते हैं। व्यापारी लुहानों का कच्छ, काठियावाड़ और बम्बई के व्यापार में प्रमुख स्थान है जो अपने को क्षत्रिय कहते हैं। इनमें विधवा विवाह भी होता है। इनमें ठक्करवापा व शूरजी बल्लभदास

भारत-विख्यात हैं। लुहाना गोत्र के जाट जिला हिसार के नारनौद, भेनी, अमीर-पुर, खांडा खेड़ी ग्राम में पाये जाते हैं। दश सहस्र की जनसंख्या के इस नारनौद ग्राम में छह सहस्र लुहाना जाट हैं। नारनौद के विद्याभास्कर प्रो० रणजीतसिंह शास्त्री, प्रभाकर, एम०ए०, एम० ओ० एल०, बी० टी०, प्राध्यापक जाट कालेज, रोहतक के पिता चौ० चन्दनसिंह विशेष प्रसिद्ध पुरुष हुए हैं। उत्तर प्रदेश में सहारनपुर जिले में मंगलौर के पास लिब्बरहेड़ी ही इन लुहाना जाटों का एक-मात्र ग्राम है।

वाना—चन्द्रवंश की इस शाखा का चलना सुप्रसिद्ध नरेश वाणासुर से हुआ। व्याना राज्य भरतपुर इस वंश के क्षत्रियों की राजधानी थी। यहाँ की राजकुमारी ऊषा का विवाह अनिरुद्ध से हुआ था। ऊषा का स्मृतिमंदिर व्याना में आज भी बना हुआ है। अजमेर के समीप व्यावर में, भदानार, कड़ियार, खाण्डा बीकानेर में, गिरिधरपुर, चित्तौली, चंदौड़ी जिला मेरठ में इनके प्रसिद्ध ग्राम है।

'वानेया' शब्द वाणासुर के सहायकों के लिए व्यवहृत होता है।[२७]

भदौरिया—भदावर के प्रदेश का शासक क्षत्रिय समुदाय भादू, भदौरिया, भधोतिया नाम पर प्रसिद्ध हुआ। ये दल सपेऊ सादाबाद के मध्य ८ बड़े खेड़ों और बहुत-से नगलों में मथुरा जिले में बसता है। भादू नाम से प्रसिद्ध जाटों के बीकानेर राज्य में बहुत-से ग्राम हैं।

हेन्गा (हेंग)—मार्कण्डेय पुराण ५८।५२ के अनुसार 'हिंगा' का अर्थ 'वाहलिका' है। सम्राट् कनिष्क का सेनापति हंगामस स्वयं हिंगनू जाति का था किन्तु जब वह कुशान शक्ति की ओर से मथुरा में क्षत्रप (गवर्नर) रहा तो उसके वंशधरों ने उसी के नाम से अपना परिचय देना प्रारम्भ किया। मथुरा जिले में निग्रावा से २४, कुरुसुण्डा से २२, बिसावर से १२, तरसीगा से १२, अरौठा से ५ ग्राम और २४ खेड़े बसे।

सलकलान—तँवर वंश की सुप्रसिद्ध शाखारूप से प्रसिद्ध इस समुदाय का आदिपुरुष सलकपाल माना जाता है जो अनंगपाल तँवर की ओर से गुरड़ जिला रोहतक की अपनी जागीर में रहता था। गुरड़ से समचाना रहने के बाद सलकपाल तँवर की सन्तान परम्परा ने सामूहिक रूप से यमुना पार की। मेरठ जिले में इस

---

२७. श्री मोनियरविलियमकृत 'संस्कृत-इंगलिश डिक्शनरी' १९६०।

वंश से अधिक संख्या किसी भी वंश की नहीं। बड़ौत में चलनेवाले दो जाट कालेजों के अतिरिक्त ग्राम-ग्राम में हाई स्कूलों का आयोजन और दिल्ली व मेरठ के कालेजों में सलकवान युवकों की विशेष संख्या यह प्रकट करती है कि इस वंश के उच्चाभिलाषी सुयोग्य नवयुवक जाट जाति को सदा गौरवान्वित करते रहेंगे।

वावली ग्राम जनसंख्या के कारण प्रान्त में सबसे बड़ा ग्राम माना जाता है।

चहल (चाहल, चाहर)—चोल नामक राज्य वंश का स्मारक है जिसका शासन दक्षिण में था। आगरा जिले में इस वंश के जाटों के २४ ग्राम हैं जो चाहरवाटी के नाम से सब एक ही स्थान पर बसे हुए हैं। इन्हें मुगलों की ओर से **फौजदार** की उपाधि प्राप्त है। बीकानेर राज्य में सीऊ, सिवाऊ, सिखाली, तोपनी प्रसिद्ध ग्राम हैं। पहाड़ीधीरज दिल्ली में चौधरी हरफूलसिंहजी का घराना भी चाहर ही है, 'हरफूल बस्ती' इन्हीं के नाम पर आबाद है।

चट्ठा—सिकन्दर के समय झंग मघियाना, मुलतान, गुजरात का शासन चट्ठा जाटों के ही अधीन था। इन्होंने विशेषतया इस्लाम को स्वीकार कर लिया। ढाना व सौल्दा उत्तर प्रदेश व हरयाणा में अपनी अतिथि भक्ति के लिए इन्हें प्रसिद्धि प्राप्त है।

उत्पल—महावीर हरिसिंह नलवा इसी वंश के महापुरुष थे। उत्पल जाटों ने बीकानेर के पास बड़ी खाटू के समीप पिलाना ग्राम बसाया। उस ग्राम के बाद अन्य स्थानों पर बसनेवाले जाटों ने अपना परिचय पिलानिया से उसी प्रकार देना प्रारम्भ कर दिया जिस प्रकार तिब्बत ग्राम के शिवियों ने तेवतिया, भटौनावालों ने भटौनिया के नाम पर अपनी प्रसिद्धि करायी।

उत्पल जाटों की सिक्खों में बहुसंख्या है।

ग्रेवाल (ग्रहवार, ग्रहवाल, गहरवार)—ऐतिहासिक इन्हें चन्द्रवंशी मानते हैं। राजस्थान में इस वंश को गढ़वाल, पंजाब में ग्रेवाल के नाम पर प्रसिद्धि प्राप्त है। जाटों में ग्रहवाल लुधियाना जिले के नारंगवाल, परांवाल, कुलावास, धीके नामक बड़े-बड़े ५२ ग्राम बसे हुए हैं। रामराज नगरी (मेरठ) जैसे अनेक विशाल फार्म ग्रेवालों के हैं।

गुहिलावत—गुहिलवंश से सम्बन्धित जाटों में गुहिलावत वंश के व्यक्ति ब्राह्मणों का विरोध करते हुए मुण्डतोड़ के नाम पर प्रसिद्ध हुए। इनके मितराऊ, फरमाना, गुहाना, माजरा आदि समृद्ध ग्राम हैं। भरतपुर राजघराने से वैवाहिक

सम्बन्धों के कारण मितराऊ व शिक्षा में प्रगतिशीलता से नागलोई प्रसिद्धि प्राप्त ग्राम हैं।

फौगाट—सम्राट् पृथ्वीराज चौहान के लघु पुत्र विल्हणजी से इस वंश का प्रचलन इस आधार पर मानते हैं चूँकि वे फौगाट ग्राम को रोहतक से दक्षिण में १६ कोस पर बसाकर सपरिवार रहने लगे थे। मुरसान, हिसार में हरिता, रोहतक के भालौठ ग्राम इनके ही हैं।

नरवाल—नरवाल या नौवार से भाषा-भेद होकर प्रचलित यह नरवाल वंश राजपूतों में चौहानों की शाखा माना जाता है। मथुरा, हसनपुर, बरौठ, मेरठ में बढ़ल, तातारपुर, बहादुरपुर, बिजनौर में कुम्दैड़ा, रोहतक में रडाना, कथूरा इनके प्रसिद्ध ग्राम हैं। शामली के यशस्वी रावबहादुर चौधरी श्रीमामराज सिंहजी पश्चिमोत्तर प्रदेश के प्रख्यात सुधारक के नाम पर प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं। महर्षि दयानन्दजी कृत पत्र-व्यवहार का संग्रह करने का श्रेय आपको ही है जो पं० भगवद्दतजी बी० ए० द्वारा सम्पादित "ऋषि दयानन्द के पत्र व विज्ञापन" नाम से रामलाल कपूर ट्रस्ट, लाहौर ने प्रकाशित किया था।

आन्तल—जनश्रुति के अनुसार एक युद्ध में तँवर वंशी जाटों के दल ने शत्रुओं की आँतें निकाल ली थीं वे आन्तल तँवर के नाम पर प्रसिद्ध हुए। सोनीपत जिला (हरयाणा) के २४ ग्राम आन्तल जाटों के हैं। बिजनौर में नूरपुर, मुड़िया का परिवार आन्तल जाटों का ही है।

धनकड़ या धनोए—इस वंश के जाट अपना विकास धारण या धारीवाल वंश की शाखा रूप से मानते हैं। रोहतक में करौथा, छुट्टानी, शिमली, कासमी, गोला ४० घर, झज्जर में २० घर हैं। भरतपुर में बड़कौली, मेरठ में बिहारी, बिजनौर में फतेहपुर, मंगोलपुर आदि ग्राम हैं। रोहतक के ढाकला ग्राम के चौ० बदलूराम को प्रथम विश्वयुद्ध में सर्वोच्च वीरता के लिए 'विक्टोरिया क्रास' मिला था।

परम सन्त स्वामी गरीबदास महाराज इस वंश के प्रख्यात कीर्ति सन्तपुरुष हैं जो रोहतक के छुडानीधाम के चौधरी कलीराम धनकड़ जाट के पुत्र थे।

गरीबदासी सम्प्रदाय आज भी प्रसिद्ध है।

डीगराणा (डागुर)—यदुवंश में जाड़ेचा व यदुभान नामक दो भाई थे। इनमें जाड़ेचा ने काठियावाड़ में अपने राज्य वैभव को स्वीकार किया। आज वहाँ भुज, जामनगर हौल, राजकोट, गोण्डिल, मोरवी आदि राजपूत राज्य जाड़ेचा को

ही अपना पूर्वज मानते हैं। दूसरे भाई यदुभान ने हिमालय की पर्वत-मालाओं में अपना आधिपत्य स्थिर किया। पर्वत को भाषाभेद से डोग भी कहा जाता है। आपकी अधिकृत पर्वत -श्रेणियों को यदु की डांग नाम पर प्रसिद्धि प्राप्त हुई तब आपकी परम्परा के जाट क्षत्रिय डागा, डागुर एवं डीगराणा के नाम पर प्रख्यात हुए।

देहली, शाहदरा के समीप निस्तौली, जलालपुर, ढिढार, सिकंड़ा, गाजियाबाद के पास चिपियाना, पलवल के निकट धतीर, हरयाणा में मलकपुर, बागड़ूढासा, झाड़ौदा तथा हिण्डौन के समीप राज्य जयपुर में खरैटा शेकपुर आदि २४ ग्रामों की बस्तियाँ डागुर जाटों की हैं। उनके वैवाहिक सम्बन्ध भरतपुर राज्य परिवार के साथ होते हैं। बुलन्दशहर में खालौर, खदाना, बढपुरा के जाटों की प्रसिद्धि डीगरी नाम पर हुई।

श्री पी० सी० बागची विश्वास करते हैं कि डोगर व तुखर एक ही हैं।[२८] ओरछा-टीकमगढ़ का राजघराना डीगोरा कहलाता था।

नव (नौवर)—चन्द्रवंशी सम्राट् उशीनर की नवा नामक पत्नी से नव नामक पुत्र हुआ जिसने अपने नाम से एक जनपद भी स्थापित किया। उनकी वंश परम्परा का नाम 'नव' प्रचलित हुआ। बुलन्दशहर में भट्टापारसोल एक ग्राम, गुड़गाँवा जिले में दो ग्राम, आगरा में ९८ ग्राम और मथुरा ग्राम की नूह तहसील के समीप ९८ ग्राम इस वंश की विशाल जनसंख्या का परिचय देते हैं।

ये विधवा विवाह नहीं करते और बैलों को बधिया नहीं करते। यमुनापार के ८४ ग्रामों के रावत जाटों को विधवा विवाह व बैलों को बधिया करते देखकर स्वयं को जाट भी कहने में संकोच अनुभव करने लगे थे।

गुलैय्या-तातराना—गौर वंश की शाखा भेद गौरैय्या या गौलैया जाट जिला रोहतक के बादली आदि २४ ग्रामों में रहते हैं, जिन्होंने देर तक बौद्धमत का पालन किया। बादली से ही गये हुए तातराम नामक महापुरुष ने बिजनौर के प्रसिद्ध ग्राम झालू में वंश-विस्तार किया। वहाँ तातराना नाम से उसकी परम्परा प्रसिद्ध हुई।

चापोत्कट (चावुक, चावड़ा)—भट्ट ग्रन्थों में इन्हें भी तँवरों की शाखा माना

---

२८. 'Indian History Congress, 1943', p. 36.

है। राजस्थानी चापोत्कट अपने को अर्जुनायन-पुण्डेर भी कहते हैं। इनका मूल-स्थान भीनमाल जोधपुर राज्य है। इस वंश के अलीगढ़ जिले में पिसावा, डेटा आदि १२ ग्राम हैं। पिसावा के समीप ही एक ग्राम जलालपुर है।

कला (कालीधामन, कालखण्डे)—श्रीकृष्णचन्द्र महाराज द्वारा कालीय नाग का दमन उस वंश के उद्दण्ड पुरुषों का ही दमन था। इसका दुर्ग मथुरा के समीप ही ध्वंसावशिष्ट है। इस वंश को भाषा-स्थान-भेद से काली रावण, काली रावत, कालो भी कहते हैं। गोवर्द्धन (मथुरा) के पास हकीमपुर आदि २० ग्राम, बुलन्दशहर में अलारहीमपुर, संगा, रैला, मेरठ में खेड़ी, मनियारान, रोहतक में जसराना, डरमुहाना, वहावड़, अहेरी, आदि दस गाँव, हिसार में सिसाया, बलया, कालववंशी जाटों के हैं।

पौनिया—ये पूनिया सर्प की भाँति बहुत तेज और फुर्तीले होते हैं। राठौड़ राज्य के पूर्व बीकानेर की प्राचीन भूमि पर ३०० ग्रामों के शासक पौनिया जाट झासल व लुद्धि इनकी राजधानी थी। गोधरा जाटों के राठौड़ों से मिल जाने पर ये राठौड़ों से पराजित हो गये। जालन्धर में पौनियाखुर्द, अहवाल, फराला आदि गाँव पौनिया सिक्ख जाटों के हैं। अम्बाला में नूरपुर, हिसार में लाडवा, पटियाला में भी अनेक ग्रामों के पौनिया जाट सिक्ख मतानुयायी हैं।

भरंगुर—भारशिव नागवंश का इतिहास स्पष्ट होने से इन जाटों का नाग-वंशी होना प्रमाणित हुआ है। पंजाब में ये भंगु भी कहलाते हैं। जालन्धर जिले में मौरों के अतिरिक्त पगल लगेरी, आवारा कला व खुर्द, चूहड़, माजरा आदि ग्राम हैं।

कलकल—बुन्देलखण्ड में इनका राज्य था। ये भारशिव नागों में से माने जाते हैं। यादनगर जिला मेरठ में एक अच्छी रियासत है। यहाँ के जाट किलकिल शब्द के स्थान पर कलकल कहते हैं।

जनवार—मुहणोत नैणसी के लेखानुसार ये ३६ राजवंशों में गिने जाते हैं। इस वंश के राजपूत जनवार कहलाते हैं। इनका बड़ा राज्य बलरामपुर था। मझौली कालाकाँकर रायबरेली में है। इन राज्यों की जनसंख्या में भी जनवारों की बड़ी संख्या है।

सारन—यादव भट्टीवंश के राव सारन से प्रचलित इस वंश की राजधानी भटिंग में थी। कैजर, फौक, बूचावास, सवाई, बदीना, सरसेला नामक नगरों में

सुशोभित ३६० ग्राम बसे हुए हैं। सारन उस सुन्दर भूमि पर प्रजातंत्री शासन करते थे जहाँ आजकल बीकानेर व हिसार जिला है।

वाटधान—इस नाम से एक वंश का प्रचलन हुआ जो सभी सिक्ख (शिष्य) मतानुयायी हैं।

मीठा—शत्रु के लिए मीठा (तेलिया) नामक भयंकर विषके तुल्य तीव्र घातक होने के कारण इस नागवंशी समूह का नाम **मीठा** प्रसिद्ध हुआ।

प्रयाग में एक प्रसिद्ध जाट परिवार मीठा वंश का है। मीठा वंशी जाटों की विशेष संख्या मुसलमान जाटों में है जो आज कोहाट, बन्नू (पाकिस्तान) में बसे हुए हैं।

भराईच—चीनी यात्री ह्वेन च्यांग जब भारत आया तब भराईच जाट पश्चिमोत्तर पंजाब के बौद्ध शासक थे। इन्हें गक्खरों, गुर्जरों व जन्जूहों से टक्कर लेनी पड़ी किन्तु पहाड़ के दामन व इठार के क्षेत्रों में चनाव नदी के दक्षिण किनारे तक भाराईच जाटों ने उपजाऊ भूमि अपने अधिकार में कर ली। वहाँ आज भी ३५० ग्राम इस वंश के जाटों के बसे हुए हैं जो सबके सब मुसलमान हैं।

हाड़ा—क्षत्रियों में भी हैं। अजमेर के चौहानों में कोई हाडा राव नामक वीर व्यक्ति हुए हैं। 'मिश्रबन्धु' व पं० विश्वेश्वरनाथ रेडा के लेखानुसार इन्हीं हाडाराज से हाड़ावंश का चलन हुआ।

रोहतक में इस वंश के जाट २८० ग्रामों में हैं।

भाटों के ग्रन्थों में लिखा है कि ये विधवा विवाह करने के कारण जाटों में रहे, जो नहीं करते वे राजपूत हैं।

डोंगी—राजस्थान में जाटों को डाँगी कहा जाता है।

मिस्लों का इतिहास

सिक्खों की बारह मिस्लों में आठ मिसलें जाटों द्वारा संस्थापित हुई थीं।

भंगी मिसल—इस मिसल के मनुष्य 'भंग' का विशेष व्यवहार करते थे इसलिए ही उन्हें **भंगड़ी** वा भंगी नाम से लोग सम्बोधित करते थे।

मिसल रामगढ़िया—इनका अधिकार अहलुवालिया व उलेवालियाँ मिसलों के मध्य के प्रदेश पर था। ये तरखान (बढ़ई, सूत्रधार, विश्वकर्मा ब्राह्मण] जाति के बताये जाते हैं।

कन्हैया मिसल—लाहौर से १५ मील की दूरी पर कान्हा ग्राम में खुशाल सिंह नामक एक जाट चौधरी निवास करता था, जो बड़ा सीधा और सरल प्रकृति का था। उसके पुत्र का नाम जयसिंह था। उसने सिक्ख मत की दीक्षा कपूरसिंहजी फैजलपुरिया से ली थी। वह अमरसिंह नाम के डाकू के साथ मिलकर छापा मारने लगा। सहस्रों व्यक्ति उसके दल में सम्मिलित हो गये। यह कान्हाग्राम का रहनेवाला था, इसलिए इस मिसल का नाम **कन्हैया मिसल** हुआ।

नकिया मिसल—इस मिसल का संस्थापक जाट चौधरी हेमराज का पुत्र हीरासिंह था। यह मौजा भरवाल के रहनेवाले थे। रावी नदी के किनारे लाहौर से पश्चिम की ओर नक्का नामक क्षेत्र में रहने के कारण इनकी मिसल का नाम **नकिया** मिसल पड़ा। गोत्र इनका सिन्धु था।

निशानवालिया मिसल—इस मिसल के संस्थापक दो बहादुर जाट—संगतसिंह व महोरसिंह थे जो सतलज नदी के समीपवर्ती प्रदेशों में दश सहस्र सवार एकत्रित करके जाट राज्य संस्थापन का प्रयत्न करने लगे। ये लोग छापा मारते थे। ये लोग अपनी फौज के साथ चिह्न रखते थे इसलिए इनकी फौज का नाम **निशानवालिया** पड़ा।

करोड़सिंह मिसल—इस मिसल का संस्थापक पंजगढ़ नामक स्थान का रहनेवाला तरुण करोड़ीसिंह था। इसका दूसरा नाम **पंजगढ़िया मिसल** भी था।

फुलकियाँ मिसल—इस मिसल की अब तक पंजाब में पटियाला, नाभा-जैसी प्रसिद्ध रियासतें हैं। भट्टी जाट फूलसिंह द्वारा संस्थापित होने के कारण यह मिसल फुलकियाँ मिसल कहलाती हैं।

फैजलपुरिया मिसल या सिंहपुरिया मिसल—अमृतसर के समीप द्वाबा जालन्धर में फैजुलपुर एक ग्राम है। यहाँ के जाट सरदार कपूरसिंह ने इस मिसल को स्थापित किया।

सुकरचकिया मिसल—महाराज रणजीतसिंह जाट जाति के भास्कर थे। उन्हें महाराजा के उच्च पद पर प्रतिष्ठित कराने में इस सुकरचकिया मिसल के जाट सरदारों का ही हाथ था।

जाटों की उपाधियाँ

सिंह—सिक्खों में सभी जाति के लोग अपने नाम के अन्त में 'सिंह' लगाते हैं। पहले क्षत्रियों में 'सिंहान्त' नाम का प्रचार नहीं था। प्रसिद्ध शाक्यवंशी (सूर्य वंशान्तर्गत) राजा शुद्धोदन के पुत्र सिद्धार्थ (गौतम बुद्धदेव) के नाम के अनेक पर्यायों में एक 'शाक्यसिंह' (अमरकोष, स्वर्गवर्ग, श्लोक १५) भी मिलता है। शक जाति के क्षत्रपवंशी महाप्रतापी राजा रुद्रदामा के दूसरे पुत्र रुद्रसिंह के नाम में भी मिलता है। रुद्रदामा के पीछे उसका ज्येष्ठ पुत्र दामघ्सद और उसका छोटा भाई वही रुद्रसिंह क्षत्रप-राज्य का स्वामी हुआ। यही सिंहान्त नाम का प्रथम उदाहरण है। मारवाड़ के राठौड़ों में, विशेषकर वि० सं० की १७वीं शताब्दी में, रायसिंह से इस शैली के नामों का प्रचार हुआ। कछवाहों (कुशवाहों) में पहले पहल वि० सं० की १२वीं शताब्दी में नरवरवालों ने इस शैली को अपनाया और वि० सं० ११०७ (ई० स० ११२०) के शिलालेख में गगनसिंह, शरद्सिंह और वीरसिंह के नाम मिलते हैं (टॉड राजस्थान, प्रथम खण्ड, पृष्ठ ३७५)।.....[1]

हिन्दी शब्दकोषों में वीरता या श्रेष्ठतावाचक शब्द दिया हुआ है।

प्रधान—कायस्थों में भी 'प्रधान' उपाधि पायी जाती है।

प्रधान—(वि०) [प्र√धा+युच् वा ल्युट्] मुख्य, महामात्र, प्रधान सचिव, सेनापति।

मुरादाबाद, बिजनौर में १२ ग्रामों के चौधरियों को छोड़कर सभी जाट 'प्रधान' कहलाते हैं। मुजफ्फरनगर का पूर्वी भाग (भोकरहेड़ी को छोड़कर), मेरठ में मवाना की सारी तहसील, दौराले के हलावत, छपरौली के खोकन, टीकरी (मेरठ) के राठियों के चौगांवा ग्रामों के जाट प्रधान उपाधि से सम्बोधित किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त जाटों में प्रधान उपाधि का कहीं प्रचलन नहीं है।

ठाकुर—ठाकुर का संस्कृत शब्द 'ठक्कुर' है। इसका अर्थ है—"पूज्य व्यक्ति, किसी प्रदेश का अधिपति, नायक, सरदार, जमींदार, मालिक, क्षत्रियों की उपाधि।'

बंगाल में ब्राह्मणों की उपाधि ठाकुर (टैगोर) है। बिहार प्रान्त में भूमिहार

१. 'ओझाजी कृत "राजपूताने का इतिहास', जिल्द १, पृष्ठ ३५७-३५८।

ब्राह्मण, लोहार (विश्वकर्मा ब्राह्मण), नाई भी अपने नाम के अन्त में 'ठाकुर' लगाते हैं। वहाँ क्षत्रिय अपने नाम के अन्त में नहीं लगाते हैं। उत्तर प्रदेश में अपने नाम के पूर्व क्षत्रिय लोग 'ठाकुर' लगाते हैं। राजस्थान, आगरा, बरेली में भी क्षत्रिय ठाकुर कहलाते हैं। बुलन्दशहर के कुछ वंश, मथुरा, आगरा, अलीगढ़, भरतपुर, धौलपुर के राणा, सिकरवार, गोधे, ठेनवा, रावत वंश के जाट 'ठाकुर' कहलाते हैं।

चौधरी—संस्कृत शब्द 'चक्रम्+धर' से बना है। किसी समाज का मुखिया, प्रधान। बिहार प्रान्त में मैथिल ब्राह्मण, भूमिहार ब्राह्मण, पासी (हरिजन) 'चौधरी' उपाधि लगाते हैं। उत्तर प्रदेश में अहीर, जाट, चर्मकार, कुर्मी लगाते हैं।

भरतपुर के राजपरिवार के सम्बन्धियों, मथुरा के नौवार, मेरठ व अम्बाला के सभी जाटों को चौधरी कहलाने में गौरव अनुभव होता है।

पंजाब में मुसलमान व हिन्दुओं में चौधरी कहते ही जाट का बोध होता है।

सरदार—गुरु गोविन्दसिंह ने प्रत्येक सिक्ख बननेवाले को 'सरदार' की उपाधि प्रदान की थी। पंजाब के देहातों में जाटों के ही राज्य एवं जमींदारियाँ अधिक होने से रामदासिए (हरिजन), मजहबी सिक्ख (भंगी) के भी सिक्ख होने से सरदार उपाधि से जाट ही पुकारे जाते हैं।

मिर्धा—शब्द नागौर राज्य जोधपुर के राजवंशी जाटों को डाक विभाग के अधिकारी होने के नाते प्राप्त है। इस वंश की यह उपाधि राव जोधाजी ने दी थी। इस राज्य में जाटों में मिर्धा ही सर्वाधिक शिक्षित हैं।

पटेल—पटेल उपाधि दक्षिण की ओर मरहठों की ओर से पट्टीदार जमींदारों को दी थी। गुजरात में गूजर, कोली (कोरी, तन्तुवाय), कुनवी, काछी (कछवाहा), मध्य प्रदेश में पटेल उपाधि का व्यवहार करते है। उदयपुर, मेरवाड़ा, खानदेश, बरार, इन्दौर, भोपाल, मन्दसौर, ग्वालियर के जाटों को पटेल उपाधि से सम्बोधित किया जाता है। 'पटेल' शब्द को बिगाड़कर कुछ दक्षिणी 'पाटिल' भी लिखने लगे हैं जो अशुद्ध है।

धारा नगराधिपति सुप्रसिद्ध भोज राजा के संवत् १०७८ के लिखे दानपत्र में 'पट्टकिल' शब्द आया है और इस शब्द पर 'प्राचीन लेखमाला' नामक पुस्तक में टिप्पणीरूप में यह लिखा है—"अधुना एषां पटैल इति नाम्ना व्यवहारः"= आजकल यह 'पटैल' नाम से व्यवहार होता है। इसलिए यह निश्चित हुआ कि

पटेल शब्द 'पट्टकिल' का अपभ्रंश है।

विदेशों में जाट-साम्राज्य

'जाटों' ने भारत से बाहर जाकर अपने साम्राज्य स्थापित किये। यह इनकी वीरता का द्योतक है।

'विदेशों में जाट-उपनिवेशों' के सम्बन्ध में हेरोडोटस, इलियट, कनिंघम, स्ट्राबो, डिगायन, तिरमिजी अबावुल इम्साल, तारीखे तबरी, एड्डा आदि लेखक व पुस्तकें हैं।

श्री कनिंघम की 'सिक्ख इतिहास' की 'पाद-टिप्पणी' पढ़ने से स्पष्ट पता लगता है कि "जाट लोग भारत में जट, जिट या जाट, चीन में इड, इचि (यूची) तथा यूनान में गिट, जेटा और गाथ नाम के नाम से थे।"

यह केवल भाषा-भेद है।

ईरान (फारस)—भारत के बाद ईरान में जाट पाये जाते हैं। यदि वे ईरान के आदिम निवासी होते तो उनका नाम संस्कृत 'जाट' न होकर पारसी भाषा का कोई शब्द होता और उनके नाम से ईरान में 'जाटाली प्रान्त' एक अलग प्रान्त न होता जो कि जाटलिम का अपभ्रंश है। ईरान का प्राचीन इतिहास भी यह नहीं बतलाता कि भारत के जाट ईरान से गये हुए हैं। सिकन्दर के आक्रमण से कई सौ वर्ष पश्चात् ईसाई तथा मुस्लिम संघर्षों से वे ईरान की ओर से भारतवर्ष को लौटे जो भाटी, पच्छादे व ढे नामों से प्रसिद्ध हैं। उनकी आदि बस्ती भारत ही है। भूगोल समिति के समाचार पत्र के सम्पादकगण ने जाटों को लिखा है—"पुराने और आदिम संस्कृत शब्द 'जियेसता' से जाट शब्द बना है और इससे यह आदिम अधिवासी जान पड़ते हैं।"[१]

अफगानिस्तान—यह देश तो अति प्राचीनकाल से भारत में सम्मिलित था। महाभारत में भी यह भारत के अन्तर्गत ही समझा गया है। गान्धार उस समय तक जाटों के अधिकार में रहा है जब तक इस्लाम का आक्रमण भारत पर नहीं हुआ। उस आक्रमण के बाद ही धर्मप्रिय जाटों ने भारत की ओर मुख मोड़ दिया।

---

१. Editor of the Journal of the 'Geographical Society', XIV, 207 Note.

श्री क्रुक लिखते हैं—"कुछ जाटों ने हमें अपना आना गढ़गजनी से बताया है।"

यादव लोगों ने गजनी को आबाद किया था और पुनः शालवाहन के समय में भारत वापस आ गये थे। इनमें से कुछ पौराणिक धर्म में दीक्षित होकर राजपूत हो गये। शेष ने भटनेर भटिंडा व पंजाब में जाट राज्य स्थापित किये। अफगानिस्तान के पश्चिम में हिरात नदी है और वह प्रान्त भी हिरात कहलाता है जहाँ लम्बे समय तक जाटों ने अपना प्रभुत्व स्थापित रक्खा था। सर हेनरी इलियट ने 'डिस्ट्रीब्यूशन आफ दी रेसेज, नार्थ-वेस्टर्न प्राविंसेज आफ इण्डिया' में लिखा है—"गुजरात (पंजाब) के जाट चिनाव के किनारे के देश को किरात के नाम से पुकारते हैं क्योंकि उनमें दन्तकथा है कि वे ईरान की हिरात नदी के किनारे रहते थे।"

"सीस्तान नाम से पुकारे जानेवाले प्रदेश में शिविगोत्री जाट राज्य करते थे और वह प्रदेश उस समय शिविस्थान कहलाता था।"[२]

भारत के साथ इन लोगों का राजनैतिक-सामाजिक सभी प्रकार का सम्बन्ध था और जब कभी भी विदेशी आक्रमणकारियों से युद्ध करने की नौबत आती थी यह अपने सजातीय भाई 'सिन्धु' जाटों को स्मरण करते थे।

अफगानों के सम्बन्ध में कर्नल कनिंघम ने सिक्ख इतिहास में लिखा है—"जाट लोग एक ओर राजपूतों के साथ और दूसरी ओर अफगानों के साथ मिल गये हैं, किन्तु यह छोटी-छोटी जाट जाति की शाखा समुदाय पूर्व अंचल के राजपूत और पश्चिम अंचल के अफगान और बलूचों के नाम से अभिहित है।"

कनिंघम के मत से कुछ जाट तो अफगान व बलूच हो गये व कुछ जाट राजपूत हो गये।

बलूचिस्तान—१९४७ ई० के देश-विभाजन के पूर्व यह भारत के अन्तर्गत था। यह सिन्ध से सटा हुआ है। यहाँ हिंगलाग देवी का मन्दिर भी है। ब्रज के जाटों में हिंगलाग की देवी के गीत खूब गाये जाते हैं। सम्भव है शैव मत की भाँति इधर के जाटों पर शाक्तमत का भी प्रभाव पड़ा हो और उन्होंने हिंगलाज में देवी-पूजा के लिए मठ बनवाया हो। मौर्यकाल में कुलूत इस देश की राजधानी

---

२. 'राजपूत' संख्या ८, वर्ष २७, 'परसिया में चन्द्रवंश' शीर्षक लेख।

थी और चित्रवर्मा राज करता था। जाटों का बिलोच गोत्र भी है। बिलोच शब्द संभवतः 'विलोचन' से बना हो, जैसा कि अफगान को अपगान (अप=बुरा+गान=गन्धर्वों का देश) शब्द से बना मानते हैं।

चीन—तंगण और परतंगण दो प्रजातन्त्रों का चीन की सीमा पर महाभारत ग्रन्थ में वर्णन पाया जाता है, यही हमारे तांगर व प्रतिहार जाट हैं। अब भी टांग (तांग) पर्वतमाला वंगणों के नाम से मानसरोवर से आगे है। चीन के इतिहास में यूची जाति चीन की शासक जाति बतलायी गयी है।

श्री डिगाइन, जिन्होंने चीन का इतिहास लिखा है, जाटों का अन्य वर्णन करते हुए उन्हें बौद्ध धर्मावलम्बी बताते हैं।

श्री ग्राऊस महोदय 'मथुरा मेमायर्स' में नववीर (नोंहवारों) को खोतन के पास नोहझील के पास से वापस आये हुए बताते हैं। वे कहते हैं—"नोहवार भारतीय नवराष्ट्र के रहनेवाले थे और वे खोतान से ऊपर तक पहुंच गये। हूणों के आक्रमण से पूर्व भारत में वापस आ गये और अब नोहझील (मथुरा जिला) में रहते हैं।

श्री कनिंघम सिक्ख इतिहास में लिखते हैं—"जाट लोगों की प्रसिद्ध शाखाओं में चीन, मुराइच, चुल्ये शाखाएँ भी हैं।"

जाटों का एक चीन गोत्र भी है जिससे उनका चीन जाना सिद्ध होता है।

नेपाल—यह नयपाल से बना है। प्रारम्भ में यह देश भूट लोगों से भरा रहा होगा। मध्यकाल में यहाँ ठकुरी वंश का राज हुआ था। डा० भगवानलालजी इन्द्र ने यहाँ शिलालेखों के आधार पर कुछ अन्वेषण किया था। जिससे ठकुरी वंश की दो-तीन पीढ़ियों का पता चलता है। यह ठकुरी संभवतः अलीगढ़ जिले के ठकुरेले जाट हो सकते हैं जो कि वैशाली के ज्ञात (जाटों) से निकले हुए कहे जा सकते हैं। लिच्छिवियों का प्रजातन्त्र नष्ट हो जाने के पश्चात् ही इस वंश की नेपाल में एकतंत्र शासन प्रणाली पनपी है।

स्केण्डेनेविया—इतिहास लेखकों ने आनुमानिक तौर से बताया है कि स्केण्डेनेविया में ईसा से ५०० वर्ष पूर्व जाट लोगों ने प्रवेश किया था। इनके नेता का नाम ओडिन लिखा है।

शाकद्वीप के जिट लोगों में शस्त्र-पूजा की विधि भारत के राजपूतों के समान है। जिट वीरों ने आरेला और अथेन्स नगर में महा धूमधाम के साथ अपने अस्त्र-शस्त्रादिकों की पूजा की थी।

तुर्क व तुरक्ष देश—उत्तर भारत का वह देश जो हिन्दूकुश से लगाकर कास्पियन सागर व जग जार्टिस तोरिम नदी तक फैला हुआ है; तुर्किस्तान कहलाता है।

इस सारे प्रदेश में किसी समय जाट फैले हुए थे। आजकल तुर्क का अर्थ लोग मुसलमान समझते हैं। किन्तु वास्तव में तुर्क तुरुष्क की सन्तान आर्य थे और इस्लाम के आगमन पर तथा हिन्दूधर्म की संकुचितता से वे मुसलमान हो गये। साइरस ने पहिले के जाटों की सहायता से मीडिया को पराजित करके पारसी साम्राज्य की नींव डाली थी। पुनः उसने जाटों से भी युद्ध छेड़ दिया।

तुरुष्क देश में बसनेवाले जाटों ने बड़ी समृद्धि प्राप्त की थी। उन्होंने बड़े-बड़े नगर बनाये थे।

कर्नल टॉड इन जाटों के सम्बन्ध में लिखते हैं :—

"साइरिस के समय में ईसा से ६०० वर्ष पूर्व इस बड़ी गेटिक जाति के राजकीय प्रभाव की यदि हम परीक्षा करें तो यह बात हमारी समझ में आ जाएगी कि तैमूर की उन्नत दशा में इन जातियों का पराक्रम-ह्रास नहीं हुआ था यद्यपि २०वीं शताब्दी का समय व्यतीत हो चुका था।"

जर्मनी—जर्मनी को मैक्समूलर शार्मण्य देश कहता था। जर्मनी में जाटों का वह समूह गया जो परसिया के उत्तर में आबाद था अथवा जो जहून नदी के किनारे बसता था।

कर्नल टॉड लिखते हैं—"घोड़े की पूजा जर्मनी में सू, कट्टी, सुजोम्बी और जेटी (जाट) नाम की जातियों ने फैलायी है। जिस भाँति कि स्कन्धनाम में असि जाटों ने फैलाई।"

टसीटस लिखते हैं—"जर्मन लोग अश्व की आकृति बनी देखकर ही सिक्के का व्यवहार करते थे अन्यथा नहीं। यूरोप के असीजेटी लोग और भारत के अट्टी तक्षक जटी बुध को अपना पूर्वज मानकर पूजते थे।"

रूम—रूम की ओर जाट (गाथ) लोगों ने २५० ई० में बढ़ना प्रारम्भ किया था। ३७८ ई० में सम्राट् वेलिन्स ने रोमनों की एक बड़ी सेना के साथ जाटों पर आक्रमण कर दिया। घमासान युद्ध हुआ। रोमन भाग खड़े हुए। सम्राट् वेलिन्स के उत्तराधिकारी सम्राट् थियाण्डोसियस ने भी शासनभार हाथ में आते ही जाटों पर आक्रमण कर दिया किन्तु अन्त में उसे गाथों (जाटों) से सन्धि करनी पड़ी।

यूरोप में जाटों (गाथों) को ट्यूटानिक जाति में गिना गया है।

स्पेन, गाल—थियोडोसियस की पुत्री के साथ अटानल्फस जाट नेता के विवाह कर लेने पर उन्होंने स्पेन व गाल के प्रदेशों पर जाकर अधिकार कर लिया था। हूणों ने भी इस प्रान्त पर आक्रमण किया था किन्तु वे असफल लौटे थे।

जटलैण्ड—इस देश में स्कन्धनाभ के जाट गये थे और इनके सरदार इनके साथ यहाँ से अन्य देशों में पहुँचे थे। हेंगिस्ट व होरसा नाम के दो महान् वीर थे। यह जटलैण्ड में असिवंश से प्रसिद्ध हुए थे।

स्काटलैण्ड में होरसा व हेंगिस्ट के साथ अनेकों जाट समूहों ने सागर पार करके प्रवेश किया था। कहा जाता है कि यूरोप के सभी देशों में ट्रांसकोसियाना से जाट फैले हैं।

समोस द्वीप—यहाँ जो जाट गया था वह क्षौथी कहलाता था।

जनरल कनिंघम लिखते हैं—"Xathi of Dianosius of Sames were Jatii, or Jats, who are coupled with the Ariene and in the Xuthu of Ptolemy, who occupied the Karmanian desert on the frontier of Drangiana" (Cunnigham, Vol II, p. 55)

अर्थात्—"सामोस के डाईनीसीअस के क्षुतीजटी या जाट थे जो ऐरीनी से प्टोलमी के जूथी में मिल गये। जिन्होंने ड्रेनजिआना के सीमान्त के करमानिया की मरुभूमि पर अधिकार कर लिया।"

टर्की व सीरिया—टर्की व सीरिया की सीमा पर खानकेन स्थान है। उसमें जिप्सी नाम की जाति अब तक पायी जाती है जो कि जाट का रूपान्तर है। जिप्सी घुमक्कड़ हैं।

"Jats expelled to Khanikin on the Turkish Frontier and to the Frontier of Syria." (H.P., Vol II, p. 79)

मिश्र के एक हिस्से ईजिप्ट का नाम जिप्सी नाम के जाटों के बसने के कारण पड़ा है। ऐसा कहा जाता है कि खानकेन स्थान से ही ईजिप्ट में ये लोग पहुँचे थे।

ग्रीस—सिकन्दर के देश ग्रीस में भी जाटों ने अपना उपनिवेश स्थापित किया था। मोरिया के समीप ज्यूटी (Zouti) द्वीप के निवासी जाटों के उत्तराधिकारी हैं।

अरब—अरबी लोग जाटों को जट व जत नाम से पुकारते थे। वे जाटों को

भारतीय मानते हैं।

अरब में भारतीय जाट जहाज व नौकाओं द्वारा भी जाते थे। बौद्ध जातकों में जहाजों की बनावट, प्रकार व चाल का वर्णन है। अभिधानजातक में जाटों की चर्चा है।

जाट प्रजातंत्री थे। इस शासननीति को उन्होंने भारत में ही एक लम्बे समय तक निभाया हो, यह बात नहीं, किन्तु भारत से बाहर भी इसी नियम के अनुसार उन्होंने शासन किया। यज्ञ करना, प्रातः स्नान करना, दृढ़प्रतिज्ञ होना, अश्वारोही होने का शौक जहाँ जाटों ने अन्य देशों को सिखाया है वहाँ ही एक हाथ में तलवार और एक हाथ में खुरपा रखने की नीति भी सिखायी है। खुरपा रखने का तात्पर्य कृषि करना है।

रिसर्चस्कॉलर पं० विश्वनाथजी शास्त्री वेदव्याकरणतीर्थ लिखते हैं:—"एजियन (Aegean) सागर के निकट समोस (Samos) द्वीप के निवासी Xuthi जाट हैं।[3] करमान के निकट Zutti भी जाट हैं।[4] और दोनों एक ही देश के हैं। ग्रीस के मोरिया (Morea) के निकट जाट (Zoute) द्वीप के निवासी जाट हैं। आक्सस (Oxus) नदी के तट जाटाली (Zotale) प्रदेश के निवासी (Zanthii of Strabe) भी जाट हैं। अरब-निवासी जाट (Jatt) को (Zott) तथा (Gypsy) भी कहते थे। मिश्र का नाम इजिप्ट (Egypt) जाटों के जिप्सी (Gypsy) नाम से पड़ा है। टर्की तथा सिरिया की सीमा पर और खानेकिन स्थान में जिप्सी (जाट) अब भी बसते हैं। करमान तथा खुरसान में भी (जाट) बसते हैं। इनकी भाषा के ग्रन्थ भी वहाँ मिलते हैं।

डैन्यूब (Danube) नदी के तट तथा हेमुस (Haemus) पहाड़ के ऊपर के

---

३. The Jatts, Zotts, Zanthii, Getae Juts, Juses, Zuthi, Xuthi, Messagetae, Thassagetae, Gypsy, Zante, Gete, Jits ये सब नाम पाश्चात्य देशों में जाटों के हैं ['विश्व पर हिन्दुत्व का प्रभाव', पृष्ठ १६२ की पाद-टिप्पणी सं० २]

४. "Xuthi of Dionysins of Samos were Jatti or Jats, who are coupled with the Arieni and in the Zuthi of Ptolemy, who occupied the Karmanian desert on the frontier of Drongiank. (Cunningham, Vol. II, p. 53).

निवासी 'Getoe' आक्सस निकट के मेसजेट (Massagetae) और थेसूजेट (Thassagetae) के जाट (Gatae) हैं। जटलैण्ड के निवासी Juts (जूट) या Yuets or Getae (जाट) और इंगलैण्ड के जूट (Jutes) भी जाट हैं। (Tod's Rajasthan, p. 51, 52, 53)।

भैंसों का उपयोग योरप को जाटों ने ही सिखाया था।"[५]

जाटों के गोत्र

प्राचीनकाल में राजाओं का गोत्र वही माना जाता था जो उनके पुरोहित का होता था। यह ओझाजी का मत है। श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य क्षत्रियों के गोत्र व प्रवर वास्तव में उनके मूलपुरुषों से मानते हैं। इस मत का खण्डन ओझा-जी ने किया है।

"असमानार्षगोत्रजां" (याज्ञवलक्यस्मृति, आचाराध्याय, विवाह प्रकरण ३, श्लोक ५३)

विज्ञानेश्वर ने 'मिताक्षरा' टीका में लिखा है—"राजन्य (क्षत्रिय) व वैश्यों ने अपने गोत्र (ऋषिगोत्र) और प्रवरों का अभाव होने के कारण उनके गोत्र व प्रवर पुरोहितों के गोत्र व प्रवर समझने चाहिए।"

[राजन्यविशाप्रातिस्त्रिकगोत्राभावात् प्रवराभावस्तथापि पुरोहितगोत्रप्रवरौ वेदितव्यौ][१]

जाटों के मुख्य गोत्र ये हैं: "बर्हे, संगेरिया, खूटैल, लथौर, बाचारने, भाग्गर, सिसिनवार, सकरवार, थेवर, मैनी, गोधी, छोंकर, गाडर तथा रावत।"[२]

श्री निरंजन सिंह चौधरी कृत संकलित 'जाटगोत्रावली'[३] दी जाती है:—

---

५. 'विश्व पर हिन्दुत्व का प्रभाव', पृष्ठ १६२-१६३, [संवत् १९९७ वि० में अखिल भारतीय हिन्दू महासभा नं० २, चर्चलेन, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित]।

१. ओझाजीकृत 'राजपूताने का इतिहास', जि० १, परिशिष्ट, पृष्ठ ३०७ से ३५५ तक।

२. श्री प्रभुदयाल मीतलकृत 'ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास', प्रथम भाग, पृष्ठ ७२ [सन् १९६६ ई० में राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण]।

३. जाट हितकारी प्रकाशन, गोपीनाथ बाजार, बृन्दावन, प्रथम संस्करण, पृष्ठ १ से १० तक। तुलना करो 'क्षत्रियों का इतिहास' (भूमिका तथा जाट वंशावली, प्रथम भाग, पृष्ठ २४४ से २४८ तक।

जाट-गोत्रावली

जाट क्षत्रियों के बहुसंख्यक गोत्रों में से एक सहस्र गोत्रों से अधिक की नामावली—

[अकारादि क्रमानुसार]

अ-आ—१. अका, २. आंचरा, ३. अजुरिया, ४. अजमेदिया, ५. अजरा, ६. अतल, ७. अधरी, ८. आंध्र, ९. अनजिया, १० अनजलन, ११. अनलक, १२. अंतल, १३. अन्धक, १४. अमियां, १५. आचतवाल, १६. अरक, १७. अरकौंची, १८. अरोर, १९. अलूने, २०. अलवल, २१. अलावलपुर, २२. अलामत, २३. असरोध, २४. अहरवंशी, २५. अहलावत, २६. अहुलानियां, २७. आकड़,

इ-ई—१. इगिया, २. इनतर, ३. इन्दौलिया,

उ-ऊ ऋ-ॠ—१. ऊंटवाल, २. ऊवरवाल, ३. उरिया, ४. ऋषिवंश, ५. उप्पल,

ए-ऐ—१. ऐचरा

ओ-औ अं-अः—१. ओकम, २. ओड़ा, ३. औंध, ४. ओफला, ५. ओरा, ६. औरे, ७. ओला, ८. ओहर, ९. औलक,

क—१. कोइल २. कंकरील, ३. ककेरौल, ४. काकरान, ५. ककड़ा, ६. कंखड़ी, ७. कगार, ८. कंगरी, ९. कंगोरिया, १०. कंचू, ११. कंचेरिया, १२. कचौड़िया. १३. कचीर, १४. किचार, १५. कचमुनियां, १६. कछवाहा, १७. कुजल, १८. काजला, १९. कटारिय, २०. कटेवा, २१, कोठर, २२. कठेरिया, २३. कोठारी, २४. कंड़ी, २५. कुड़वासरा, २६. कूंडू, २७. कोतवाल, २८. कथोरिया, २९. कुंथल, ३०. कदान, ३१. कंदवाल, ३२. कादियान, ३३. किदारिय, (किदर), ३४. कुन्दू, ३५. कादल,

३६. केदवाल, ३७. कनखड़ी, ३८. कुंथल, ३९. कन्हैया, ४०. किना, ४१. कपेड़, ४२. कवीरी, ४३ कवाला, ४४. क्योलरिया, ४५. करीग, ४६. करी, ४७. करील, ४८. करमी, ४९. करमोरा, ५०. करमीर, ५१. कोलीप, ५२. कुरान, ५३. करबारा, ५४. कोरवाला, ५५. कोर, ५६. कारवाल, ५७. कुरैलिया, ५८. कौरव, ५९. काला, ६०. काली, ६१. कलाहार, ६२. कालीरमता, ६३. कलवाना, ६४. कालेर, ६५. कुल्ल्या, ६६. कालीरावते, ६७. कलसमान, ६८. कालेरावत, ६९. कालीर, ७०. कलकल, ७१. कालीधामन, ७२. कुलड़या, ७३. कुलवारिया, ७४. किस्तवार, ७५. काशीवत, ७६. कुशान, कुशन, कुशवान, ७७. कुशमान, ७८. कश्यप, ७९. कासनियां, ८० कसवां, ८१. कहौनियां, ८२. कहरल, ८३. कोहाट, ८४. कुहाड़िया, ८५. कंग।

ख—खोखर, २. खर्गी, ३. खाग, ४. खंगास, ५. खचरी, ६. खीचर, ७. खजुरिया, ८. खोजा, ९. खूंटैल, १०. खोटी, ११. खटकर, १२. खट्टे, १३. खांडा, १४. खोड़ीवाल, १५. खड़वड़, १६. खडौल, १७. खड़ेरिया, १८. खड़व, १९. खोडिया, २०. खद्दा, २१. खीदड़, २२. खुनखुनियां, २३. खवीविया, २४. खुवे, २५ खोबड़े, २६. खुवार, २७. खरीवाल, २८. खोरिया, २९. खरो, ३०. खेरवा, ३१. खरवास, ३२. खरीटा, ३३. खारवेल, ३४. खालिये, ३५. खोखिया, ३६. खटड़े।

ग—१—गाक, २. गंग, ३. गूगड़, ४. गजरा, ५. गजरानियां, ६. गूजर, ७. गेटा, ८. गठवाले, ९. गठैये, १०. गड़ीला, ११. गड़ीर, १२. गंडू, १३. गंजस, १४. गड़वाला, १५. गाढौलिया, १६. गढ़वाल, १७. गोताला, १८. गौतम, १९. गथंवारा, २०. गदर, २१. गंदावल, २२. गोदारा, २३. गोही, २४. गौहल, २५. गोंद, २६. गुदारा, २७. गंवार, २८. गोधी, २९. गोधे, ३० गंधारी, ३१. गेना, ३२. गुपते, ३३. गोपेराव, गावर, ३४. गांवडया, ३५. गूभर, ३६. गोर, ३७. गोरया, ३८. गोरेह, ३९. गुरदिया, ४०. गुरहर, ४१. गुरज, ४२. गुरू, ४३. गुरेलिया ४४. गोरा, ४५. गेरवाल, ४६. गुर, ४७. गिल्लू, ४८. गलाती, ४९. गाला, ५०. गुल, ५१. गिल्ल, ५२. गोलिया, ५३. गीला, ५४. गोलाड़ा, ५५. गलटे ५६. गौलिया, ५७. गहरवाल, ५८. गहलोर,

५९. गोहार, ६०. गहलोट, ६१. गेहमौत, ६२. गहलावत, ६३. गाहलदन, ६४. गोहित, ६५. गहलौत, ६६. गंडास।

घ—ङ.—१. घैंआर, २. घटवाल, ३. घासिल, ४. घोसलिया, ५. घुरंका, ६. घरूका।

च—१, चौकर, २. चुकरानी, ३. चिकारा, ४. चिकटी, ५. चोकड़ा, ६. चंग, ७. चांगल, ८. चौजाड़िया, ९. चुत्तन, १०. चितारिया, ११. चितरावड़ा, १२. चुथन, १३. चन्दैल, १४. चन्द्रवंशी, १५. चेंदी, १६. चंदवाल, १७. चलकर, १८. चधारी, १९. चौधरी, २०. चनकर, २१. चौपड़ा, २२. चौवा, २३. चव्वरवाल, २४. चामर, २५. चोयल, २६. चुरैल, २७. चरानी, २८. चरका, २९. चरावी, ३०. चार, ३१. चीलर, ३२. चूल्हा, ३३. चौला, ३४. चलावरिया, ३५. चुसिया, ३६. चौहान, ३७. चाहर, ३८. चाहिल, ३९. चहारग, ४०. चाहड़, ४१. चीमा, ४२. चट्ठा।

छ—१ छोंकर, २. छागा, ३. छापरा, ४. छीतर, ५. छीलवाल।

ज—१. जकारी, २. जरवाह, ३. जाखर, ४. जगलान, ५. जगा, ६. जगरी, ७. जांगर, ८. जंगी, ९. जगौआ, १० जग्गल, ११. जाधू, १२. जंघाले, १३. जूंजवाडी, १४. जूंजाड़ा, १५. जाजिन्दा, १६. जंजारिया, १७. जंजार, १८. जिज्जा, १९, जटराना, २०. जटाना, २१. लाडौलिया, २२. जाडीन, २३. जुडावा, २४. जाडी, २५. जतरानी, २६. जतरान, २७. जतराम, २८. जत्, २९. जन्ती, ३०. जातू, ३१, जतारनी, ३२. जत्री, ३३. जाथू, ३४. जदवंशी, ३५. जद, ३६ जादू, ३७. जूनज, ३८. जनक, ३९. जनार, ४०. जनवार, ४१. जनाल, ४२. जनमेदा, ४३. जवाली, ४४. जोविलिया, ४५. जवाह, ४६. जमोलिया, ४७. जियोला, ४८. जरियान, ४९. जरालिया, ५०. जूरा, ५१. जूरैल, ५२. जालो, ५३ जेसवार, ५४ जही, ५५. जोहिल।

झ—ञ—१. झकार, २. झाजरा, ३. झाझड़ा, ४. झटियानी, ५. झोरा, ६. झूरिया, ७. झाला, ८. झल्ली।

ट—१. टोकरे, २. टोकस, ३. टाड़ल।

ठ—१. ठकुरेले, २. ठकराम, ३. ठाकुर, ४. ठाकन, ५. ठग, ६. ठेनेवाल,

७. ठेंनुआं, ८. ठीनवाह।

ड—१. डकिया, २. डकेरे, डूक्या, ४. डोंगर, ५. डगोर, ६. डगिया, डौंगरे, ८. डागुर, ९. डोगीवाल, १०. डांगी, ११. डूंगावाला १२. डगरे, १३. डोड़वाला, १४. डूड़ी. १५. डीदील, १६. डारवाल, १७. डवगर, १८. डबदरिया, १९. डबगाह, २०. डबास, २१. डसनिया, २२ डाहेलिया।

ढ—ण—१. ढूकी, २. ढकापूर, ३. ढकवाल, ४. ढाकरे, ५. ढाकां, ६. ढक्करवाल, ७. ढीटसे, ८. ढिटाले, ९. ढढेरी, १०. ढोलिया, ११. ढिल्लू, १२. ढलान, १३. ढल्लूं, १४. ढसानियां, १५. ढेक।

त—१. तेओट, २. तोकस, ३. ताखर, ४. तांगर, ५. तागू, ६. तगार, ७. तंग, ८. तजार, ९. तैंजवार, १०. तातरान, ११. तीतरवाल, १२. तनकोर, १३. तानक, १४. तेवतिया, १५. तोंवर, १६. तोबड़ा, १७. तोमर, १८. तमार, १९. तोमी, २०. तोरत, २१. तूर, २२. तोरन, २३. तलद, २४. ताला, २५. तुसिपर।

थ—१. थेड़कर, २. थानी, ३. थेनवार, ४. थेवान, ५. थोरी, ६. थलौर

द—१. दीक्षित, २. देगड़ा, ३. दांगी, ४. दडिये, ५. दूथ, ६. दूंदवाल, ७. दादरवाल, ८. दूधवाल, ९. दनकी, १०. दनाल, ११. देनविया, १२. दून, १३. दुन्दा, १४. दून्दी, १५. दावर, १६. दोवर, १७. दवास, १८. दीवानी, १९. देवबन्दा, २०. दवाल, २१. देवन्दा, २२. देवाछ, २३. दैंया, २४. दयाल, २५. दारावार, २६. दार, २७. दराल, १८. दुर्वासा, २९. दर्व ३०. दलजी, ३१ देलाई, ३२. दलफोड, ३३. दलाल, ३४. दलट, ३५. दलड़, ३६. दुसाध, ३७. दसपुरिया, ३८. देसवाली, ३९. दिसवार, ४०. देसवार, ४१. दशाह, ४२. दाहन, ४३. दहला, ४४. दहिमा, ४५. दहुना, ४६. देहिया, ४७. देहत, ४८. दुहला, ४९. दाहिर, ५०. दूहन, ५१. देवल।

ध—१. धाकर, २. धांगड़ा, ३. धींगर, ४. धीवां, ५. धौचक, ६. धाड़ीवाल, ७. धतेरिया, ८. धारण, ९. धनोई, १०. धनकड़, ११. धानुक, १२. धनवार, १३. धन्दे, १४. धौंधा, १५. धनोये, १६. धनकार, १७. धेवतवार, १८. धमान, १९. धायल, २०. धूरिया, २१. धरतवाल,

२२. धारना, २३. धौल्या, २४ धनोहा।

न—१. नागेरिया, २ नागरी, ३. नाग, ४. नजीली, ५. नजरी, ६. नजोर, ७. नीटवाल, ८. निठारवाल, ९. नीतड, १०. नत्त, ११. नदल, १२. नदौरी, १३. नौदिर, १४. नधान, १५. नवा, १६. नैंन, १७. नैंनदल, १८. ननौलिया, १९. नौनखा, २० नौनदिया, २१. नूनियाँ, २२. नामत, २३. न्यौवोरे, २४. नरवल, २५ नारा, २६ नारो, २७. नरवार, २८. नैंरिहा, २९. नील, ३०. नसियर, ३१ नासना, ३२. नेहरा, ३३. नोहीवाल, ३४. नोहर, ३५. नाहिर, ३६. नोहवार, ३७. नाहरवाल, ३८. नहरे, ३९. नूहनियाँ, ४०. नागर, ४१. नीखड़, ४२. नार्देय, ४३ नोर्देय।

प—१. पुआर, २. पोखवत, ३. पंगल, ४. पघाल, ५. पचादी, ६. पचहरे, ७. पूछले, ८. पंजाबी, पाञ्चाली, ९. पाण्डव, १०. पण्डय, ११. पाण्डल, १२. पांडर, १३. पंडौरिया, १४. पंडहारी, १५. पुढ़ीर, १६. पड़याना, १७. पोते, १८. पोतलिया, १९. पधान, २०. पनकर, २१. पौनियां, २२. पुनरिया, २३. पनही, २४. पनवार, २५. पनहार, २६. पीपालोदा, २७. पंवार, २८. पावरिया २९. पौवन्या, ३०. पोमर, ३१. पायेल, ३२. परिहार, ३३. पोदोथ, ३४. पुरूवार पुरु, ३५. परसाने, ३६. पौरुषवाल, ३७. पल्लव, ३८. पलान, ३९. पिलमियां, ४०. पलावत, ४१. पिलीहिया, ४२. पीलानियां, ४३. पुलक, ४४. पहाल, ४५. पहुना, ४६. पैंसल।

फ—१. फोका, २. फगेड़िया, ३. फौगाट, ४. फोगत, ५. फौजदार, ६. फनधान, ७. फर्रोला, ८. फोर, ९. फुलफखर, १० फसवाल, ११. फूसे, १२ फौंहार, १३. फारैन, १४. फंदेर।

ब—व—१. बकैया, २. बराबर, ३. बागरा, ४. बगरोइया, ५. बंगरबार, ६. बांगाभार, ७. बंग, ८. बूगालिया, ९. बगड़ा, १०. बघौनिया, ११. बचिल, १२. बोचल्या, १३. बछड़ा, १४. बछासई १५. बाछल, १६. बजरी, १७. बाजा, १८. बाजरौला, १९. बीजानियां, २०. विजयरणीय, २१. बहिया, २२. बाडह, २३. बांहबल, २४ बड़गौती, २५. विडंग, २६. बड़ानिये, २७. बाढ़िया, २८. बाण, २९. बतियान,

३०. बातरे, ३१. वत्स, ३२. वेदा, ३३. बदवर, ३४. बोदियां, ३५. बूधर, ३६. बुधवार, ३७. वधान, ३८. वधावा, ३९. बधाला, ४०. बधेत, ४१. वधौतिया, ४२. बैनीबाल, ४३. बैन्स, ४४. बनजार, ४५. बनती, ४६. बनतरी, ४७. बाना, ५८. बानर, ४९. बीलवान, ५०. बावन, ५१. बूबकिया, ५२. बोबासा, ५३. बाबल, ५४. बमरौलिया, ५५. बारी, ५६. बरसिया, ५७. बड़गूजर, ५८. बरक, ५९. बरम, ६०. बरनवार, ६१. बरगा, ६२ बरगाया, ६३. बरगो, ६४. बरोजवार, ६५. बरौदा, ६६. बारसिर, ६७. बसोली, ६८. बूरे, ६९. बुर्रक, ७०. बौराण, ७१. बरे, ७२. बरसरा, ७३. बिराला, ७४. बेरवाल, ७५. बराले, ७६. बेरड़ा, ७७. बोरा, ७८. ब्रह्मा, ७९. बोला, ८०. बालवर, ८१. बाल, ८२. बलारिया, ८६. बलोले, ८४. बालियान, ८५. बिलोदा, ८६. बुलियों, ८७. बैसोरा, ८८. बसौली, ८९. बिसैते, ९०. बिसाती, ९१. बिसला, ९२. बैस, ९३. बीहल, ९४. बौहरा, ९५. बीरिया, ९६. बारस, ९७. बांसमान, ९८ बाजवां, ९९. बदूहा, १००. बांकुरे, १०१. बीसले, १०२. बांदर।

भ—१. भुइयां, २. भाकर, ३. भूकर, ४. भगेल, ५. भांगीवाल, ६. भगोतर, ७. भगत, ८. भगौर, ९. भीचड़, १०. भाटी, ११. भट, १२. भट्टी, १३. भोटा, १४. भिटवाना, १५. भिटवार, १६. भट्टल, १७. भेड़ी, १८. भड़कासना, १९. भड़ालानी, २०. भड़िये, २१. भदवरिया, २२. भादा, २३. भादू, २४. भैनवाल, २५. भानमूं, २६. भूपरान, २७. भूमवा, २८. भामूं, २९. भार, ३०. भरवार, ३१. भारद्वाज, ३२. भरगोते, ३३. भूरी, ३४. भरकोलिया, ३५. भ्रंगर, ३६. भूरिया, ३७. भरे, ३८. भूलेमुलतान, ३९. भूलर, ४०. भिलाये, ४१. भालोटिया, ४२. भानी, ४३. भूसनियां, ४४. भंदेछे, ४५. भंगू।

म—१. मौखरी, २. मांगा, ३. मांगदौड़ा, ४. मोगा, ५. मांघट, ६. मैंची, ७. माछर, ८. मटुक, ९. मटकाने, १०. मीठे, ११. मंडेर, १२. मांडिया, १३. मंडे, १४. मूंडी, १५. मुंडलान, १६. मुहतोर, १७. मूंड, १८. मतियाना, १९. मतसारा, २०. मथुरिया, २१. मदैना, २२. मन्दोवारिया, २३. मैनी, २४. मुनढ़न, २५. मान, २६. मुण्डलाना,

२७. मैनार्य, २८. मियाला, २९. म्या, ३०. मोरी, ३१. मारे, ३२. मोर, ३३. मैरिहा, ३४. मौर्य, ३५. मिरदा, ३६. मालिक, ३७. मलेन, ३८. मिलकी, ३९. मलिक, ४०. मल्ली, ४१. मलावड़सरा, ४२. मील, ४३. मालिया, ४४. मलहान, ४५. मलवीय, ४६. माहुर, ४७. मोहजीत, ४८. मेहार, ४९. मुहरा, ५०. महोवर, ५१. मोहिल, ५२. मौहाल, ५३. महला, ५४. महेरिया।

य—१. यजानियां, २. यटेसर।

र—१. रैंकवार, २. रिकवम, ३. रूखती, ४. रांगड़, ५. रंगी, ६. राजौरिया, ७. रगीला, ८. रोज, ९. राठौर, १०. राठी, ११. रणवा, १२. राड़, १३. राढ़, १४. रौंडला, १५. रणधीर, १६. रतवाल, १७. रूतील, १८. रोतवार, १९. रथी, २०. रूधल, २१. राणा, २२. रनुआ, २३. रनदिल, २४. रेपसवाल, २५. रेवाड़, २६. रावस, २७. रैंबवार, २८. रावत, २९. रवार, ३०. राव, ३१. रोरा, ३२. रोरिया, ३३. रहौर, ३४. रहवान, ३५. राह, ३६. रेहर, ३७. रांभा, ३८. राहल।

ल—१. लोअत, २. लोअच, ३. लवाच, ४. लऊर, ५. लकड़म, ६. लकड़े, ७. लाकड़े, ८. लोका, ९. लाखीलान, १०. लंगुरिया, ११. लोचन, १२. लोचर, १३. लटवाल, १४. लिट्ट, १५. लठमार, १६. लठौर, १७. लाडुह, १८. लाथीर, १९. लधौरिया, २०. लोनकास, २१. लावा, २२. लवापच, २३. लामीना, २४. लम्बा, २५. लम्बोरिया, २६. लील, २७. लूलाने, २८. लीलवत, २९. लूलाड़ा, ३०. लीला, ३१. लोल, ३२. लाहिरी, ३३. लोहायन, ३४. लाहन, ३५. लाहौरिया, ३६. लाहौर, ३७. लाहर, ३८. लहैल, ३९. लोहमरोर, ४०. लुहाना।

श ष स—१. सोऊ, २. सिउहग, ३. सिकरवाल, ४. सकेल, ५. संकोरिलो, ६. शुक्र, ७. संखार, ८. शक, ९. सैंगल, १०. सेंगरिया, ११. सगवान, १२. सोगरिया, १३. सगसैल, १४. सगरी, १५. सींगला, १६. सांगवान, १७. सींगड़, १८. संग, १९. सांघर, २०. सिजवान, २१. सूडा, २२. सौडा, २३. सतोरिया, २४. सूतला, २५. सितरवाल, २६. सात्वत, २७. संथ, २८. सूद, २९. सिद्धू, ३०. सिन्धु, ३१. सिद्ध, ३२. सिनसिनवाल, ३३. सिनमार, ३४. सनाद, ३५. सानी, ३६. सैनी, सैन, ३७. सेनकिया, ३८. सिपरोटा, ३९. सेपट, ४०. शैवा, ४१. संवा, ४२. सिवायच, ४३. सोलंकी, ४४. सेवदा, ४५. सीवर, ४६. शिवरान, ४७. शिवराज, ४८. सांमरिया, ४९. समेंदा, ५०. सोमावल, ५१. सुमरा, ५२. सोमरा, ५३. सामोता, ५४. सांभरवाल, ५५. सिपोरोत, ५६. सियोरान, ५७. स्याग, ५८. श्याम, ५९. सरामत, ६०. सरावत, ६१. सरोही,

६२. सुराहे, ६३. सिरसवार, ६४. सारन, ६५. सरदवत, ६६. सरधी, ६७. सिरे, ६८. सुरदत्त, ६९. सुरयारा, ७०. सैरावत, ७१. सरावगी, ७२. सरसूंद्या, ७३. सरकलान, ७४. सराव, ७५. सोराण, ७६. शूर, ७७. श्रीवाघ, ७८. सलाकलाइन, ७९. सिखखान, ८०. सोलंखी, ८१. सौलानिया, ८२. सिलोचन, ८३. सेल, ८४. सेसवान, ८५. सीसमाल, ८६. शेसमो, ८७. सोहरों, ८८. सहौनिया, ८९. सहोवास, ९०. सोहरौत, ९१. सहारन, ९२. सोहू, ९३. सहोते, ९४. सहगल, ९५. साहसी, ९६. सोही, ९७. समराव, ९८. सींहवाग।

ह—१. हांगा, २. हांडौरिया, ३. हड़ाच, ४. हिड़ोल, ५. हुद्दा, ६. हुदा, ७. हूदी, ८. हीनया, ९. हौमल, १०. हरीकर, ११. हरचतवाल, १२. हरी, १३. हरीवार, १४. हरनवाल, १५. हेला, १६. हुल्का, १७. हाला, १८. हिण्डौल।

प्रश्न—वंशों (गोत्रों) के उपराङ्कित नाम प्रायः निरर्थक से प्रतीक होते हैं, क्या यह बात ठीक नहीं है?

उत्तर—भारत देश के पतन के साथ-साथ उसमें प्रचलित बहुत से शब्दों में अपभ्रंश हो गया है और बिगड़ी हुई परिस्थिति में ऐसा हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उदाहरणार्थ सन अथवा मूंज या ऐसी ही किसी रेशेदार चीज से बनकर पशुओं अथवा गठरी आदि को बाँधने के लिए जो डोरी बनाई जाती है उसको पघैया कहते हैं, साधारणतया पघैया शब्द निरर्थक सा प्रतीत होता है परन्तु पघैया शब्द संस्कृत भाषा के प्रग्घ शब्द का अपभ्रंश रूप है इसी प्रकार ग्रामान्तरीय का गौतरया शब्द बन गया है। उपराङ्कित वंशों के नामों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। इन नामों से वास्तविक शब्द की खोज की जा सकती है और उस खोज से सच्चे इतिहास का भी पता लग सकता है, साथ ही यह अवगत हो सकता है कि इन गोत्रों में कौन-कौन गोत्र ऐसे हैं जिनकी कोई शाखा पीछे राजपूतों में जा मिली और कौन गोत्र ऐसे हैं जो राजपूतों में से जाटों में आ मिले। अतएव उपर्युक्त नाम निरर्थक नहीं हैं।

उपर्युक्त वंशों में से अनेक गोत्र तो ऐसे हैं जो महाभारत और उससे भी पूर्व उसी रूप में बराबर अब तक चले आते हैं। वंशों का अपना इतिहास है। समय आ गया है कि इन सभी गोत्रों के ऊपर पूर्णरूपेण प्रकाश डाला जाएगा।

□□□

U-807

२५. शिवलिंग-पर्यालोचन	००.५०
२६. अष्टादशपुराण-परिशीलन	१.००
२७. नीर-क्षीर-विवेक	(अप्राप्य)
२८. वैदिक सिद्धान्त मार्तण्ड	१.००
२९. आर्यों का आदि जन्म-स्थान निर्णय	००.४०
३०. श्रीमद्भागवत महापुराण में व्याकरण की अशुद्धियाँ	५.००
३१. इन्द्र-अहल्या उपाख्यान : वास्तविक स्वरूप और महर्षि दयानन्द	१.००
३२. सत्य साईं का कच्चा चिट्ठा	६.००
३३. क्या अथर्ववेद में मृतक श्राद्ध है?	(अप्राप्य)
३४. मार्कण्डेय पुराण की आलोचना	१.००
३५. नारद पुराण का आलोचनात्मक अध्ययन	१.००
३६. 'आचार्य महीधर और स्वामी दयानन्द का माध्यन्दिन भाष्य' का आलोचनात्मक अध्ययन	२.५०
३७. हनुमान् का वास्तविक स्वरूप	५.००
३८. अद्भुत वैज्ञानिक जादू कौशल	१०.००
३९. मनोवैज्ञानिक जादूविद्या का चमत्कार	५.००
४०. गणित के जादू	(अप्राप्य)
४१. लड़खड़ाते जीवन (उपन्यास)	००.५०
४२. मेरी आठ रोचक कहानियाँ	००.७५
४३. राठौड़ कुलोत्पत्ति मीमांसा	५.००
४४. कुशवाह क्षत्रियोत्पत्ति मीमांसा (कछवाह खंड)	५.००
४५. कुशवाहा क्षत्रियोत्पत्ति मीमांसा	५०.००
४६. क्या अहीर, गुजर और जाट विदेशी हैं?	१०.००

प्राप्ति स्थान—डॉ० शिवपूजन सिंह कुशवाह शास्त्री, एम० ए०
वेद मन्दिर (गीता आश्रम)
अशोक सिनेमा के सामने,
ज्वालापुर-२४९४०७
जिला सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)

कुशवाहजी--संक्षिप्त परिचय

पुस्तक क्रमांक.....

जन्मतिथि—१ जून १९२४ ई०

जन्मस्थान—ग्राम-पत्रालय=गौरा, वाया=छपरा, जनपद=सारण, (बिहार)

शिक्षा—आगरा विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम० ए०, साहित्यलंकार हिन्दी विद्यापीठ, देवघर तथा साहित्यविशारद परीक्षाएँ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से उत्तीर्ण कीं।

मई, १९८४ में सेवा-निवृत होते-होते सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से साहित्यशास्त्री।

सेवा—१९४४ से ३९ वर्ष तक ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन लि० की शाखा कूपर ऐलन में तथा टैफको (केन्द्रीय सरकार का संस्थान) में नौकरी की।

साहित्य सेवा—नौकरी करते हुए जिस प्रकार आपने परीक्षाएँ पास की उसी प्रकार वैदिक धर्म की सेवा लेखों व व्याख्यानों द्वारा करते रहे। अब तक लगभग ७५० लेख समाचारपत्रों में प्रकाशित हो चुके हैं। ४६ पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। एक पुस्तक उत्तर प्रदेश सरकार ने जब्त कर ली थी।

सम्प्रति आप वेद मन्दिर [गीता-आश्रम] ज्वालापुर-२४९४०७, जनपद सहारनपुर, (उत्तर प्रदेश) में निवास करके वेदानुसन्धान का कार्य तथा व्याख्यानों द्वारा वैदिक धर्म की सेवा कर रहे हैं।

विशिष्ट कला में दक्ष—आप जादूविद्या में दक्ष हैं और उसका प्रदर्शन करके जनता को चकित कर देते हैं। उनका कथन है कि जादू एक ललित कला है, कोई मन्त्र-तन्त्र नहीं वरन् हाथ की चालाकी है।